मुकम्मल व मुदल्लल

मसाइले इमामत

कुरआन व सुन्नत की रौशनी में

हज़रात मुफ़्तियाने किराम दारूलउलूम देवबंद की तस्दीक़ व ताईद के साथ

मौलाना क़ारी मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी

(मुदर्रिस दारूलउलूम देवबंद)

कुरआन व सुन्नत की रौशनी में

हज़रत मुफ़्तियाने किराम दारुलउलूम देवबंद की तस्दीक व ताईद
के साथ

मुअल्लिफ़

मौलाना कारी मुहम्मद रफ़अत कासमी
(मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद)

लिप्यान्तर:
मो० मोकर्रम ज़हीर

नाशिर

अन्जुम बुक डिपो

मटिया महल, जामा मस्जिद (दिल्ली)

किताब का नामः.. मुकम्मल व मुदल्लल मसाइले इमामत

मुअल्लिफ़ः........ मौलाना क़ारी मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी

लिप्यान्तरः........ मो० मोकर्रम ज़हीर

ज़ेरे निगरानीः..... शकील अन्जुम देहलवी

तादादः........... 1100

Masaile Imamat

By:Maulana Qari Md. Rafat Qasami

Published by

Anjum Book Depot

Matia Mahal, Jama Masjid, Delhi - 6

फ़ेहरिस्ते मज़ामीन मसाइले इमामत

उन्वानात सफ़्हात

इंतिसाब

बंदा अपनी इस बेमाया ख़िदमत को

इमामे रब्बानी हुज्जतुल इस्लाम हज़रत मौलाना मुहम्मद क़ासिम नानौतवी (रह.)

बानी दारुलउलूम देवबंद

के नाम मन्सूब करता है

जिनके फ़ैज़ाने उलूमे दीनिया से एक आलम फ़ैज़याब हो रहा है और इंशा अल्लाह ता क़यामत होता रहेगा।

दुआए मुस्तजाब

हज़रत मौलाना मुफ़्ती महमूद हसन साहब दामत बरकातुहुम

मुफ्तीए आज़म दारुलउलूम देवबंद

باسمه سبحانه و تعالى
حامدا و مصليا

बन्दए नाकारा भी दुआ करता है कि हक़ तआला मुअल्लिफ़ सल्लमहू की ख़िदमत व मेहनत को क़बूल फ़रमाए और क़ारिईन को नफ़ा बख़शे। आमीन

अहक़र महमूद ग़ुफ़िरलहू

17 शौवालुल मुकर्रम 1408 हिजरी यौमे जुमा

□□□

राए गिरामी

हज़रत मौलाना मुफ़्ती निज़ामुद्दीन साहब आज़मी मद्दाज़िल्लहू
मुफ्तीए दारुलउलूम देवबंद

باسمه سبحانه

الحمد لوليه والصلوة على اهله وعلى آله واصحابه اجمعين و بعد

रिसालए पेशे नज़र

मुअल्लिफ़ा मौलाना क़ारी रफ़अ़त साहब सल्लमहू

मौसूफ़ के दीगर रसाइल की तरह ये भी निहायत मुस्तनद हवालों के साथ तैयार हुआ है और इमामत के अक्सर ज़रूरी मसाइल पर मुश्तमल है।

रिसाला की खुसूसियत ये है कि कोई मस्अ़ला बग़ैर मुस्तनद हवाला के नहीं दिया गया है। हवाला लेने में बहुत एहतियात की गई है मोतमद किताबों से बिऐनिही एबारतें ली गईं हैं, बस इससे इस रिसाला की नाफ़ईयत बढ़ गई है और अ़वाम व ख़ास हर तबक़ा के अइम्मए मसाजिद के लिए बेहद मुफ़ीद मजमूआ़ तैयार हो गया है।

दुआ़ है कि अल्लाह तआ़ला क़बूल फ़रमाए और मौसूफ़ को नाफ़ेअ़ रसाइल लिखने और शाए करने की तौफ़ीक़ हो। आमीन!

फ़क़त
अलअ़ब्द निज़ामुद्दीन आज़मी
मुफ़्ती दारुलउलूम देवबंद
24—8—88 हिजरी

□□□

तक़रीज़

हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद ज़फ़ीरुद्दीन साहब मद्दाज़िल्लहू
मुफ़्ती दारुलउलूम देवबंद

بسم اللہ الرحمٰن الرحیم

الحمد لله و كفى وسلام علے عباده الذين اصطفے

नमाज़ एक ऐसी इबादत है जो हर आक़िल बालिग़ मुसलमान पर फ़र्ज़ है और दिन रात के पाँच वक़्तों में मस्जिद के अन्दर जमाअ़त के साथ जिसके अदा करने का हुक्म दिया गया है। अलहमदुलिल्लाह! मुसलमान इसको एहतिमाम से बजा लाते हैं। चुनांचे हमारी तमाम मस्जिदें आबाद नज़र आती हैं।

इमामे मस्जिद या नमाज़ का इमाम अपनी जगह एक अहम ज़िम्मादारी का मालिक होता है। अहदे नबवी में ये मनसब ख़ुद सरवरे काएनात सल्लल्लाहू अलैहि वसल्लम के सिपुर्द था। आप नमाज़ों की इमामत ख़ुद ही फ़रमाते रहे, जब आप बीमार हुए तो इस मनसबे आज़म पर आपने अपने यारेग़ार हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु, को फ़ाइज़ किया। इसी तरह इस मनसब पर यके बाद दीगरे ख़ुलफ़ाए राशिदीन फ़ाइज़ होते रहे।

यही वजह है कि इस्लाम ने इमामत के मनसब पर जलीलुलक़द्र शख़्सियत को फ़ाइज़ करने की ताकीद की है मगर अफ़सोस है कि

आज सबसे ज़्यादा यही मनसब पस्त हो कर रह गया है, घटिया से घटिया शख़्स का इस मनसब के लिए इंतिख़ाब होता है और ख़ास व आ़म इसी को पसंद करते हैं।

अल्लाह तआ़ला जज़ाए ख़ैर अता करे क़ारी मुहम्मद रफ़अ़त उस्ताद दारुलउलूम देवबंद को उन्होंने इस मनसब की अहमियत को पेशे नज़र रख कर इमामत से मुतअ़ल्लिक़ उन तमाम मसाइल को यकजा कर दिया है जो फ़तावा की किताबों में बिखरे हुए थे। क़ाबिले ज़िक्र कोई मस्अ़ला ऐसा नहीं है जो इस किताब में न आ गया हो।

ज़ेरे नज़र "मसाइले इमामत" नामी किताब हम मुसलमानों के लिए एक अज़ीम तोहफ़ा है, जिससे हर नमाज़ी मुसलमान बआसानी इस्तिफ़ादा कर सकता है। क़ारी साहब की दो तीन किताबें इससे पहले भी छप कर अह्ले इल्म के सामने आ चुकी हैं और आ़म मुसलमान उनसे मुस्तफ़ीद भी हो चुके हैं। अल्लाह तआ़ला उनकी ये ख़िदमत भी क़बूल फ़रमाए और उनके लिए ज़ादे आख़िरत बनाए।

तालिबे दुआ़
मुहम्मद ज़फ़ीरुद्दीन ग़ुफ़िरा लहू
मुफ़्तीए दारुलउलूम देवबंद
25 रमज़ानुलमुबारक 1408 हिजरी

❑❑❑

अर्ज़े मुअल्लिफ़

بسم اللہ الرحمٰن الرحیم

نحمدہ و نصلی علےٰ رسولہ الکریم

अम्मा बाद!

शरीअ़त में नमाज़ की इमामत का मस्अला बड़ी अहमियत और अज़मत रखता है, इमाम चूंकि तमाम मुक़्तदियों का ज़िम्मादार होता है। इसलिए इमाम मुक़र्रर करने के सिलसिले में शरीअ़त ने कुछ शराइत व ज़वाबित ब्यान किए हैं और ये बताया है कि इस जलीलुलक़द्र मनसब का हामिल कौन शख़्स हो सकता है और उसको मुक़र्रर करते वक़्त किन बातों का लिहाज़ रखना ज़रूरी है, नीज़ ये कि इमामत का हक़ किन लोगों को हासिल है और इस बुलंद व बाला मनसब के फ़राइज़ और उससे मुतअ़ल्लिक़ा मसाइल क्या हैं।

अहक़र ने ज़ेरे नज़र रिसाला "मसाइले इमामत" में मुस्तनद व मुफ़्ता बिही अक़वाल को अपनी बिसात के मुताबिक़ मुदल्लल और आ़म फ़हम अंदाज़ में जमा कर दिया है। ये सब अल्लाह रबुलइ़ज़्ज़त का फ़ज़्ल व करम और अपने मुशफ़िक़ असातिज़ा व मुफ़्तियाने किराम की तवज्जोह का समरा है। अल्लाह तआ़ला क़बूल फ़रमाए और मेरे लिए ज़ादे आख़िरत बनाए।

رَبَّنَا تَقَبَّلْ مِنَّا اِنَّکَ اَنْتَ السَّمِیْعُ الْعَلِیْمُ

मुहताजे दुआ़

मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी (मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद)

□□□

بسم الله الرحمن الرحيم

इमामत

दीन के तमाम आमाले ख़ैर में सबसे अहम और मुक़द्दम चीज़ नमाज़ है, निज़ामे दीनी में इसका दरजा और मक़ाम गोया वही है जो जिस्मे इंसानी में क़ल्ब का है। नमाज़ में इमामत बिला शुब्हा एक अज़ीमुश्शान दीनी मनसब और ज़िम्मेदारी है, बल्कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) की एक तरह की नियाबत है, इस वास्ते ज़रूरी है कि इमाम ऐसे अज़ीम मनसब के लिए ज़्यादा अहल और मौज़ूँ हो, और वह वही हो सकता है जिसको रसूलुल्लाह (स.अ.व.) से निसबतन ज़्यादा कुर्ब और मुनासबत हासिल हो और आपकी दीनी वरासत से जिसने ज़्यादा हिस्सा लिया हो, और चूंकि आपकी वरासत में औव्वल और आला दरज़ा कुरआन मजीद का है, इसलिए जिस शख़्स ने ईमान नसीब होने के बाद कुरआन मजीद से ख़ास तअ़ल्लुक़ पैदा किया, उसको याद किया और अपने दिल में उतारा नीज़ उसकी दावत व तज़कीर और उसके अहकाम को समझा, उसको अपने अन्दर जज़्ब और अपने ऊपर तारी किया, वह रसूलुल्लाह (स.अ.व.) की वरासत के ख़ास हिस्सा दारों में होगा (और उन लोगों के मुक़ाबला में जो इस सआ़दत में उससे पीछे

हों आपकी इस नियाबत यानी इमामत के लिए ज़्यादा अहल और ज़्यादा मौज़ूँ होगा) और अगर बिलफ़र्ज़ सारे नमाज़ी इस लिहाज़ से तो बराबर हों चूंकि कुरआन मजीद के बाद सुन्नत का दरजा है इसलिए इस सूरत में तरजीह उसको दी जाएगी जो सुन्नत व शरीअ़त के इल्म में दूसरों के मुक़ाबले में इम्तियाज़ रखता हो और अगर बिलफ़र्ज़ इस लिहाज़ से भी सबसे बराबर सराबर हों तो फिर उनमें जो तक़्वा और परहेज़गारी और महासिने अख़लाक़ में मुमताज़ होगा, वह इमामत के लिए लाएक़े तरजीह होगा, और अगर बिलफ़र्ज़ इस तरह की सिफ़ात में भी यकसानी हो तो फिर उम्र की बड़ाई के लिहाज़ से तरजीह दी जाएगी, क्योंकि उम्र की बड़ाई और बुज़ुर्गी भी एक मुसल्लम फ़ज़ीलत है। बहरहाल इमामत के लिए ये उसूली तरतीब अ़क़्ले सलीम के बिल्कुल मुताबिक़ और मुक़तज़ाए हिकमत है और यही रसूलुल्लाह (स.अ.व.) की तालीम व हिदायत है।

इमामत की तरतीब:

عَنْ اَبِىْ مَسْعُوْدٍ الْاَنْصَارِى قَالَ قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يَأُمُّ الْقَوْمَ اَقْرَأُهُمْ لِكِتَابِ اللّٰهِ فَاِنْ كَانُوْا فِى الْقِرَاءَةِ سَوَاءً فَاَعْلَمُهُمْ بِالسُّنَّةِ فَاِنْ كَانُوْا فِى السُّنَّةِ سَوَاءً فَاَقْدَمُهُمْ هِجْرَةً فَاِنْ كَانُوْا فِى الْهِجْرَةِ سَوَاءً فَاَقْدَمُهُمْ سِنًّا وَلَا يَؤُمَّنَّ الرَّجُلُ الرَّجُلَ فِى سُلْطَانِهِ وَلَا يَقْعُدُ فِى بَيْتِهِ عَلٰى تَكْرِمَتِهِ اِلَّا بِاِذْنِهِ۔ (رواه مسلم)

हज़रत अबूमसऊद अन्सारी (रज़ि.) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमाया जमाअ़त की इमामत वह शख़्स करे जो उनमें सब से ज़्यादा किताबुल्लाह पढ़ने

वाला हो और अगर उसमें सब यकसाँ हों तो फिर वह आदमी इमामत करे जो सुन्नत व शरीअ़त का ज़्यादा इल्म रखता हो और अगर इसमें भी सब बराबर हों तो वह जिसने पहले हिजरत की हो और अगर हिजरत में भी सब बराबर हों (यानी सब का ज़मानए हिजरत एक ही हो) तो फिर वह शख़्स इमामत करे जो सिन (उम्र) के लिहाज़ से मुक़द्दम हो और कोई आदमी दूसरे आदमी के हलक़ए सियादत और हुकूमत में उसका इमाम न बने और उस घर में उसके बैठने की ख़ास जगह पर उसकी इजाज़त के बग़ैर न बैठे। (सहीह मुस्लिम)

तशरीहः हदीस के "اَقْرَأُهُمْ كِتَابِ اللّٰه" लफ़्ज़ का लफ़्ज़ी तरजुमा वही है जो यहाँ किया गया है। यानी किताबुल्लाह का ज़्यादा पढ़ने वाला, लेकिन इसका मतलब न तो सिर्फ़ हिफ़्ज़े कुरआन है और न मुजर्रद कसरते तिलावत, बल्कि इससे मुराद है हिफ़्ज़े कुरआन के साथ उसका ख़ास इल्म और उसके साथ ख़ास शग़फ़। अहदे नबवी (स.अ.व.) में जो लोग "कुर्रा" कहलाते थे उनका यही इम्तियाज़ था, इस बिना पर हदीस का मतलब ये होगा कि नमाज़ की इमामत के लिए ज़्यादा अहल और मौज़ूं वह शख़्स है जिसका किताबुल्लाह के बारे में इल्म और उसके साथ शग़फ़ व तअल्लुक़ दूसरों पर फ़ाइक़ हो; और ज़ाहिर है कि अहदे नबवी (स.अ.व.) में यही सब से बड़ा दीनी इम्तियाज़ और फ़ज़ीलत का मेयार था और जिसका इस सआ़दत में जिसक़दर ज़्यादा हिस्सा था वह उसी क़दर रसूलुल्लाह (स.अ.व.) की ख़ास वरासत व अमानत का हामिल और अमीन था, उसके बाद सुन्नत व शरीअ़त

का इल्म फ़ज़ीलत का दूसरा मेयार था और ये दोनों इल्म यानी इल्मे कुरआन और इल्मे सुन्नत जिसके पास भी थे, अमल के साथ थे, इल्म बिला अमल का वहाँ वजूद नहीं था।

फ़ज़ीलत का तीसरा मेयार अहदे नुबूवत के उस ख़ास माहौल में हिजरत में साबिक़ीयत थी, इसलिए हदीस में तसरे नम्बर पर इसका ज़िक्र फ़रमाया गया है, लेकिन बाद में ये चीज़ बाक़ी नहीं रही, इसलिए फ़ोक़हाए किराम ने उसकी जगह सलाह व तक़वा में फ़ज़ीलत व फ़ौक़ियत को तरजीह का तीसरा मेयार क़रार दिया है जो बिल्कुल बजा है।

तरजीह का चौथा मेयार इस हदीस में उम्र में बुजुर्गी को क़रार दिया गया है कि अगर मज़कूरा बाला तीन मेयारों के लिहाज़ से कोई फ़ाइक़ और क़ाबिले तरजीह न हो तो फिर जो कोई उम्र में बड़ा और बुजुर्ग हो वह इमामत करे।

हदीस के आख़िर में दो हिदायतें और भी दी गई हैं। एक ये कि जब कोई आदमी किसी दूसरे शख़्स के इमामत व सियादत के हलक़े में जाए तो वहाँ इमामत न करे बल्कि उसके पीछे मुक़तदी बन कर नमाज़ पढ़े (हाँ अगर वह शख़्स ख़ुद ही इसरार करे तो दूसरी बात है।)

दूसरी ये कि जब कोई आदमी किसी दूसरे के घर जाए तो उसकी ख़ास जगह पर न बैठे, हाँ अगर वह ख़ुद बिठाए तो कोई मुज़ाएक़ा नहीं है, इन दोनों हिदायतें की हिकमत व मसलेहत बिल्कुल ज़ाहिर है।

(मआ़रिफ़ुलहदीस जिल्द–3, सफ़्हा–215)

अपने में से बेहतर को इमाम बनाया जाए

عَنْ عَبْدِ اللّٰهِ بْنِ عُمَرَ قَالَ قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ اِجْعَلُوْا اَئِمَّتَكُمْ خِيَارَكُمْ فَاِنَّهُمْ وَفْدُكُمْ فِيْمَا بَيْنَكُمْ وَبَيْنَ رَبِّكُمْ۔

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि.) से रिवायात है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमायाः तुम में जो अच्छे और बेहतर हों उनको अपना इमाम बनाओ, क्यों कि तुम्हारे रब और मालिक के हुजूर में वह तुम्हारे नुमाइन्दे होते हैं। (दारे कुतनी, बैहक़ी)

तशरीहः ये बात बिल्कुल ज़ाहिर है कि इमाम अल्लाह तआला के हुजूर में पूरी जमाअ़त की नुमाइंदगी करता है इसलिए ख़ुद जमाअ़त का फ़र्ज़ है कि वह इस अहम और मुक़द्दस मक़सद के लिए अपने में से बेहतरीन आदमी को मुनतख़ब करे।

रसूलुल्लाह (स.अ.व.) जब तक इस दुनिया में रौनक़ अफ़रोज़ रहे ख़ुद इमामत फ़रमाते रहे और मरज़े वफ़ात में जब माजूर हो गए तो इल्म व अमल के लिहाज़ से उम्मत के अफ़ज़ल तरीन फ़र्द हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) को इमामत के लिए नामज़द और मामूर फ़रमाया।

हज़रत अबूमसऊद अन्सारी (रज़ि.) की मुन्दरजा बाला हदीस में हक़्क़े इमामत की जो तफ़सीली तरतीब फ़रमाई गई है उसका मनशा भी दरअसल यही है कि जमाअ़त में जो शख़्स सबसे बेहतर और अफ़ज़ल हो उसको इमाम बनाया जाए। "اَقْرَأُهُمْ لِكِتَابِ اللّٰهِ اور اَعْلَمُهُمْ بِالسُّنَّة" ये सब इसी बेहतरी और अफ़ज़लीयत फ़िद्दीन की तफ़सील है।

अफ़सोस है कि बाद के दौर में इस अहम हिदायत से बहुत तग़ाफ़ुल बरता गया और इसकी वजह से उम्मत का पूरा निज़ाम दरहम बरहम हो गया।

(मआरिफुलहदीस जिल्द–3, सफ़्हा–217)

इमाम के लिए सहीह मेयार और रहनुमा उसूल यही है कि उसकी नमाज़ हल्की और सुबुक भी हो, और साथ ही मुकम्मल और ताम भी। यानी हर रुक्न और हर चीज़ ठीक ठीक औ सुन्नत के मुताबिक़ अदा हो।

(मआरिफुलहदीस जिल्द–3, सफ़्हा–222)

इमाम की ज़िम्मादारी और मसऊलियत

عَنْ عبدِ اللّٰهِ بْن عُمَرَ قَالَ قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ مَنْ اَمَّ قوماً فلْيَتَّقِ اللّٰهَ وَلْيَعْلَمْ اَنَّه ضَامِنٌ مَسْئُوْلٌ لِمَا ضَمِنَ وَاِنْ اَحْسَنَ كَانَ لَهُ مِنَ الاَجْر مِثْلُ اَجْرِ مَنْ صَلَّى خَلْفَه مِنْ غَيْرِ اَنْ يُنَقَّصَ من اُجُوْرِهِمْ شَيٌ وَمَا كَانَ مِنْ نَقْصٍ فَهُوَ عَليه (رواه الطبرانى فى الاوسط، وكنزالعمال)

हज़रत अब्दुल्लाह इब्न उमर (रज़ि.) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि: जो शख़्स जमाअ़त की इमामत करे उसको चाहिए कि ख़ुदा से डरे और यक़ीन रखे कि वह (मुक़्तदियों की नमाज़ का भी) ज़ामिन यानी ज़िम्मादार है और उससे इस ज़िम्मेदारी के बारे में भी सवाल होगा, अगर उसने अच्छी तरह नमाज़ पढ़ाई तो पीछे नमाज़ पढ़ने वाले सब मुक़्तदियों के मजमूई सवाब के बराबर उसको मिलेगा। बग़ैर इसके कि मुक़्तदियों के सवाब में कोई कमी आ जाए और नमाज़ में जो नक़्स

और कुसूर रहेगा उसका बोझ तन्हा इमाम पर होगा।
(मुअ़जमुल औसत लित्तिबरानी)

मुक़्तदियों की रिआयत

عَنْ اَبِی هُرَیْرَةَ قَالَ قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّی اللّٰهُ عَلَیْهِ وَسَلَّمَ اِذَا صَلّٰی اَحَدُكُمْ لِلنَّاسِ فَلْیُخَفِّفْ فَاِنَّ فِیْهِمُ السَّقِیْمَ والضَّعِیْفَ وَالْكَبِیْرَ وَ اِذَا صَلّٰی اَحَدُكُمْ لِنَفْسِهٖ فَلْیُطَوِّلْ مَاشَاءَ. (رواہ البخاری ومسلم)

हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि.) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमायाः जब तुम में से कोई लोगों का इमाम बन कर नमाज़ पढ़ाए तो चाहिए कि हिल्की नमाज़ पढ़ाए (यानी ज़्यादा तूल न दे) क्योंकि मुक़्तदियों में बीमार भी होते हैं और कमज़ोर बूढ़े भी (जिनके लिए तवील नमाज़ बाइसे ज़हमत हो सकती है) और जब तुम में से किसी को बस अपनी नमाज़ अकेले पढ़नी हो तो जितनी चाहे लम्बी पढ़ ले। (सहीह बुख़ारी व सहीह मुस्लिम)

तशरीहः बाज़ सहाबए किराम (रज़ि.) अपने क़बीले या हलक़े की मसिज्दों में नमाज़ पढ़ाते थे, अपने इबादती ज़ौक़ व शौक़ में बहुत लम्बी नमाज़ पढ़ाते थे, जिसकी वजह से बाज़ बीमर या कमज़ोर बूढ़े या थके हारे मुक़्तदियों को कभी कभी बड़ी तकलीफ़ पहुंच जाती थी, इस ग़लती की इसलाह के लिए रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने मुख़्तलिफ़ मौक़ों पर इस तरह की हिदायत फ़रमाई, आप (स.अ.व.) का मन्शा इससे ये था कि इमाम को चाहिए कि वह इस हिदायत का लिहाज़ रखे कि मुक़्तदियों में कभी कोई बीमार या कमज़ोर बूढ़ा भी होता है इसलिए नमाज़

ज़्यादा तवील न पढ़े। ये मतलब नहीं कि हमेशा और हर वक़्त की नमाज़ में बस छोटी से छोटी सूरतें ही पढ़ी जाएँ और रुकूअ़, सज्दा में तीन दफ़ा से ज़्यादा तसबीह भी न पढ़ी जाए, ख़ुद रसूलुल्लाह (स.अ.व.) जैसी मोतदिल नमाज़ पढ़ाते थे वही उम्मत के लिए इस बारे में अस्ल मेयार और नमूना है और उसी की रौशनी में इन हिदायात का मतलब समझना चाहिए।

मुक़्तदियों को हिदायत

عَنْ اَبِیْ هُرَيْرَةَ قَالَ قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّم
لا تُبَادِرُوا الْاِمَامَ اِذَا كَبَّرَ فَكَبِّرُوا وَاِذَا قَالَ وَلَا الضَّآلِّيْنَ
فَقُوْلُوْا اٰمِيْنَ وَ اِذَا رَكَعَ فَارْكَعُوا وَاِذَا قَالَ سَمِعَ اللّٰهُ لِمَنْ
حَمِدَهٗ فَقُوْلُوْا اللّٰهُمَّ رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ. (رواه البخاری)

हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि.) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमाया: लोगो! इमाम पर सबक़त न करो (बल्कि इसकी इत्तिबा और पैरवी करो) जब वह अल्लाहुअकबर कहे तो तुम अल्लाहुअकबर कहो, और जब वह वलज़्ज़ाल्लीन कहे तो तुम आमीन कहो, और जब वह रुकूअ़ करे तो तुम रूकूअ़ करो, और जब वह समिअल्लाहुलिमन हमिदह कहे तो तुम अल्लाहुम्मा रब्बना लकल हम्दु कहो।

(सहीह बुख़ारी व सहीह मुस्लिम)

तशरीह: मतलब ये है कि तमाम अरकान और अजज़ा में मुक़्तदियों को इमाम के पीछे रहना चाहिए, किसी चीज़ में भी उस पर सबक़त नहीं करनी चाहिए, मुस्नदे बज़्ज़ार में हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि.) ही की रिवायत से एक हदीस

मरवी है, जिसमें फ़रमाया गया है कि जो शख़्स इमाम से पहले रुकूअ़ या सज्दे से सर उठाता है उसकी पेशानी शैतान के हाथ में है और वह उससे ऐसा कराता है और हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि.) ही की रिवायत से सहीह बुख़ारी व सहीह मुस्लिम में रसूलुल्लाह (स.अ.व.) का ये इरशाद भी मरवी है कि आप ने फ़रमाया कि जो शख़्स इमाम से पहले रुकूअ़ या सज्दे से सर उठाता है उसको डरना चाहिए कि मबादा उसका सर गधे का सा न कर दिया जाए। (मआ़रिफुलहदीस जिल्द–3, सफ़्हा–323)

इमाम के औसाफ़

इमाम में मुन्दरजा ज़ैल औसाफ़ का पाया जाना ज़रूरी है:

(1) उस शख़्स में ख़ुद इमामत की ख़्वाहिश ने हो, लेकिन ये उस सूरत में है कि दूसरा आदमी इस मन्सब को अन्जाम देने वाला मौजूद हो (अगर दूसरा कोई शख़्स ये अह्लीयत न रखता हो तो फिर ख़्वाहिश करना दुरुस्त है।)

(2) जब उससे अफ़ज़ल शख़्स इमामत के लिए मौजूद न हो तो भी ख़ुद आगे न बढ़े।

(3) हुजूर (स.अ.व.) ने इरशाद फ़रमाया: लोगों की इमामत कोई शख़्स करे और उससे अफ़ज़ल शख़्स उसके पीछे मौजूद हो तो ऐसे लोग हमेशा पस्ती में रहेंगे। हज़रत उमर (रज़ि.) फ़रमाते हैं कि अगर मेरी गर्दन मार दी जाए तो मेरी नज़र में इस बात से बेहतर है कि मैं ऐसी जमाअ़त की इममात करूँ जिसमें अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) मौजूद हों।

(4) इमाम क़ारी हो, दीन की बातें समझता हो, सुन्नत से ख़ूब आगाह हो, हदीस शरीफ़ में है कि अपना दीनी मआ़मला तुम अपने फ़क़ीहों के सिपुर्द कर दो और क़ारियों को अपना इमाम बनाओ। एक दूसरी हदीस इस सिलसिले में है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमायाः तुम्हारी इमामत वह लोग करें जो तुम में बेहतर हों वह अल्लाह की बारगाह में तुम्हारे नुमाइंदे हैं।

हुज़ूर (स.अ.व.) ने ये तख़्सीस इसलिए फ़रमाई है कि दीनदार इमाम और इल्म व फ़ज़्ल रखने वाले लोग, अल्लाह को जानने और उससे डरने वाले होते हैं। वह अपनी नमाज़ और मुक़्तदियों की नमाज़ को समझते हैं और नमाज़ को ख़राब करने वाली बातों से गुरेज़ करते हैं।

"क़ारिए कुरआन" से हुज़ूर (स.अ.व.) की मुराद बेअ़मल क़ारी नहीं बल्कि बाअ़मल हाफ़िज़ है, हदीस शरीफ़ में है कि इस क़िराअत का ज़्यादा हक़दार वह है जो इस पर अमल करता है, अगर वह इसको पढ़ता न हो यानी सिरे से हाफ़िज़ व क़ारी न हो या वह क़ारी तो हो लेकिन कुरआ़न पर अमल करने वाला और हुदूदे इलाही की परवाह करने वाला न हो, और न वह अल्लाह तआ़ला के फ़राइज़ पर अमल करता हो और न उसकी ममनूआ़त से एहतेराज़ व इज्तिनाब तो करता हो अल्लाह भी ऐसे शख़्स की परवाह नहीं करता और न ऐसा शख़्स किसी इज़्ज़त व तकरीम का मुस्तहिक़ है।

नबी करीम (स.अ.व.) का इरशाद गिरामी है कि जिसने कुरआन की हराम करदा चीज़ों को हलाल जाना वह कुरआन पर ईमान नहीं रखता, लोगों को जाइज़ नहीं कि

ऐसे शख़्स को इमाम बनाएँ।

इमामत का लाइक़ वही है जो सबसे ज़्यादा आलिम होने के साथ उस पर अमल भी करे और उसको ख़ुदा का ख़ौफ़ भी हो।

(5) इमाम लोगों की अैबजोई और ग़ीबत से अपनी ज़बान को रोके और दूसरों को नेकी का हुक्म दे और ख़ुद भी उस पर अमल करे। दूसरों को बुराई से मना करे और ख़ुद भी बाज़ रहे। नेकी और नेक लोगों से मुहब्बत रखे। बदी और बदों से नफ़रत करे। औक़ाते नमाज़ से वाक़िफ़ हो, हराम बातों से इज्तिनाब करता हो, फ़ेल हराम से अपने हाथों को रोकने वाला और अल्लाह तआला की ख़ुशनूदी तलब करने वाला हो, दुनिया की हिर्स व तमअ़ उसमें न हो। नीज़ हलीम व साबिर और शर व फ़साद से कोसों दूर रहने वाला हो, लोग अगर उस पर नुकता चीनी करें तो सब्र करे और ख़ुदा का शुक्र अदा करे, बुरे कामों से आँखों को बंद रखे, हर काम हिल्म और बुर्दबारी से अन्जाम दे, शर्मगाह देखने से अपनी आँखें बंद रखे, अगर कोई जाहिल उसके साथ बुराई से पेश आए तो बरदाश्त करे और कह दे कि "اَللّٰهُمَّ سَلَامًا" लोग उसकी तरफ़ से अम्न व सलामती पाएँ। (लोगों को उससे तकलीफ़ न पहुंचती हो) लेकिन ख़ुद अपने नफ़्स की तरफ़ से बेचैन हो, नफ़्सानी ख़्वाहिशात से अपनी आज़ादी का ख़्वाहाँ हो, और उनसे अपने नफ़्स को रिहा करने की कोशिश करता हो, वह हमेशा इस बात को महसूस करता हो कि इमामत जैसे अज़ीमुलमरतबत काम को उसके सिपुर्द कर के उसकी अज़माईश की गई है, इमामत का

दर्जा बहुत बुलंद व बाला है इमाम के पेशे नज़र हमेशा इमामत की अज़मत और मरतबत रहनी चाहिए।

इमाम को हिदायत

इमाम को लाज़िम है कि बेकार गुफ़्तगू न करे, इमाम की हालत दूसरे लोगों की हालत से बिल्कुल जुदागाना है, जब वह मेहराब में खड़ा हो तो उस वक़्त उसको समझना चाहिए कि मैं अंबिया अलैहिमुस्सलाम और रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के ख़लीफ़ा के मक़ाम पर खड़ा हूँ और रब्बुलआलमीन से कलाम कर रहा हूँ।

नमाज़ के अरकान पूरे पूरे अदा करने की दिल से कोशिश करे और जिन लोगों ने इमामत की ये रस्सी उसके गले में डाली है यानी उसको इमाम बनाया है उनकी नमाज़ की तकमील की भी कोशिश करे, नमाज़ मुख़्तसर पढ़ाए। इस तरह कि तमाम अरकान पूरे अदा हों। जो लोग उसके पीछे खड़े हैं उनका ख़्याल करे कि उनमें कमज़ोर और ज़ईफ़ लोग भी शामिल हैं। इसलिए अपने को कमज़ोर व नातवाँ लोगों में शुमार करे।

अल्लाह तआला इमाम से ख़ुद उसके बारे में और मुक़्तदियों के मुतअल्लिक़ बाज़ पुर्स फ़रमाएगा। अपनी इमामत की ज़िम्मादारी पर अफ़सोस करे, साबिक़ा ख़ताओं, गुनाहों और जाए करदा औक़ात पर नदामत का इज़हार करे, अपने आपको मुक़्तदियों से बरतर न समझे। कोई शख़्स उसकी बुराई करे तो उसे बुरा न समझे, अगर उसकी ग़लती ज़ाहिर करे तो नफ़सानी ख़्वाहिश के पेशेनज़र हट

धर्मी और ज़िद न करे। इस बात को पसंद न करे कि लोग उसकी तारीफ़ा करें, तारीफ़ और मज़म्मत दोनों को बराबर समझे। इमाम का लिबास साफ़ सुथरा और ख़ुराक पाक हो उसके लिबास से इतराहट और बड़ाई ज़ाहिर न होती हो और उसकी नशिस्त में गुरूर की झलक न हो, किसी जुर्म की सज़ा में उस पर इस्लामी हद जारी न की गई हो, यानी सज़ा याफ़्ता न हो, लोगों की नज़र में मुत्तहम न हो, हुक्काम से किसी की लगाई बुझाई न करता हो, लोगों के राज़ों की हिफ़ाज़त करे (परदा दरी न करे) किसी से कीना न रखे। अमानत, तिजारत और मुस्तआर चीज़ों में ख़्यानत का इरतिक़ाब न करता हो।

ख़बीस कमाई वाला इमामत का अह्ल नहीं है। जिसके दिल में हसद, कीना और बुग्ज़ हो उसको भी इमाम न बनाया जाए, दूसरों के ऐब की तलाश करने वाले लोगों को फ़ेरब देने वाले, मग़लूबुलग़ज़ब, नफ़्स परस्त और फ़ितना व फ़साद पैदा करने वाले शख़्स को भी इमाम नहीं बनाना चाहिए।

(गुनिया सफ़्हा–858)

इमाम के लिए मज़ीद शर्तें

इमाम के लिए ज़रूरी है कि फ़ितना पैदा करने की कोशिश न करे, और न फ़ितना को तक़वियत पहुंचाए, बल्कि बातिल परस्तों के ख़िलाफ़ अह्ले हक़ की मदद करे, हाथ से मुमकिन न हो तो ज़बान से, अगर ज़बान से मुमकिन न हो तो दिल से उनकी मदद का ख़्वाहाँ हो,

अल्लाह के मआमले में किसी बुरा कहने वाले के बुरा कहने का ख़्याल न करे, अपनी तारीफ़ को पसंद न करे, न अपनी मज़म्मत का बुरा माने, दुआ में अपने लिए तख़सीस न करे, बल्कि जब दुआ करे तो अपने लिए और तमाम लोगों के लिए आम तौर पर दुआ करे, अगर तन्हा अपने लिए दुआ करेगा तो दूसरों के साथ ख़्यानत होगी।

अह्ले इल्म के सिवा किसी को किसी पर तरजीह ने दे, रसूलुल्लाह (स.अ.व.) का इरशाद है कि: नमाज़ में मुझ से क़रीब अह्ले इल्म और ज़ीफ़हम लोग खड़े हों। इस तरह इमाम से पीछे यानी अगली सफ़ में ऐसे ही लोगों को होना चाहिए। दौलत मंद को, अपने क़रीब और ग़रीब को हक़ीर जान कर दूर खड़ा न करे। ऐसे लोगों की इमामत न करे जो उसकी इमामत को पसंद नहीं करते। अगर मुक़्तदियों में कुछ लोग उसकी इमामत को पसंद और कुछ ना–पसंद करते हों तो ना–पसंद करने वालों की तादाद अगर ज़्यादा है तो इमाम को मेहराब छोड़ देनी चाहिए। (यानी नमाज़ न पढ़ाए) लेकिन शर्त ये है कि मुक्तदियों की नागवारी और ना–पसंदीदगी की वजह हक़्क़ानियत और इल्म व आगही पर हो, अगर नागवारी का बाइस जिहालत और बातिल परस्ती हो या वह फ़िरक़ावाराना तअ़स्सुब और नफ़सानी ख़्वाहिश पर मबनी हो तो फिर मुक़्तदियों की नागवारी की परवा न करे और न उनकी वजह से नमाज़ पढ़ाना तर्क करे, अगर क़ौम में इस बिना पर फ़ितना व फ़साद बरपा होने का अंदेशा हो तो अलबत्ता किनारा कश हो जाए और मेहराब को छोड़ दे और उस वक़्त तक मेहराब के पास न जाए जब तक

लोग आपस में सुलह न कर लें और उसकी इमामत पर राज़ी न हो जाएँ।

इमाम झगड़ने वाला, ज़्यादा क़समें खाने वाला और लानत करने वाला न हो। इमाम को बुराई की जगह और तोहमत के मक़ाम पर जाना मुनासिब नहीं, उसको चाहिए कि नेक लोगों के अलावा किसी से मेल मिलाप न रखे।

इमाम को लाज़िम है कि फ़ितना व फ़साद उठाने वालों, गुनाह और गुनाहगारों, नीज़ सरदारी और सरदारों से मुहब्बत न करे, अगर लोग उसे ईज़ा पहुंचाएँ तो सब्र करे और उसके एवज़ उनसे मुहब्बत करे और उनकी भलाई का तालिब हो और ख़ैर ख़्वाही की कोशिश करता रहे।

इमामत के लिए झगड़ा करना मना है

इमामत के किए झगड़ा नहीं करना चाहिए, अगर कोई दूसरा शख़्स इस बार को उसकी जगह उठाना चाहता है तो उससे उस मआ़मले में न झगड़े, अकाबिरे मिल्लत और सलफ़े सालेहीन के बारे में मनकूल है कि उन्होंने इमाम बनने से गुरेज़ किया और अपने बजाए ऐसे लोगों को इमामत के लिए बढ़ा दिया जो बुज़ुर्गी और तक़वा में उनके बराबर नहीं थे।

इस तर्ज़ेअमल से उनका मुद्दआ़ ये था कि ख़ुद उनका बोझ हलका हो जाए, वह इस बात से डरते थे कि कहीं इमामत में उनसे कोई कुसूर और कोताही न हो जाए।

(गुनयतुत्तालिबीन सफ़्हा—865)

इमामत की उजरत

इमामत की उजरत के बारे में शुरू ही से इख़्तिलाफ़ी मस्अला चला आ रहा है। इमाम शाफ़ई (रह.) व इमाम अहमद इब्न हम्बल (रह.) और एक जमाअ़त का मज़हब ये है कि ऐसी ताअ़त पर जो अजीर के ज़िम्मा मुतअ़य्यन न हो, अक़्दे इजारा मुनअ़क़िद करना और उजरत लेना देना जाइज़ है जैसे तालीमे कुरआन, अज़ान व इमामत वग़ैरा।

इमामे आज़म अबुहनीफ़ा, ज़ोहरी और क़ाज़ी शुरैह (रह.) और एक जमाअ़त इसकी क़ाएल है कि ताअ़त पर इजारा नाजाइज़ है।

मुतक़द्दिमीन हनफ़ीया का यही मसलक था कि ताअ़त पर उजरत लेना देना नाजाइज़ है और कुदमाए हनफ़ीया इसी के मुवाफ़िक़ फ़तवा देते और अमल करते रहे।

इल्म दीन पढ़ाने वालों, अज़ान कहने वालों और इमामत करने वालों के वज़ाइफ़ बैतुलमाल से मुक़र्रर होते थे और ये लोग निहायत इत्मीनान और फ़ारिगुलबाली से अपना काम अन्जाम देते रहते थे, कुछ अरसा बाद इस्लामी सलतनत न रहने या बैतुलमाल के मसारिफ़ में बाज़ मुसलमान बादशाहों के शरई हुदूद से तजावुज़ कर जाने की वजह से उन उलमा और मुअज़्ज़िनीन व अइम्मा के वज़ाइफ़ बंद हो गए और तालीमे उलूमे दीनिया या अज़ान व इमामत की अंजाम दिही में जो फ़रागते क़ल्बी उन्हें हासिल थी वह जाती रही, चूँकि ये लोग भी आख़िर इंसान थे और इंसानी ज़रूरियाते मआश उनकी ज़िन्दगी

के लवाज़िमात में भी दाख़िल थीं। इसलिए उनको मजबूरन माल हासिल करने के ज़राए की तरफ़ मतवज्जेह होना पड़ा जिसके ज़रीए अपनी और अपनी औलाद व मुतअल्लिक़ीन की गुज़र बसर हो सके।

ज़राए मआश चूंकि मुख़्तलिफ़ अक़साम के हैं। किसी ने कोई तरीक़ा इख़्तियार किया, किसी ने कोई, किसी ने तिजारत, किसी ने ज़िराअत, किसी ने मुलाज़मत और किसी ने सनअत व दस्तकारी इख़्तियार की। इसी तरह ज़रूरतें भी कम व बेश मुख़्तलिफ़ थीं। इसलिए रात दिन के चौबीस घन्टों में एक बड़ा हिस्सा कस्बे मआश में ख़र्च कर देने के बावजूद भी बाज़ अफ़राद की ज़रूरतें पूरी न हुईं। इन हालात की वजह से मजबूरन बहुत से उलमा, मुअज़्ज़िन और इमाम तालीमे उलूमे दीनिया या अज़ान व इमामत की ख़िदमत को बिलइल्तिज़ाम पूरा न कर सके और बिलआख़िर इन ख़िदमात को छोड़ना पड़ा।

लेकिन तालीम छोड़ने से ये नुक़्सान था कि इल्मे दीन का सिलसिला मुनक़तअ हो जाएगा, क्योंकि जब पढ़ाने वालों को अपनी ज़रूरीयाते मआश में मशग़ूल होने की वजह से इतनी फ़ुरसत न मिलती कि तलबा को पढ़ा सकें। तो उलूमे दीन की ज़िन्दगी और बक़ा की क्या सूरत थी?

अज़ान छोड़ देने से ये नुक़्सान था कि नमाज़ के औक़ात का इंज़िबात जो मुऐयन मुअज़्ज़िन होने की सूरत में हो सकता है दरहम बरहम हो जाता, चूंकि इस ज़माने में बड़े बड़े शहरों में बल्कि बाज़ क़स्बों में भी अक्सर ग़रीब मुसलमान कारख़ानों और कम्पनियों और मिलों में

मज़दूरी पर काम करते हैं और अपने अफ़सरों की ख़ुशामद कर के नमाज़ और जमाअ़त की इजाज़त हासिल करते हैं ऐसे लोगों को इस बात की ज़्यादा ज़रूरत है कि अज़ान और नमाज़ का वक़्त मुऐयन हो कि उसके मुवाफ़िक़ वह कार ख़ानों से ठीक वक़्त पर आ जाया करें और जमाअ़त से नमाज़ पढ़ कर अपने काम पर चले जाएँ। अगर अज़ान व जमाअ़त के औक़ात मुऐयन न हों तो उन लोगों को या तो जमाअ़त छोड़नी पड़ेगी या अपने काम में ज़्यादा देर तक ग़ैर हाज़िर रहने की वजह से अफ़सरों की नाराज़गी पेश आएगी और अपने ज़राए मआश को खोना पड़ेगा।

इमाम मुऐयन न होने की सूरत में जमाअ़त का इंतिज़ार दुरुस्त नहीं रह सकता और पूरे इंज़िबात से नमाज़ नहीं हो सकती।

पस मुतअख़्ख़िरीन फ़ुक़हाए हनफ़ीया ने इस ज़रूरते शरईया की वजह से हज़रत इमाम शाफ़ई (रह.) के क़ौल के मुवाफ़िक़ ये फ़तवा दे दिया कि मवाक़ेअ़ ज़रूरत में ताअ़त पर उजरत लेना जाइज़ है और क़ुरआन शरीफ़ व हदीस, व फ़िक़्ह की तालीम और अज़ान व इमामत पर उजरत लेने के जवाज़ की तसरीह कर दी, क्योंकि ये चीज़ें ऐसी हैं कि उनके बाक़ी न रहने से इस्लामी हक़ीक़त का बाक़ी रहना भी मुश्किल है।

(दीनी ख़िदमात और मुआ़वज़ा सफ़्हा–176)

हाकिमे वक़्त की इजाज़त ज़रूरी है

अगर हाज़िरीन में हाकिमे वक़्त मौजूद हो तो उसकी

इजाज़त के बग़ैर इमामत के लिए आगे न बढ़े इसी तरह जब किसी गाँव या क़बीला में पहुंचे तो वहाँ के लोगों की इजाज़त के बग़ैर इमामत न करे, इसी तरह किसी क़ाफ़िले या सफ़र में बहुत से लोगों का साथ हो जाए तो साथियों की इजाज़त के बग़ैर उनकी इमामत न करे।

नमाज़ लम्बी नहीं पढ़नी चाहिए, बल्कि मुख़्तसर पढ़नी चाहिए, मगर अरकान पूरे अदा करे, हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि.) की रिवायात से हुज़ूर (स.अ.व.) का ये इरशादे गिरामी पहले गुज़र चुका है: "जब तुम में से कोई इमाम हो तो नमाज़ को मुख़्तसर करे, क्योंकि उसके पीछे बच्चे बूढ़े और काम करने वाले लोग भी खड़े होते हैं।"

हाँ अगर तन्हा नमाज़ पढ़े तो फिर जितनी चाहे लम्बी पढ़े, हज़रत अबूवाक़िद (रज़ि.) रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) जब लोगों को नमाज़ पढ़ाते थे तो बहुत ही मुख़्तसर नमाज़ होती और जब बन्फ़्से नफ़ीस अदा फ़रमाते तो सबसे ज़्यादा लम्बी नमाज़ होती।

(गुनयतुत्तालिबीन सफ़्हा–869)

इमाम और मेहराब

इमाम को जाइज़ नहीं है कि मेहराब के बिल्कुल अन्दर घुस कर खड़ा हो और पीछे वाले लोगों की नज़रों से छिप जाए, बल्कि उसको मेहराब से क़द्रे बाहर खड़ा होना चाहिए। (यानी इमाम की ऐड़ियाँ बाहर हों जिसकी तफ़सील आइंदा आ रही है) इमाम के लिए मुनासिब है कि नमाज़ का सलाम फेरने के बाद ज़्यादा देर तक

मेहराब में न ठहरे, बल्कि बाहर निकल कर सुन्नतों के लिए खड़ा हो जाए, या मेहराब के बाईं जानिब खड़े हो कर सुन्नतें अदा करे। हरज़रत मुग़ीरा इब्न शोअ़बा (रज़ि.) रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि इमाम ने जिस जगह खड़े होकर फ़र्ज़ पढ़ाए हैं। उस जगह सुन्नतें और नफ़्ल न पढ़े। अलबत्ता मुक़्तदी के लिए जाइज़ है कि वह अपनी जगह खडे होकर सुन्नतें और नफ़्ल पढ़ ले चाहे तो इधर उधर हट कर भी पढ़ सकता है।

क़िराअत के अौवल व बाद सुकूत

इमाम को दोबारा वक़्फ़ा करना चाहिए। एक बार तो नमाज़ के शुरू में और दूसरी बार क़िराअत के बाद रुकूअ़ से पहले कि इस वक़्फ़ा में उसको दम लेने का मौक़ा मिल जाएगा और क़िराअत से जो जोश पैदा हुआ था वह सुकून से बदल जाएगा।

क़िराअत का इत्तिसाल रुकूअ़ की तकबीर से भी नहीं होगा। हज़रत समरा जुन्दुब से रिवायत कर्दा हदीस में रसूलुल्लाह (स.अ.व.) का यही मामूल मनकूल है।

तसबीह में जल्दी न करे

रुकूअ़ में जाए तो तीन बार तसबीह पढ़े। तसबीह पढ़ने में उजलत न करे, बल्कि बहुत आहिस्तगी और जम कर अलफ़ाज़ अदा करे, क्योंकि अगर इमाम तसबीह को

उजलत से पढ़ लेगा तो मुक़्तदी उसको नहीं कह पाएँगे। इसी तरह रुकूअ़ से सर उठा कर "سَمِعَ اللّٰهُ لِمَنْ حَمِدَهٗ" कह कर ठीक ठीक खड़ा हो जाए और बग़ैर उज़लत के "رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ" कहे ताकि मुक़्तदी भी इतनी देर में कह सकें। हज़रत अनस इब्न मालिक (रज़ि.) ने फ़रमाया कि रसूल (स.अ.व.) रुकूअ़ से सर मुबारक उठा कर इतनी देर तक (सज्दा करने से) तवक़्क़ुफ़ फ़राते थे कि ख़्याल होता था कि आप भूल गए हैं। इसी तरह सज्दा में और दोनों सज्दों के दरमियान तवक़्क़ुफ़ करे, और उस शख़्स के कहने का कुछ ख़्याल न करे जो ये कहता है कि इस सूरत में मुक़्तदी इमाम से पहले बाज़ अरकान अदा कर ले गा और कोई रुक्न मुक़द्दम किया तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

जब लोग इमाम के वक़्फ़ा को देखेंगे तो समझ लेंगे कि इमाम हमेशा ये वक़्फ़ा करता है और दोनों सज्दों के दरमियान वक़्फ़ा इमाम की आदत है, इसलिए फिर वह भी ठहरा करेंगे और इमाम से पहले सज्दा नहीं करेंगे।

(गुनया सफ़्हा–869)

इमाम नमाज़ से क़ब्ल मुक़्तदियों को तंबीह करे

इमाम को चाहिए कि नमाज़ शुरू करने से क़ब्ल मुक़्तदियों को समझा दिया करे कि तुम किसी रुक्न में मुझ से पहल न करना, बल्कि मुझे रुक्न अदा करने देना फिर तुम मेरी इक़्तिदा करना, अगर तुम मुझ से पहले अरकान अदा करोगे तो अल्लाह तआ़ला को नाराज़

करोगे और अपनी नमाज़ें भी ख़राब करोगे।

इमाम को चाहिए कि अपने मुक़्तदियों को नसीहत करता और समझाता रहे, ताकि वह रुकूअ़ और सुजूद और दूसरे अरकाने नमाज़ में जल्दबाज़ी से काम न लें और नमाज़ अच्छी तरह अदा करें, क्योंकि इमाम उनका निगहबान है। क़यामत के दिन इमाम से लोगों के बारे में पूछा जाएगा। इमाम को चाहिए कि अपनी नमाज़ भी अच्छी तरह अदा करे, अगर उनमें कोताही करेगा तो जिस तरह उसके मुक़्तदियों को गुनाह की सज़ा मिलेगी उसी तरह इमाम को भी उसकी कोताही व ग़फ़लत की वजह से उन लोगों की नमाज़ें ख़राब करने की सज़ा दी जाएगी। (गुनयतुत्तालिबीन सफ़्हा–871)

इमाम का दिल और ज़बान से नीयत करना

इमाम को चाहिए कि दिल से नीयत किए बग़ैर न नमाज़ शुरू करे और न तकबीरे तहरीमा कहे, अगर ज़बान से भी नीयत के अलफ़ाज़ कह ले तो ज़्यादा अच्छा है। इमाम को चाहिए कि पहले दाएँ बाएँ देख कर सफ़ें दुरुस्त कराए और मुक़्तदियों से कहे कि सीधे खड़े हो जाओ, अल्लाह तुम पर रहम नाज़िल फ़रमाए, ठीक खड़े हो जाइए अल्लाह तुम से राज़ी हो, दरमियान के ख़ला को पुर करने के लिए हुक्म दे, कि शाना से शाना मिला कर खड़े हो जाएँ, सफ़ों की कजी से नमाज़ में नक़्स पैदा होता है। शैतान लोगों के साथ सफ़ों में घुस कर खड़े हो जाते हैं। हदीस शरीफ़ में रसूलुल्लाह (स.अ.व.)

का इरशाद है कि: "सफ़ें जोड़ लिया करो, शाने से शाना मिला लिया करो और दरमियानी ख़ला को पुर कर लिया करो, बकरी के बच्चों जैसे शैतान तुम्हारे दरमियान घुस कर न खड़े हो जाएँ।"

आँहज़रत का तरीक़ा

रसूलुल्लाह (स.अ.व.) जब नमाज़ के लिए खड़े होते तो आप (स.अ.व.) तकबीर कहने से पहले दाएँ बाएँ के लोगों को शाने बराबर रखने का हुक्म देते थे और फ़रमाते थे कि कोई शख़्स आगे पीछे न हो वरना उनमें फूट पड़ जाएगी। हुजूर (स.अ.व.) ने एक रोज़ नमाज़ के वक़्त देखा कि एक शख़्स का सीना सफ़ से बाहर निकला हुआ है आप (स.अ.व.) ने इरशाद फ़रमाया कि तुम को अपने मोंढे बराबर कर लेना चाहिए वरना अल्लाह तआला तुम्हारे दिलों में फूट डाल देगा।

बुख़ारी (रह.) और मुस्लिम (रह.) की मुत्तफ़क़ अलैहि रिवायत है कि सालिम इब्न जौर (रज़ि.) ने हज़रत नोअमान इब्न बशीर (रज़ि.) से सुना कि उन्होंने फ़रमाया कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) फ़रमाया करते थे कि अपनी सफ़ें सीधी रखो वरना अल्लाह तआला तुम्हारे चेहरों में फ़र्क़ पैदा कर देगा। एक और हदीस में हज़रत क़तादा (रज़ि.) ने हज़रत अनस इब्न मालिक (रज़ि.) से रिवायत की है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमाया: "सफ़ों को सीधा रखना, तकमीले नमाज़ में से है। (यानी नमाज़ की तकमील का एक हिस्सा है)"

सहाबए किराम का मामूल

अमीरुलमुमिनीन हज़रत उमर इब्न ख़त्ताब रज़ि. तआला अन्हो ने एक शख़्स को महज़ सफ़े सीधी करने पर मुक़र्रर कर रखा था, जब तक वह शख़्स सफ़ों के हमवार होने की इत्तिला आपको नहीं दे देता था आप तकबीरे तहरीमा नहीं कहते थे। हज़रत उमर इब्न अब्दुलअज़ीज़ का भी यही मामूल था, एक रिवायत है कि हज़रत बिलाल (रज़ि.) "मुअज़्ज़िने रसूल" (स.अ.व.) सफ़ें हमवार कराते थे और ऐड़ियों पर कोड़े मारते थे, ताकि लोग हमवार खड़े हो जाएँ, बाज़ उलमा ने फ़रमाया है कि इस रिवायत से ये ज़ाहिर होता है कि हज़रत बिलाल रज़ि. ये ख़िदमत रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के अह्दे मुबारक में इक़ामत के वक़्त नमाज़ शुरू होने से पहले अन्जाम दिया करते थे, इसलिए कि हज़रत बिलाल (रज़ि.) ने हुज़ूर (स.अ.व.) के बाद किसी इमाम के लिए अज़ान नहीं दी, सिर्फ़ एक दिन हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) के ज़माने में जब कि आप (रज़ि.) मुल्क शाम से वापस आए थे तो हज़रत सिद्दीक़ अकबर और दूसरे सहाबा (रज़ि.) ने अह्दे नबवी की याद और इश्तियाक़ में हज़रत बिलाल (रज़ि.) से दरख़्वास्त की थी तो आप ने अज़ान दी थी, अज़ान में जब आप (रज़ि.) "اَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا رَّسُوْلُ اللّٰه" पर पहुंचे तो रुक गए और आगे कुछ न कह सके, हुज़ूर (स.अ.व.)की मुहब्बत और आप (स.अ.व.) के इश्क में बेहोश हो कर गिर पड़े। मदीना के अन्सार व मुहाजिरीन में एक कोहराम

पड़ गया, यहाँ तक कि मुहब्बते रसूल में औरतें भी पर्दे से बाहर निकल आईं।

ग़रज़ इस रिवायत से साबित है कि हज़रत बिलाल (रज़ि.) का ऐड़ियों पर दुर्रे मारना रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के मुबारक ज़माना में था।

इमाम की तक़र्रुरी का हक़

सवालः अगर किसी मस्जिद के अक्सर मुक़्तदी और अह्ले मुहल्ला व मिम्बर कमेटी एक पेश इमाम साहब को उनकी ख़िदमात से सुबुकदोश कर के दूसरे इमाम को उनकी जगह तक़र्रुर करें, तो ऐसी सूरत में अक्सरीयत की राए का एहतेराम ज़रूरी है या अक़ल्लीयत की हटधर्मी को तस्लीम किया जाए?

जवाबः अगर दोनों इल्म व फ़ज़्ल और तक़्वा में बराबर हैं तो क़ौम में से अह्ले सलाह की अक्सरीयत का एतेबार किया जाएगा। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–3, सफ़्हा–294, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1, सफ़्हा–522)

फ़तावा महमूदिया जिल्द–2, सफ़्हा–85, बहवाला इंतिबाह सफ़्हा–141 में है कि: "इमाम मुक़र्रर करने का हक़ बानिए मस्जिद को है फिर उसके ख़ानदान वालों को (औलाद वग़ैरा को) फिर अह्ले मुहल्ला को, लेकिन इमाम में अह्लियत होना शर्त है।"

अगर बानी या मुतवल्ली किसी ग़ैर मुस्तहिक़ को इमाम बनाना चाहें, और अह्ले मस्जिद किसी लाइक़ को तो अह्ले मस्जिद का हक़ राजेह होगा।

(फ़तावा क़ाज़ी ख़ाँ हिन्दीया जिल्द–3, सफ़्हा–338)

क्या इमामत में वरासत है?

सवालः ख़तीब साहब ने अपनी ज़िन्दगी में भाई के होते हुए अपने भतीजे को अपना नाइब मुक़र्रर किया। पाँच साल बड़ी दियानत दारी के साथ ख़िदमत अन्जाम दी अब ख़तीब साहब का इंतिक़ाल हो गया। क्या उनकी औलाद अपना नाइब मुक़र्रर कर सकती है?

(2) इमाम साहब ने भाई के होते हुए भतीजा को मुक़र्रर किया और जमाअ़त ने मन्जूर किया अब भाई दावेदार है, क्या उसका दावा सहीह है या नहीं?

जवाबः जिसको ख़तीबे साबिक़ ने अपनी ज़िन्दगी में इमाम मुक़र्रर किया और क़ौम और जमाअ़त ने उसको मंज़ूर किया वही इमाम मुक़र्रर हो गया, क्योंकि दरहक़ीक़त इमाम के तक़र्रुर करने का हक़ मस्जिद के बानी और उसकी औलाद के बाद क़ौम और जमाअ़त को है, लिहाज़ा जिसको क़ौम ने इमाम तस्लीम कर लिया वह इमाम हो गया।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–95, बहावाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 बाबुलअज़ान सफ़्हा–372)

इमामत में वरासत नहीं है बल्कि इमाम मुक़र्रर करने का हक़, अव्वल बानिए मस्जिद को है और फिर उसकी औलाद व अक़ारिब को, उसके बाद नमाज़ियों और अह्ले मुहल्ला को है कि इमाम को मुक़र्रर करें, बल्कि अगर बानिए मस्जिद ने किसी को इमाम बनाया और वह इमामत

की सलाहियत नहीं रखता और नमाज़ियों ने उसके लाइक़ तर को इमाम मुक़र्रर कर दिया तो वही इमाम मुक़र्रर होगा जिसको नमाज़ियों ने मुक़र्रर किया है।

रद्दुलमुहत्तार जिल्द–3 सफ़्हा–573 में है कि इमामे साबिक़ बिदअ़ती हो गया और मस्जिद के नमाज़ी उससे ख़ुश नहीं हैं उसकी ख़राबी के सबब तो उसको माज़ूल करना और दूसरे लाइक़ तर और मसाइले नमाज़ से वाक़िफ़ शख़्स को इमाम मुक़र्रर करना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–85)

इमाम की तक़र्रुरी में अगर इख़्तिलाफ़ हो जाए

सवालः मुहल्ले की मस्जिद में दो शख़्स कहते हैं कि हमारा मुक़र्रर कर्दा इमाम रहेगा और जमाअ़त के ज़्यादा अफ़राद कहते हैं कि हम जो इमाम मुक़र्रर करेंगे वह रहेगा। शरअ़न क्या हुक्म है?

जवाबः जिसको जमाअ़त के ज़्यादा अफ़राद इमाम मुक़र्रर करें वही इमाम रहेगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–79, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–522 बाबुलइमामत)

अगर अह्ले मस्जिद किसी को इमाम मुक़र्रर करने में दो फ़रीक़ हो जाएँ तो जिस फ़रीक़ का तजवीज़ करदा इमाम ज़्यादा लाइक़ हो वह राजेह होगा, और अगर दोनों फ़रीक़ के इमाम लाइक़ हों तो बड़े फ़रीक़ का इमाम राजेह होगा।

(फ़तावा आलमगीर जिल्द–1 सफ़्हा–88)

क्या अदालत इमाम मुक़र्रर कर सकती है

सवालः क्या अदालत को कोई हक़्क़े शरई हासिल है कि क़ौम का ऐसा इमाम ज़बरदस्ती मुक़र्रर करे कि क़ौम उसको इमाम बनाने पर रज़ामंद नहीं?

जवाबः अदालत को ये हक़ हासिल नहीं है, क्योंकि उसका नफ़ा व नुक़सान क़ौम को है, लिहाज़ा बिला रज़ामंदिये क़ौम के उनके लिए अदालत कोई इमाम मुक़र्रर न करे। और अदालत को इसमें कुछ हक़ नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–95, बहवाला रद्दुलमुहतार सफ़्हा–522 बाबुलइमामत)

इमामत का दावा और मुक़्तदियों का इनकार

सवालः एक ख़ानक़ाह का सज्जादा बहैसियत सज्जादगी अगर इमामत का दावा करे और बाक़ी वरसा जो कि उसके अह्ले बिरादरी और मुक़्तदी हैं उसकी इममात मंजूर न करें तो दावाए इमामत दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः कुतुबे फ़िक़्ह में है कि बानिए मस्जिद और वाक़िफ़ को ज़्यादा हक़ है इमाम के तक़र्रुर वग़ैरा करने में और अगर वह न हो तो उसकी औलाद व अक़ारिब हक़दार हैं।

इसके बाद अह्ले मुहल्ला व अह्ले मस्जिद जिसको इमाम मुक़र्रर करें वह इमाम होता है, पस ख़ानक़ाह का सज्जादा नशीन अगर वाक़िफ़े औलाद में से है तो बेशक

उसको हक़ है इमाम वग़ैरा मुक़र्रर करने का लेकिन दीगर अह्ले क़राबते वाक़िफ़ को भी ये हक़ है। सज्जादा नशीन को कुछ तरजीह और ख़ुसूसियत इस बारे में नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–79, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलअज़ान जिल्द–1 सफ़्हा–372)

अगर इमाम मुक़र्रर करने की गुंजाइश न हो तो क्या हुक्म है

सवालः किसी शहर में मसाजिद ज़्याद हों और नमाज़ी कम और हर एक मस्जिद में इमाम मुक़र्रर करने की ताक़त न रखते हों, अगर क़रीब मुहल्ले वाले मिल कर एक मस्जिद में इमाम मुक़र्रर कर लें और दीगर मसाजिद छोड़ कर एक मस्जिद में बाजमाअ़त इमामे मज़कूर के पीछे नमाज़ अदा करें तो क्या हुक्म है?

जवाबः बेहतर ये है कि हत्तलवुस्अ़ जहाँ तक हो सके सब मसिज्दों को आबाद करें और थोड़े थोड़े नमाज़ी सब मसिज्दों में नमाज़ पढ़ें, बहालते मजबूरी जैसा मौक़ा हो करें। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–67, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब अहकामुलमस्जिद जिल्द–1 सफ़्हा–617)

इमाम के फ़राइज़े मनसबी

इमाम अपने मनसब के लिहाज़ से सिर्फ़ नमाज़ पढ़ाने का ज़िम्मादार है, अलबत्ता अगर इससे वअ़ज़ या तलबा को तालीम वग़ैरा देने की शराइत कर ली जाएँ और वह

मंजूर कर ले तो फिर उसकी ज़िम्मादारी भी उस पर आएद होगी। ये ज़रूरी है कि इमाम से ऐसे कामों के लिए शराइत न की जाएँ जो उसकी हैसियते इमामत और मन्सब के ख़िलाफ़ हों।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–46)

अगर इमामत और पानी गर्म करने पर वह मुलाज़िम है और उसकी उजरत में मुहल्ले से रोटियाँ लाना भी है तो उससे उसकी इमामत में कोई नुक़्सान लाज़िम नहीं आता अगर मुहल्ले से रोटियाँ लाना उजरत में नहीं बल्कि वैसे ही अज़ ख़ुद माँग कर लाता है और बावजूद किसी मशरूअ़ तरीक़ पर कमाने की कुदरत के इस माँगने को पेश बना रखा है तो ये पेशा नाजाइज़ है, ऐसे शख़्स को इमाम बनाना मकरूहे तहरीमी है, जब कि कोई दूसरा आमदी इमामत का अह्ल मौजूद हो।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–41)

पेश इमाम का रुतबा

पेश इमाम की इज़्ज़त व तौक़ीर करनी चाहिए। उसकी बेइज़्ज़ती और तौहीन और हतक करनी गुनाह है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–92)

क्या इमाम अपना नाइब मुक़र्रर कर सकता है?

(1) अगर मस्जिद की कोई कमेटी है तो वह इमाम या नाइबे इमाम मुक़र्रर करने की मुस्तहिक़ है, लेकिन

अगर कमेटी नहीं है तो मस्जिद के नमाज़ियों की जमाअत का हक़ है।

(2) नाइबे इमाम वही होगा जिसको मस्जिद की कमेटी या नमाज़ियों की कसरते राए से मुक़र्रर किया गया हो, तन्हा इमाम को इसका इख़्तियार नहीं। ख़ुसूसन जबकि इमाम ख़ुद भी इमामत का तनख़्वाहदार मुलाज़िम हो। (किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–83)

इमाम के अज़्ल व नस्ब का हक़

फुक़हा ने लिखा है कि इमाम को रखने या माज़ूल करने का हक़ बानिये मस्जिद या उसकी औलाद को है।

अगर मुतवल्ली, वाक़िफ़ की जानिब से शराइत के साथ है तो वह भी क़ाइम मक़ाम है और अगर नमाज़ियों की अक्सरीयत किसी नेक सालेह शख़्स को इमाम मुक़र्रर करे तो इमाम मुक़र्रर हो जाएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–78, बहवाला रद्दुलमुहतार किताबुलवाक़िफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–573)

अइम्मए मसाजिद की तनख़्वाह और शरई ज़िम्मादारियाँ

सवालः इमामे मस्जिद से इमामत के अलावा झाडू दिलाना, नालियाँ साफ़ कराना, अज़ान देना और इसके अलावा और छोटे मोटे काम लिए जाते हैं और तनख़्वाह सिर्फ़ इमामत की दी जाती है। क्या इतनी क़लील तनख़्वाह के ऐवज़ इतने सारे काम लेना जाइज़ हैं? शरअन इमाम

की ज़िम्मादारियाँ क्या क्या हैं? अइम्मए मसाजिद की तनख़्वाह क्या होनी चाहिए? तनख़्वाह का मेयार से कम देने पर मुतवल्ली और अह्ले मुहल्ला गुनहगार होंगे ये नहीं? मुफ़स्सल जवाब इनायत फ़रमाएँ।

जवाबः हदीस शरीफ़ में हैः "मज़दूर की मज़दूरी उसका पसीना ख़ुश्क होने से पहले दे दो।"

(मिशकात शरीफ़ सफ़्हा–258)

आँहज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमायाः क़यामत के रोज़ जिन तीन आदमियों के ख़िलाफ़ दावा होगा। उनमें से एक वह शख़्स है जो किसी को मज़दूर रखे और उससे पूरा काम ले, मगर मज़दूरी पूरी न दे।

(बुख़ारी बहवाला मिश्कात शरीफ़ सफ़्हा–258)

मज़दूरी पूरी न देने का मतलब सिर्फ़ इतना ही नहीं कि उसकी मज़दूरी मार ले और पूरी न दे, बल्कि उसमें ये भी शामिल है कि जितनी उजरत उस काम की मिलनी चाहिए उतनी न दे और उसकी मजबूरी से फ़ाएदा उठाए कि कम से कम उजरत पर काम ले ले। फ़ुक़हाए किराम (रह.) ने इस बात की तसरीह की है कि मस्जिद के मुतवल्ली और मदरसा के मोहतमिम को लाज़िम है कि ख़ादिमाने मसाजिद और मदारिस को उनकी हाजत के मुताबिक़ और उनकी इल्मी क़ाबिलीयत और तक़्वा व सलाह को मलहूज़ रखते हुए वज़ीफ़ा व मुशाहरा (तनख़्वाह) देते रहें, बावजूद गुंजाईश के कम देना बुरी बात है, और मुतवल्ली ख़ुदा के यहाँ जवाब देह होंगे। (दर्रेमुख़्तार व शामी जिल्द–3 सफ़्हा–389, जिल्द–2 सफ़्हा–78)

सिर्फ़ इमामत की तन्ख़्वाह देकर इमाम पर अज़ान की

जिम्मादारी डालना और उनसे झाड़ू देने और नालियाँ साफ़ करने वग़ैरह उमूर की ख़िदमत लेना ज़ुल्मे शदीद और तौहीन है, नबीए करीम अलैहिस्सलातो वत्तसलीम का फ़रमान है: हामिलीन कुरआन (हुफ़्फ़ाज़ व कुर्रा व उलमाए किराम) की ताज़ीम करो, बेशक जिसने उनकी तकरीम की उसने मेरी तकरीम की।

(अलजामेउस्सग़ीर लिलइमामिलहाफ़िज़ अस्सुयूती (रह.) जिल्द–1 सफ़्हा–145)

एक और हदीस में है कि: "हामिलीने कुरआन इस्लाम के अलमबरदार हैं और इस्लाम का झंडा उठाने वाले हैं। जिसने उनकी ताज़ीम की उसने अल्लाह की ताज़ीम की और जिसने उनकी तज़लील की उस पर अल्लाह की लानत है।" (फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–355)

तनख़्वाह माकूल न होने की वजह से कि इमाम और मुअज़्ज़िन के लिए (मस्जिद में चंदा) किया जाए और मुसल्ली हज़रात बख़ुशी चंदा दें और तनख़्वाह की कमी को पूरा किया जाए, लेकिन चंदा जबरन न वसूल किया जाए, अगर इस तरह इमाम व मुअज़्ज़िन की इमदाद न की गई तो उनका गुज़ारा कैसे होगा? और वह किस तरह रह सकेंगे? बेहतर तो यही है कि तनख़्वाह माकूल दी जाए और चंदा की रस्म को ख़त्म किया जाए।

(फ़तावा रहीमिया जल्द–4 सफ़्हा–427)

इमामत की उजरत

सवाल: ज़ैद कहते हैं कि इमामे मस्जिद न अजीर है

और न नौकर, क्योंकि उसको माले वक़्फ़ से तनख़्वाह मिलती है और उमर कहता है कि इमाम अजीर और नौकर है, किसका क़ौल सहीह है?

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–87)

जवाब: जो इमाम की तनख़्वाह लेता है उसके अजीर होने में क्या तअम्मुल है, इमामत पर उजरत लेना फुक़हा ने जाइज़ लिखा है और वक़्फ़ माल से तनख़्वाह मिलना इसकी दलील नहीं कि वह उजरत न हो और तनख़्वाह दार अजीर न हो। क्या अगर वक़्फ़ की तामीर के लिए माले वक़्फ़ से आमिलीने तामीर मुक़र्रर किए जाएँ तो वह अजीर न होंगे, क़ौले उमर इसमें सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–320)

इमामत पर तनख़्वाह लेना दुरुस्त है, जैसा कि रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–374 किताब शुरूतुस्सलात में है, तनख़्वाह दार इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ने में कुछ कराहत नहीं है, और कुछ तरद्दुद न करना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–320)

क्या इमाम को छुट्टी का हक़ हासिल है

सवाल: अगर कोई इमाम इमामत की तनख़्वाह पाने के बावजूद कभी कभी ग़ैर हाज़िर हुए तो क्या हुक्म है?

जवाब: शामी जिल्द–3 किताबुलवक़्फ़ में है कि इमाम को अपनी ज़रूरियात या राहत के लिए एक हफ़्ता या उसके क़रीब यानी पन्दरह दिन से कम तक आदतन ग़ैर हाज़िरी उरफ़न शरअ़न जाइज़ है, फिर आगे तसरीह की

है कि साल भर में हफ़्ता दो हफ़्ता गै़र हाज़िर हो तो मआफ़ है, पस सूरते मसऊला का हुक्म भी इससे समझ लेना चाहिए कि कभी कभी गै़र हाज़िरी इमाम की मआफ़ होगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–84, बहवाला रद्दुलमुहतार किताबुलवक़्फ़ जिल्द–3 सफ़्हा–564)

क्या इमाम गै़र हाज़िरी के ज़माने की तनख़्वाह ले सकता है

सवालः किसी उज़्र या बिला उज़्र निस्फ़ माह से कम अगर इमाम साहब इमामत का काम अंजाम न दें तो वह तनख़्वाह पूरे माह की पाने के मुस्तहिक़ शरअ़न हैं या नहीं?

जवाबः हासिले जवाब ये है कि "اَلْمَعْرُوْفُ کَالْمَشْرُوْطِ" पस जिस क़दर गै़र हाज़िरी मारूफ़ हो उसकी तनख़्वाह लेना दुरुस्त है और इमामत भी दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–89, बहवाला रद्दुलमुहतार किताबुलवक़्फ़ जिल्द–3 सफ़्हा–447)

ऐसा करना (यानी तनख़्वाह काटना) जाइज़ नहीं है और ये अम्र ख़िलाफ़े उर्फ़ व शरअ़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–374, बहवाला रद्दुलमुहतार किताबुलवक़्फ़ जिल्द–3 सफ़्हा–525)

इमाम की गै़र हाज़िरी का हुक्म

सवालः किसी शख़्स के काम की वजह से इमाम पाँच सात मरतबा हफ़्ता में गै़र हाज़िर रहा उसकी निस्बत

क्या हुक्म है?

जवाबः बेहतर ये है कि मुक़्तदियों की रज़ामंदी से ऐसा करे। मुक्तदियों की रज़ामंदी के बग़ैर ऐसा करना अच्छा नहीं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–133)

इमाम के एहातए मस्जिद में रहने का हुक्म

एहातए मस्जिद में इमाम व मुअज़्ज़िन के लिए कमरा बना हो तो उसमें इमाम और मुअज़्ज़िन का रहना दुरुस्त है, लेकिन बाल बच्चों के साथ रहने में उमूमन बेपर्दगी होती है, इस्तिन्जे की जगह अलग नहीं होती और बच्चों के शोर व शग़ब की वजह से नमाज़ियों को तकलीफ़ और हरज भी होगा। इसलिए ममनूअ़ होगा। अगर ये ख़राबियाँ न हों तो जाइज़ है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–6 सफ़्हा–95)

क्या इमाम एहातए मस्जिद में अपना काम कर सकता है

अगर कमरा का दरवाज़ा मस्जिद के उस हिस्से में न खुलता हो जो नमाज़ के लिए मख़सूस होता है, यानी ख़रीद व फ़रोख़्त करने वालों को मस्जिद में से न गुज़रना पड़े तो इमाम का ऐसा काम करना मुबाह है?

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–143)

मस्जिद यानी उस हिस्से में जो नमाज़ के लिए इस्तेमाल किया जाता है ख़रीद व फ़रोख़्त करना या कोई

ऐसा काम करना जिससे नमाज़ियों को तकलीफ़ हो या एहतेरामे मस्जिद के मुनाफ़ी हो, जाइज़ नहीं है। बाक़ी मस्जिद के एहाते में दूसरे हिस्से जो नमाज़ के लिए इस्तेमाल नहीं किए जाते उनमें ख़रीद व फ़रोख़्त जाइज़ है मगर मुतवल्ली की इजाज़त से होना चाहिए।

(कफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–167)

क्या इमाम चौबीस घन्टे का पाबंद है

सवालः इमाम व मुअ़ज़्ज़िन को मुक़ैयद कर देना कि चौबीस घन्टे आपको मस्जिद में हाज़िरी देना होगी। ये हुक्मरानी किस हद तक जाइज़ है?

जवाबः इमाम या मुअ़ज़्ज़िन क़ा मुतवल्ली से मुआ़हदा हो तो उसके मुताबिक़ अमल करना होगा, अगर मुआ़हदा नहीं है तो ऐसी पाबंदी ज़ुल्म व ज़्यादती है और नाजाइज़ है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–362)

एक वक़्त में दो जगह इमामत

जब एक शख़्स को मुआ़वज़ा मुक़र्रर कर के एक मस्जिद की इमामत के लिए रखा हो तो उस मस्जिद की इमामत उसके ज़िम्मा ज़रूरी है। उस मस्जिद को छोड़ कर किसी दूसरी मस्जिद में इमामत के लिए जाना नाजाइज़ है, अगर उस मस्जिद को छोड़ कर किसी दूसरी मस्जिद में इमामत करेगा तो वह उस मुआ़वज़ा का

मुस्तहिक़ न होगा। अगर इमाम मज़कूर एक ही नमाज़, दो मरतबा दो मसिज्दों में पढ़ाता है तो दूसरी नमाज़ दुरुस्त नहीं होगी। दूसरी मस्जिद के मुक़्तदियों की फ़र्ज़ नमाज़ इस तरह साकित नहीं होगी, बल्कि उनके ज़िम्मे बदस्तूर उसकी अदाएगी बाक़ी रहेगी।

चूँकि इमाम की अव्वल मरतबा फ़र्ज़ नमाज़ अदा होगी दूसरी मरतबा इमाम की नफ़्ल नमाज़ होगी और मुक़्तदियों की फ़र्ज़ और ये जाइज़ नहीं।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–79)

एक इमाम का दो जगह इमामत करना

सवालः जो इमाम तीन वक़्त की नमाज़ एक मस्जिद में पढ़ाए और दो वक़्त की दूसरी मस्जिद में तो जाइज़ है या नहीं?

जवाबः कोई वजह मुमानअत की इसमें नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–169)

एक मस्जिद में दो इमामों की इमामत

अगर दो इमाम इस लिए हों कि एक इमाम चंद लोगों को नमाज़ पढ़ाए और दूसरा इमाम वही नमाज़ दूसरे लोगों को पढ़ाए तो ये मकरूह है और अगर मनशा ये है कि दो इमाम रख लिए जाएँ, कभी एक पढ़ाए और कभी बज़रूरत दूसरा तो गुंजाईश है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–369, बहवाला

आलमगीरी बाब फ़िलअज़ान जिल्द–1 सफ़्हा–51)

क्या एक शख़्स इमामत व अज़ान अंजाम दे सकता है

सवालः अज़ान व इमामत अगर एक ही शख़्स करे तो जाइज़ है या नहीं?

जवाबः एक ही शख़्स अज़ान कहे और इमामत करे, ये शरीअ़त में दुरुस्त है इसमें सवाब ज़्यादा है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–95, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलअज़ान जिल्ज–1 सफ़्हा–372)

इमाम मुतवफ़्फ़ा के यतीम बच्चों की इमदाद

सवालः इमाम साहब का इंतिक़ाल हो गया, चंद बच्चे छोड़े, अब जो वज़ीफ़ा उनके बाप को बैतुलमाल से या अह्ले मुहल्ला की जानिब से मिलता था उस वज़ीफ़े के शरअ़न हक़दार उसके यतीम बच्चे हैं या नहीं?

जवाबः बैतुलमाल का यही हुक्म है जो मज़कूर हुआ है, उन बच्चों की उनके बाप के वज़ीफ़ा से इमदाद की जाए और अह्ले मुहल्ला अपने चंदा से जो कुछ इमाम मरहूम को देते थे उन यतीम बच्चों को भी दें और बक़दरे ज़रूरत उनकी मदद करें और हर तरह देख भाल रखें। अगरचे उनको जदीद इमाम की भी ज़रूरत होगी और उसकी तनख़्वाह का ग़ालिबन इंतिज़ाम करना होगा और अगर कोई इमाम बिला तनख़्वाह न मिले तब भी यतीम बच्चों की इमदाद को वह अपने ऊपर लाज़िम और

ज़रूरी समझें और सवाबे उख़रवी हासिल करें।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–372, बहवाला मिश्कात बाबुलशफ़क़ति सफ़्हा–423)

क्या इमामत में ज़ात का लिहाज़ है

इमामत के लिए ज़ात पात का कोई लिहाज़ नहीं, अफ़ज़लीयत का लिहाज़ है, और ये कि जमाअ़त में कमी न आए और नमाज़ी मुनतशिर न हों।

पस नमाज़ियों में जो अफ़ज़ल हो वह इमामत का हक़दार है, ताकि नमाज़ सहीह और कामिल अदा हो जाए और मुक़्तदी ज़्यादा से ज़्यादा नमाज़ में शरीक हों, पस किसी ऐसी क़ौम का आदमी जिसको लोग ज़लील और रज़ील समझते हैं अगर इल्म व तक़्वा में सब से बढ़ा हुआ है और उस बिना पर लोग उसका अदब करते हैं तो बिला शुब्हा उसके पीछे नमाज़ दुरुस्त है किसी क़िस्म की कोई कराहत नहीं, अलबत्ता अगर उसके अफ़आ़ल ऐसे हैं जिनकी बिना पर वह लोगों की निगाह में ज़लील और बे–वक़अ़त है तो उस बिना पर उसको इमाम बनाना मकरूह है कि लोग जब उसकी इज़्ज़त और वक़अ़त नहीं करते तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ना भी पसंद न करेंगे और जमाअ़त में कमी हो जाएगी।

फ़तावा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–83 में है: "अफ़ज़ल को इमाम बनाने में ये भी मसलिहत है कि लोग उसको पसंद कर के शिरकत करेंगे और जमाअ़त बढ़ेगी।"

इमाम अफ़ज़ल वह है जो शरई अहकाम से सब से

ज़्यादा वाकिफ़ हो, कुरआन मजीद तजवीद और सेहत के साथ पढ़ता हो, परहेज़गार हो, सहीह उलअक़ीदा और आला हसब वाला हो, हसीन व जमील और मुअ़म्मर हो, नसबी शराफ़त, ख़ुश अख़लाक़ और पाकीज़ा लिबास वाला इमामत का ज़्यादा हक़दार है कि लोग रग़बत से उसकी इक़तिदाए करें और जमाअ़त बड़ी हो, हदीस शरीफ़ में है कि अगर तुम्हें ये पसंद है कि तुम्हारी नमाज़ें इनदल्लाह मक़बूल हों तो चाहिए कि उलमा को इमाम बनाएँ और एक रिवायत में ये है कि जो तुम में सब से ज़्यादा नेक हो, वह तुम्हारी इमामत करे, क्योंकि वह तुम्हारे और तुम्हारे रब के दरमियान क़ासिद हैं।

(शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–86)

लिहाज़ा अफ़ज़ल को इमाम बनाया जाए और उससे ऐसा कोई काम न लिया जाए जिससे लोग उसे हक़ीर समझें, हाँ अगर किसी जगह अफ़ज़ल इमाम न हो बल्कि फ़ासिक़ हो तो जमाअ़त न छोड़े, जमाअ़त की फ़ज़ीलत और अहम्मीयत के पेशे नज़र तन्हा नमाज़ पढ़ने से ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ना बेहतर है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–28)

जिसका एक बाजू कटा हुआ हो उसकी इमामत

सवाल: जिस शख़्स के एक बाजू न हो और वह नाबीना भी हो, उसकी इमामत जाइज़ है या नहीं?

जवाब: नमाज़ उसके पीछे हो जाती है, लेकिन दूसरा इमाम जो बीन हो और उसके दोनों हाथ पैर सहीह व

सालिम हों और मसाइले नमाज़ से वाक़िफ़ हो और नेक शख़्स हो बेहतर है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–165, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–523 बाबुलइमामत)

छोटे हाथ वाले की इमामत

सवालः मेरा दाहिना हाथ कान की लौ तक नहीं जाता ऐसी हालत में मेरी इमामत (नमाज़े पंजगाना व जुमा वग़ैरा में) जाइज़ है या नहीं?

जवाबः इस सूरत में साइल की इमामत नमाज़े पंजगाना व जुमा वग़ैरह में बिला कराहत जाइज़ है कोई वजहे कराहत, इमामत की नहीं है, क्योंकि फ़ुक़हा (रह.) ने जो लिखा है कि अंगूठों को तहरीमा के वक़्त कानों की लौ से लगा दे तो वह अस्ल में मुहाज़ात हासिल करने के लिए है जैसा कि तहक़ीक़े फ़ुक़हा और रिवायात से ज़ाहिर होता है।

पस अगर उज़्र की वजह से कान की लौ का छूना न हो सके और अंगूठों की कानों से मुहाज़ात हासिल हो जाए तो ये सुन्नत अदा हो जाएगी, अहनाफ़ (रह.) के नज़दीक अंगूठों को कानों के मुहाज़ी (मुक़ाबिल) कर दे, पस अगर किसी उज़्र की वजह से, हाथ कानों की लौ तक न पहुंचे और मुहाज़ात हासिल हो जाए तो ये सुन्नत अदा हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–202, बहावला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–94)

हाथ कटे हुए शख़्स की इमामत

सवालः (1) मक़्तूउलयद (हाथ कटे हुए शख़्स) की इमामत का क्या हुक्म है?

(2) अरसए दराज़ तक उसके पीछे नमाज़ पढ़ते रहे हैं बाद में कुछ खुदग़रज़ लोग किसी वजह से मक़्तूउलयद होने का इलज़ाम देकर ख़ुद भी नमाज़ नहीं पढ़ते और दूसरों को भी उसके पीछे नमाज़ पढ़ने को मना करते हैं ये कहाँ तक दुरुस्त है?

जवाबः (1) अगर वह शख़्स तहारत और पाकी ठीक तौर पर कर लेता है और उसका एहतिमाम रखता है तो उसकी इमामत शरअ़न दुरुस्त है, वरना मकरूह है, सहीह और सालिम की इमामत बहरहाल ऊला है।

(2) इख़्तिलाफ़ से बचना चाहिए, अगर उसके पीछे नमाज़ पढ़ने से कोई शरई उज़्र मानेअ़ हो तो इत्तिफ़ाक़ के साथ किसी दूसरे शख़्स को इमाम मुक़र्रर कर लिया जाए, महज़ ख़ुदग़र्ज़ी की बिना पर इख़्तिलाफ़ पैदा करना गुनाह है। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–102, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–587)

जिसकी टाँगें कटी हुई हों उसकी इमामत

सवालः एक शख़्स की दोनों टाँगें घुटनों तक कटी हुई हैं, जिसकी वजह से रुकूअ़ व जलसा कमाहक़्क़ह़ू अदा नहीं होता अलबत्ता क़ुरआन शरीफ़ सहीह पढ़ता है,

नमाज़ रोज़ा का पाबंद है उसकी इमामत सहीह है या नहीं है?

जवाब: नमाज़ उसके पीछ सहीह है, लेकिन बेहतर ये है कि दूसरा इमाम मुक़र्रर क्या जाए, जिसके हाथ पैर सहीह व सालिम हों और वह आलिम व सालेह मुत्तसिफ़ बसिफ़ाते इमामत हो। (रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–525) में है मक़्तूउर्रिजलैन (पैर कटे हुए) की इमामत बदरजए औला मकरूह है, अगरचे उसके पीछे नमाज़ हो जाती है मगर बेहतर ये है कि दूसरा इमाम मुक़र्रर करें।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–208)

जो सज्दा पर कुदरत न रखता हो उसकी इमामत

सवाल: जो शख़्स सज्दा से आजिज़ हो और बाक़ी तमाम अरकान, रुकूअ और क़ौमा वग़ैरा बख़ूबी अदा करता हो और खड़े होकर नमाज़ पढ़ता हो उसकी इमामत दुरुस्त है या नहीं?

जवाब: उसके पीछे नमाज़ उन लोगों की जो सज्दा करते हैं सहीह नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–157)

काने, लूले, चुग़लख़ोर और कोढ़ी की इमामत

यक चश्म (काने) के पीछे नमाज़ मकरूह नहीं है और अंधा अगर नजास्त से न बचता हो और ग़ैर मोहतात हो और सब से बड़ा आलिम न हो तो उसके पीछे नमाज़

मकरूह है और अगर वह लोगों में सब से ज़्यादा आलिम हो तो मकरूह नहीं है।

जुज़ामी, कोढ़ी, लूले और चुग़लख़ोर के पछे नमाज़ मकरूह है और जिसकी मस्तूरात परदा न करती हों और वह उनको मना न करे और उनकी बेपरदगी से राज़ी हो तो उसके पीछे भी नमाज़ मकरूह है, और अगर वह अपने घर वालों को बेपरदा फिरने से मना करे और उसको बुरा समझे तो फिर उसके पीछे नमाज़, बिला कराहत सहीह है और झूट बोलने वाले के पीछे भी नमाज़ मकरूह है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–195, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–523)

बरस वाले की इमामत

सवालः एक इमाम साहब दीनियात पढ़े हुए हैं। बाज़ हज़रात ने उनके पीछे नमाज़ पढ़नी इसलिए छोड़ दी है कि उनके बदन पर चंद दाने बरस के हैं, जिनका वह एलाज करते रहते हैं। उनके पीछे नमाज़ जाइज़ है या मकरूह?

जवाबः उन इमाम साहब के पीछे नमाज़ बिला कराहत दुरुस्त है, क्योंकि फ़ुक़हा ने इस हालत में मबरूस के पीछे नमाज़ पढ़ने को मकरूह बकराहत तंज़ीही लिखा है। जबकि बरस उसका ज़ाहिर व बाहर हो, यानी ज़्यादा-निशानात बरस के हों जिसकी वजह से मुक्तादियों को तनफ़्फ़ुर हो, और अगर बरस ज़ाहिर न हो और न मुक्तदियों को तनफ़्फ़ुर हो तो फिर उसकी इमामत में कोई कराहत

नहीं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–256, बहवाला बाबुलइमामत, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–525)

मबरूस (बरस वाले) के पीछे नमाज़ हो जाती है। अलबत्ता बरस इस हद तक ज़ाहिर हो जाए कि मुक़्तदियों को नफ़रत और कराहत पैदा हो तो उसकी इमामत मकरूह है। हौज़ में वुज़ू कर सकता है, क्योंकि बरस में ज़ाहिरी तौर पर कोई नजासत नहीं होती, सिर्फ़ जिल्द पर धब्बे होते हैं और मस्जिद के बरतन भी वुज़ू के लिए इस्तेमाल कर सकता है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–86)

बैठ कर पढ़ाने वाले की इमामत

खड़े होने वाले की नमाज़ बैठने वाले के पीछे दुरुस्त है जैसा कि आँहज़रत (स.अ.व.) ने (मरज़ुलवफ़ात में) बैठ कर इमामत फ़रमाई।

पस अगर इमाम इस क़दर माज़ूर हो कि खड़ा नहीं हो सकता, तो उसको बैठ कर नमाज़ पढ़ाना दुरुस्त है और उसके पीछे खड़े होने वालों की नमाज़ दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–216, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–551)

गंजे की इमामत

सवालः गंजे के पीछे नमाज़ दुरुस्त है या नहीं और

गंजे के पीछे नमाज़ मकरूह होने की कोई हदीस है या नही?

जवाबः गंजे के पीछे नमाज़ जाइज़ है, जबकि वह अच्छा हो गया हो, और ज़ख़्म उसके सर पर नहीं रहा तो नमाज़ उसके पीछे बिला कराहत दुरुस्त है।

गंजे के पीछे नमाज़ मकरूह होने की कोई हदीस नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़हा–301)

नाबीना की इमामत का हुक्म

फुक़हाए किराम ने ऐसे नाबीना की इमामत जो ग़ैर मोहतात हो और नजासत से न बचता हो मकरूहे तंज़ीही क़रार दी है, लेकिन ये हुक्म आम नहीं है, बल्कि ग़ैर मोहतात के साथ ख़ास है, लिहाज़ा जो नाबीना मोहतात हो और नजासत से बचने का पूरा एहतिमाम करता हो और पाक व साफ़ रहता हो उसकी इमामत को बिला कराहत जाइज़ लिखा है।

हज़रत आएशा सिद्दीक़ा (रज़ि.) का ब्यान है कि नबी करीम (स.अ.व.) ने ग़ज़वए तबूक में तशरीफ़ ले जाने के मौक़ा पर हज़रत अब्दुल्लाह इब्न उम्मे मकतुम (रज़ि.) को जो नाबीना थे मस्जिदे नबवी में नमाज़ पढ़ाने के लिए अपना क़ाइम मक़ाम बनाया था। इसी तरह हज़रत अब्दुल्लाह इब्न उमैर (रज़ि.) बावजूद नाबीना होने के बनी हतमा के इमाम थे, वह फ़रमाते हैं कि मैं रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के मुबारक ज़माने में बनी हतमा का इमाम था। हालाँकि मैं नाबीना था।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–363)

नाबीना की इक़तिदा मकरूहे तंज़ीही है, अलबत्ता अगर ये इमाम नाबीना सब से अफ़ज़ल हो और मसाइल से ज़्यादा वाक़िफ़ हो तो कोई कराहत नहीं, बल्कि उसको इमाम बनाना अफ़ज़ल है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–260)

साहिबे हिदाया ने नाबीना की इमामत मकरूह होने की दो वजह लिखी हैं: एक ये कि वह नजासत से न बचता हो, दूसरे ये कि लोगों को उसकी इमामत से तनफ़्फ़ुर हो, पस अगर ये दोनों वजहें न हों तो इमामत नाबीना की बिला कराहत दुरुस्त है, अब्दुल्लाह इब्न उम्मे मकतूम और अतबान (रज़ि.) को रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने इमाम मुक़र्रर फ़रमाया था।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–137)

दाढ़ी कटाने वाले की इमामत

सवाल: दाढ़ी कटाने या मुँडवाने वाले के पीछे नमाज़ पढ़ना कैसा है?

जवाब: दाढ़ी एक मुश्त से कम करना हराम है, बल्कि ये दूसरे गुनाहों से भी बदतर है, इसलिए कि इसके एलानिया होने की वजह से इसमें दीने इस्लाम की खुली तौहीन है और अल्लाह और रसूलुल्लाह (स.अ.व.) से बग़ावत का इज़हार व ऐलान है। इसलिए फ़ुक़हा (रह.) ने फ़ैसला तहरीर फ़रमाया है कि जो शख़्स रमज़ान में एलानिया खाए पीये वह वाजिबुलक़त्ल है, क्योंकि वह खुले

तौर पर शरीअ़त की मुख़ालफ़त कर रहा है आप का इरशाद है: "मेरी उम्मत लाइक़े अफ़्व है मगर एलानिया गुनाह करने वाले मआफ़ी के लाइक़ नहीं।"

दूसरा फ़र्क़ ये है कि दूसरे गुनाह किसी ख़ास वक़्त में होते हैं, मगर दाढ़ी कटाने का गुनाह हर वक़्त साथ लगा रहता है। सो रहा हो तो भी गुनाह साथ है। हत्ता कि नमाज़ वग़ैरा इबादत में मशग़ूल होने की हालत में भी इस गुनाह में मुब्तला है, क़ौमे लूत को अज़ाब देने की एक वजह दाढ़ी कटाना भी था। (दुर्रेमनसूर) ग़रज़ दाढ़ी कटाने या मुंडवाने वाला फ़ासिक़ है और फ़ासिक़ की इमामत मकरूह तहरीमी है। इसलिए ऐसे शख़्स को इमाम बनाना जाइज़ नहीं। अगर कोई ऐसा शख़्स जबरन इमाम बन गया, या मस्जिद की मुनतज़िमा कमेटी ने बना दिया और हटाने पर क़ुदरत न हो तो किसी दूसरी मस्जिद में सालेह इमाम तलाश करे, अगर न मिले तो जमाअ़त न छोड़े, बल्कि फ़ासिक़ के पीछे ही नमाज़ पढ़ ले कि उसका वबाल व अज़ाब मस्जिद के मुनतज़िमीन पर होगा।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–260)

अगर दूसरा इमाम इससे बेहतर मिल सकता है तो उसको इमाम न बनाया जाए। एक मुश्त दाढ़ी रखने के लिए उससे कहा जाए और वह दाढ़ी बढ़ा ले तो ठीक है। (किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–87)

इमदादुलमुफ़्तीय्यीन में दाढ़ी मुंडवाने या कटवाने वाले के मुतअ़ल्लिक़ लिखा है कि वह शख़्स फ़ासिक़ और सख़्त गुनहगार है, उसको इमाम बनाना जाइज़ नहीं

क्योंकि उसके पीछे नमाज़ मकरूहे तहरीमी है और वह वाजिबुलएहानत है, उसको इमाम बनाने में उसकी ताज़ीम है इसलिए उसको इमाम बनाना जाइज़ नहीं है।

(इमदादुलमुफ़्तीय्यीन जिल्द–1 सफ़्हा–261, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–276 बाबुलइमामत)

दाढ़ी मुंड़वाने वाले की इमामत मकरूह है हाँ सब मुक़्तदी दाढ़ी मुंडे हों तो दाढ़ी मुंडवाने वाला इमाम बन जाए। (किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–57)

दाढ़ी कटवाने से ताइब की इमामत

सवालः एक शख़्स दाढ़ी मुंडवाता है, उसने सच्चे दिल से तौबा करली है और उसने दाढ़ी रखने का अज़्म कर लिया है, क्या इस हालत में जबकि वह तौबा कर चुका है मगर दाढ़ी नहीं है और न जल्दी दाढ़ी उगाना उसके बस की बात है, आया उसके इमाम बनने में क़राहत होगी?

जवाबः तौबा के बावजूद ऐसे शख़्स की इमामत दो वजह से मकरूह है, एक ये उस पर अभी तक असरे सलाह नुमायाँ नहीं हुआ। ये फ़ैसला नहीं किया जा सकता कि आइंदा उस कबीरा से एहतिराज़ का एहतिमाम करेगा या नहीं?

दूसरी वजह ये कि जिन लोगों को तौबा का इल्म नहीं उनका मुग़ालता होगा और वह यही समझेंगे कि फ़ासिक़ नमाज़ पढ़ा रहा है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–262)

उसको इमाम बनाना मकरूह है, अलबत्ता अगर वह ख़ुद इमाम बन कर नमाज़ पढ़ा दे तो नमाज़ हो जाएगी गो वह सवाब न मिले जो मुत्तक़ी इमाम के पीछे पढ़ने से मिलता है। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–43)

ग़ैर माजूर की इक़्तिदा

सवालः ग़ैर माजूर की नमाज़, माजूर के पीछे दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः दुरुस्त नहीं, (अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–264, बहवाला रद्दुलमुहतार सफ़्हा–542)

मसह करने वाले की इमामत

सवालः उज़्र की वजह से किसी अज़्व पर मसह करने वाले के पीछे आज़ा को धोने वाला नमाज़ पढ़ सकता है या नहीं?

जवाबः पढ़ सकता है।[1]

(असनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–264)

बवासीर में मुब्तला की इमामत

सवालः एक शख़्स को ख़ूनी बवासीर का मरज़ है

---

(1) क्योंकि ये माजूरे शरई के हुक्म में नहीं।

وصح اقتداء متوضیء بمتیمم و غاسل بماسح ولوعلی جبیرة الخ

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–396 बाबुलइमामत)

और हर वक़्त उसके जारी रहने का ख़ौफ़ रहता है। ऐसे शख़्स की इमामत बावजूद तनदुरुस्त इमाम के दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः ख़ून जारी होने के ख़ौफ़ से वह शख़्स माज़ूर शरअ़न नहीं हो सकता। शरअ़न माज़ूर उस वक़्त होता है कि उसको तमाम वक़्त नमाज़ में इतना मौक़ा न मिले कि वुज़ू कर के बग़ैर इस मरज़ के नमाज़ पढ़ सके। जबकि वह अभी माज़ूर नहीं हुआ, इमामत उसकी दुरुस्त है, कुछ कराहत उसकी इस वजह से इमामत में नहीं है।

जिस वक़्त वह माज़ूर होगा उस वक़्त वह इमाम तनदरुस्त नहीं हो सकता, उस वक़्त उसकी इमामत उज़्र की वजह से बिल्कुल नाजाइज़ होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–103, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–203 व जिल्द–1 सफ़्हा–389)

सलसलुलबौल के शक में मुब्तला की इमामत

सवालः मरज़ सलसलुलबौल तो नहीं है मगर अज़्व दबाने से पेशाब का क़तरा निकल आता है, और बाज़ वक़्त ऐसा ख़्याल होता है कि पेशाब के क़तरे ने अपनी जगह से ख़ुरूज किया मगर देखने से ज़ाहिर नहीं होता, ऐसा शख़्स इमामत कर सकता है या नहीं?

जवाबः जिस हालत में ख़ुरूजे क़तरा न हो इमाम हो सकता है, वहम और शक का एतेबार नहीं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–105, बहवाला अल अशबाह वन्नज़ाइर सफ़्हा–75)

रअ़शा वाले की इमामत

जिसके हाथ और पाँव में रअ़शा हो उसके पीछे नमाज़ बिला कराहत दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–104)

कमज़ोर निगाह वाले की इमामत

सवाल: एक साहब चालीस साल से इमामत करते हैं लेकिन अब तीन चार साल से उनकी नज़र में फ़र्क़ आ गया है, लेकिन पाकी व नापाकी को ख़ुद देख सकते हैं। लोग एतेराज़ करते हैं कि नमाज़ मकरूह होती है सहीह किया है?

जवाब: सूरते मज़कूरा में इमामे मज़कूर के पीछे नमाज़, बिला कराहत सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–194)

हज्जाम की इमामत

हज्जाम (बाल काटने वाला) अगर नमाज़ के मसाइल से वाक़िफ़ और दीनदार हो तो इमाम बन सकता है लेकिन अगर वह लोगों की दाढ़ी मूँडता हो तो फ़ासिक़ होगा। उसके पीछे नमाज़ मकरूह होगी और अगर वह जाहिल हो और दीनदार भी न हो और हजामत का पेशा करता हो तो उसको नमाज़ नहीं पढ़ाना चाहिए। लेकिन

अगर इमाम की ग़ैर मौजूदगी में कोई शख़्स उससे अफ़ज़ल न हो तो मजबूरन उस वक़्त उसके पीछे नमाज़ पढ़ना, तन्हा नमाज़ पढ़ने से बेहतर है, इसलिए कि जमाअ़त की अहमियत और ताकीद बहुत ज़्यादा है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–357)

हकले की इमामत

सवालः अहक़र इमामे मस्जिद है, कुछ मुद्दत से मेरी ज़बान में लुकनत आ गई है और वह भी सिर्फ़ अलहम्दुलिल्लाह के अलिफ़ लाम पर, जब सूरए फ़ातिहा शुरू करता हूँ तो आ आ आ हो कर हमज़ा की तकरार हो जाती है और कुछ देर बाद अलहम्दुलिल्लाह का तलफ़्फ़ुज़ होता है उसके बाद बाक़ी तिलावत साफ़ होती है शरई हुक्म क्या है?

जवाबः इस बारे में ज़्यादा बेहतर बात यही है कि आप की इमामत में नमाज़ सहीह न होगी और क़ाबिले इआ़दा होगी और अलफ़ाज़ आ, आ, आ ज़्यादा क़बीह और लह्ने जली है।

आप नमाज़ पढ़ाने की जुर्रअ़त न फ़रमाएँ। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–352, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–544)

इस मस्अला की तफ़सील किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबुलअरबआ़ में इस तरह है–

सेहते इमामत की शराइत में ये भी है कि इमाम की ज़बान (तलफ़्फ़ुज़) ठीक हो एक हर्फ़ के बजाए कोई और

हर्फ़ न अदा हो जाता हो। मसलन "र" के बजाए "ग़" "स" के "त" "ज़ाल" के बजाए "ज़े" या "श" की जगह "स" वग़ैरा हुरूफ़े हिजा की आवाज़ निकले। इसी वजह से ऐसे शख़्स को (अस्सग़) कहते हैं, क्योंकि (अस्सग़) के लुग़वी मआना ज़बान का एक हर्फ़ से दूसरे हर्फ़ की जानिब मुड़ जाना या ऐसी ही कैफ़ियत का लाहिक़ होना है।

ऐसे शख़्स पर वाजिब है कि अपने अलफ़ाज़ को दुरुस्त करे और जहाँ तक हो सके हर्फ़ के तलफ़्फ़ुज़ को सहीह तौर पर अदा करने की कोशिश करे, अगर फिर भी क़ासिर रहे तो उसके लिए अपने ही जैसों के अलावा दूसरों का इमाम बनना दुरुस्त नहीं है। अगर किसी में ये ख़ामी है और उसने अपनी ज़बान की इसलाह की कोशिश न की तो उसकी नमाज़ भी सिरे से बातिल होगी। इमाम बनने का तो ज़िक्र ही क्या?

इस मस्अले में "हकले" के मुतअ़ल्लिक़ जो कुछ ब्यान किया गया है वही हुक्म उस शख़्स का है जो ग़लत तरीक़े से एक हर्फ़ को दूसरे हर्फ़ में मुदग़म कर देता हो मसलन "स" को "त" से बदल कर "स" के बाद जो हर्फ़ "त" है उसमें मिला दे, जैसे लफ़्ज़ "मुस्तक़ीम" को सहीह तौर पर अदा करने के बजाए "मुत्तक़ीम" कहे। ऐसे नमाज़ी के लिए वाजिब है कि वह अपनी ज़बान की इस्लाह में कोशाँ हो। अगर (इसलाह में) नाकामी हो तो उसके लिए अपने जैसों का इमाम बनना सहीह होगा, अगर (इसलाह की कोशिश में) कोताही की तो उसकी नमाज़ भी बातिल और इमाम बनना भी बातिल।

एक और ख़ामी है जिसे (फ़ा फ़ा) कहते हैं, यानी

बोलने में बार बार हर्फ़ ''फ़'' की आवाज़ निकले या ''तमताम'' हो यानी बार बार ''त'' का तलफ़्फ़ुज़ करना, तो ऐसे शख़्स की इमामत का वही हुक्म है जो हकले का है, यानी उस जैसे शख़्स का मज़कूरा बाला शराइत न होने पर इमाम बनना मकरूह है। (किताबुल फ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ़ जिल्द–1 सफ़्हा–657)

झुकी कमर वाले की इमामत

सेहते इमामत के लिए शर्त है कि इमाम की कमर इतनी न झुकी हुई हो जितनी रुकूअ़ की हालत में होती है अगर इमाम की कमर इतनी झुकी हुई हो कि वह रुकूअ़ में मालूम हो तो फिर तंदुरुस्त आदमी का उसके पीछे नमाज़ पढ़ना सहीह नहीं है।

हाँ इमाम और मुक़्तदी दोनों ऐसे ही हों तो फिर उसकी इमामत दुरुस्त है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–673)

तोतले की इमामत

सवालः एक तोतला आदमी बे पढ़े लिखे मुक़्तदियों को नमाज़ पढ़ा रहा था। एक रकअ़त के बाद एक आलिम साहब नमाज़ के लिए आए वह जमाअ़त में शरीक हों या न हों?

जवाबः वह आलिम जो बाद में आया, अगर अपनी नमाज़ अलाहिदा पढ़े तो उसकी नमाज़ भी सहीह होगी और जो उम्मी पहले से नमाज़ पढ़ रहे थे उनकी भी

नमाज़ सहीह होगी, अगर वह आलिम उस तोतले के पीछे इक़्तिदा करेगा तो फिर किसी की भी नमाज़ सहीह न होगी, न उस आलिम की और न उन उम्मियों की जो पहले से पढ़ रहे थे।

(फ़तावा दारुलउलूम ज़िल्द–3 सफ़्हा–112, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–525)

तोतला बाज़ हरफ़ों के अदा करने पर क़ादिर नहीं इसलिए उसकी इमामत जाइज़ नहीं, मगर अपनी तरह के तोतलों का उस वक़्त इमाम बन सकता है जबकि क़ौम में कोई ऐसा शख़्स हाज़िर न हो जो उन हरफ़ों को अदा कर सके और अगर क़ौम में कोई शख़्स ऐसा मौजूद हो तो तोतले इमाम और सारी क़ौम की नमाज़ फ़ासिद होगी।

(फ़तावा हिन्दीया जिल्द–1 सफ़्हा–134)

लंगड़े की इमामत

लंगड़े की इमामत जाइज़ है मगर ऐसे शख़्स से उमूमन तबई इन्क़िबाज़ होता है। इसलिए मकरूहे तंज़ीही है, हाँ अगर वह साहबे इल्म व तक़्वा हो और उससे लोगों को इन्क़िबाज़ न हो तो कराहते तंज़ीही भी नहीं।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–318, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–525)

फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–177 में लिखा है कि ऐसा लंगड़ा जो पूरे तौर पर खड़ा न हो सकता हो। उसकी इमामत मकरूहे तंज़ीही है, अगर सहीह व सालिम शख़्स मसाइले नमाज़ से वाक़िफ़ वहाँ मौजूद हो तो फिर

वही औला है, अगर दूसरा कोई शख़्स ऐसा मौजूद न हो जो नमाज़ के मसाइल से वाक़िफ़ हो और ये लंगड़ा उनसे वाक़िफ़ हो तो फिर इमामत के लिए वही अफ़ज़ल है।

बहरे की इमामत

सवालः जो शख़्स बहरा हो और बिल्कुल न सुनता हो उसकी इमामत कैसी है?

जवाबः बहरा की इमामत दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जल्द–3 सफ़्हा–182)

नमाज़ में सोने वाले की इमामत

नमाज़ में सोने से नमाज़ फ़ासिद नहीं होती और नमाज़ में कुछ ख़लल नहीं आता। अलबत्ता अगर कोई ग़लती क़िराअत में ऐसी करे जिससे मअ़ना बदल जाएँ और वह ग़लती मुफ़सिदे नमाज़ हो तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। मगर इसमें सोने वाला और ग़ैर सोने वाला बराबर है।

तावीज़ गंडा करने वाले की इमामत

चूंकि आयाते क़ुरआनिया और अदईया मासूरा से तावीज़ गंडा करना दुरुस्त है। इसलिए ऐसा करने वाले की इमामत में कुछ कराहत नहीं, अलबत्ता इसमें झूट और इफ़्तिरा परदाज़ी की ख़सलत मूजिबे फ़िस्क़ और मासियत है और ऐसे शख़्स के पीछे नमाज़ मकरूह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–187, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–523)

ग़ैर मख़्तून की इमामत

सवालः बग़ैर ख़तना हुए शख़्स के पीछ नमाज़ पढ़ना शरअ़न कैसा है?

जवाबः ख़तना सुन्नत है, जो शख़्स बिला उज़्र उसको छोड़ दे वह तारिके सुन्नत है, अगर बावजूद कुदरत व वुसअ़त के बदन को गुस्ल व इस्तिन्जा कर के पाक नहीं रखता तब उसको इमाम हरगिज़ न बनाया जाए और अगर पाक रखता है तो फिर उसकी इमामत दुरुस्त है, नमाज़ उसके पीछे हो जाएगी। अगरचे इस तारिके सुन्नत के मुक़ाबिले में आलिमे सुन्नत की इमामत मुक़द्दम है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–98)

बशर्तेकि वह इत्तिफ़ाक़ी तौर पर ग़ैर मख़्तून रह गया हो, और ख़तना के सुन्नत होने का क़ाइल हो।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–44)

माज़ूर की इमामत

ताहिर (पाक शख़्स) को माज़ूर की इक़्तिदा किसी तरह जाइज़ नहीं, हाँ माज़ूर को ताहिर की इक़्तिदा जाइज़ है और एक माज़ूर की इक़्तिदा दूसरे माज़ूर को जाइज़ है बशर्तेकि दोनों एक ही उज़्र में मुब्तला हों, अगर दोनों का उज़्र अलाहिदा अलाहिदा है तो जाइज़ नहीं।

अगर इमाम शरई तौर पर माजूर नहीं है बल्कि इत्तिफ़ाक़िया तौर पर वह उज़्र कभी हो जाया करता है तो फिर उसकी इमामत दुरुस्त है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–100)

नामर्द की इमामत

सवालः (1) अगर कोई शख़्स किसी वजह से नामर्द हो जाए तो उसकी इक़्तिदा जाइज़ है या नहीं?

(2) शुरू पैदाईश ही से कोई शख़्स अगर नामर्द हो तो उसकी इक़्तिदा जाइज़ है या नहीं?

जवाबः (1) अगर कोई मानेअ़ न हो तो जाइज़ है।

(2) जाइज़ है बशर्तेकि ख़ुनसा न हो और ख़ुनसा की इमामत औरत के लिए जाइज़ है। मर्द के लिए नाजाइज़ है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–101)

तवाइफ़ ज़ादा की इमामत

सवालः एक हाफ़िज़ साहब हैं। ख़ुश इल्हान, नमाज़ रोज़ा के पाबंद और ख़लीक़ भी हैं। क़ुरआन शरीफ़ याद है लेकिन वलदुज़्ज़िना यानी एक तवाइफ़ के लड़के हैं क्या उनको इमाम बनाया जा सकता है। उनके पीछे फ़र्ज़ नमाज़ और तरावीह पढ़ना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः अगर ये हाफ़िज़ साहब सालेह और नेक और मुआशरत के लिहाज़ से महफ़ूज़ हैं तो उनके पीछे नमाज़ जाइज़ है, वलदुज़्ज़िना होना ऐसी सूरत में मूजिबे कराहत

नहीं। (किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–64)

हमल साक़ित कराने वाले की इमामत

सवाल: एक शख़्स ने कुंवारी लड़की से निकाह किया, दो माह बाद तशख़ीस कराई तो मालूम हुआ कि मनकूहा को पाँच छः माह का हमल हराम से है, तब उस हमल को बाईसे रुसवाई समझ कर क़स्दन साक़ित करा कर फिर दोबारा निकाह किया अब उसके पीछे नमाज़ जाइज़ है या नहीं?

जवाब: सूरते मसऊला में निकाह सहीह हो चुका था, हमल साक़ित करा कर दोबारा निकाह की ज़रूरत न थी अलबत्ता वज़्ए हमल से पहले सोहबत करना दुरुस्त न था। लेकिन अगर ये हमल निकाह करने वाले ही का हो तो उसके लिए वज़्ए हमल से पहले भी हमबिस्तरी दुरुस्त है, क़स्दन हमल को साक़ित करना, ऐसी सूरत में सख़्त गुनाह है, अगर बावजूद इल्म के ऐसा किया है तो तौबा करना लाज़िम है, अगर तौबा न करे तो उसको इमाम न बनाया जाए, बशर्तेकि दूसरा शख़्स इमामत का अह्ल हो, और जब ये सिद्क़े दिल से तौबा कर ले तो इमाम बनाने में भी कोई मुज़ाएक़ा नहीं है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–92)

गंडे दार नमाज़ पढ़ने वाले की इमामत

सवाल: ज़ैद को नमाज़ पढ़ने की आदत नहीं, मगर

वह इमामत करने की लियाक़त रखता है, तो अगर अह्ले मुहल्ला उसकी तनख़्वाह मुक़र्रर कर के उसको इमाम बना लें और वह इस लालच की वजह से इमाम बन जाए और नमाज़ का आदी हो जाए तो उसके पीछे नमाज़ पढ़नी जाइज़ है या नहीं?

अगर वह ख़ुद बग़ैर तनख़्वाह के इस नीयत से इमाम बन जाए कि लोग मेरी इज़्ज़त करेंगे और नमाज़ का आदी हो जाए तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः जब तक नमाज़ का आदी नहीं था फ़ासिक़ था तो उसकी नमाज़ मकरूहे तहरीमी थी, जब तौबा कर के नमाज़ का आदी हो गया तो उसकी इमामत जाइज़ होगी, कुछ तनख़्वाह मुक़र्रर कर के इमामत करे या बिला तनख़्वाह के दोनों हालतों में उसकी इमामत सहीह है।

रोहबानियत का सवाल तो वह अल्लाह तआला को मालूम है महज़ क़यास से उसकी नीयत को फ़ासिद कह कर उसकी इमामत को नाजाइज़ नहीं किया जा सकता।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–93)

नौमुस्लिमा के लड़के की इमामत

सवालः नौमुस्लिमा का लड़का शरई अहकाम से बख़ूबी वाक़िफ़ हो तो नमाज़ पढ़ा सकता है या नहीं?

जवाबः उसकी इमामत बिला कराहत सहीह है और जो शख़्स ये कहता है कि उसके पीछे नमाज़ जाइज़ नहीं, वह ग़लती पर है उसको मस्अला मालूम नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–203, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–520)

लुन्जे की इमामत

सवाल: ज़ैद का बायाँ हाथ, बाज़ू से कटा हुआ है, कुरआन मजीद के क़ारी हैं, सुन्नत के मुताबिक़ उनकी दाढ़ी है और इल्मे फ़िक़्ह में उनको वाक़िफ़ीयत है, क्या उनके पीछे नमाज़ हो सकती है या नहीं? अगर हो सकती है तो नमाज़ में कराहत है या नहीं?

जवाब: चूँकि इस क़िस्म के माज़ूर से तबअ़न नफ़रत होती है। नीज़ उसके लिए तहारते कामिला मुम्किन नहीं, इसलिए दूसरे सहीह इमाम की मौजूदगी में उसकी इमामत मकरूहे तंज़ीही है, अगर उससे ज़्यादा मुस्तहिक़्क़े इमामत कोई शख़्स मौजूद न हो तो कोई कराहत नहीं।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–269, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–525)

ख़ुन्सा की इमामत

सवाल: हिजड़े की इमामत दुरुस्त है या नहीं, और नमाज़ मुक़्तदियों की होगी या नहीं?

जब कि ये हिजड़ा मुत्तबेअ़ सुन्नत व शरीअ़त हो और नमाज़ी व दीनदार हो और दाढ़ी भी शरीअ़त के मुवाफ़िक़ हो।

जवाब: अगर उस ख़ुन्सा में मर्द की अलामतें ज़्यादा

हैं तो उसकी इमामत सहीह है और अगर ज़नाना अलामतें ज़्यादा या दोनों अलामतें बराबर हों तो उसका इमाम बनना सहीह नहीं, बल्कि हमजिन्स का भी इमाम नहीं बन सकता, अलबत्ता उसके पीछे औरतों की इक़्तिदा दुरुस्त है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–276, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–540)

ज़ेरे नाफ़ के बाल न बनाने वाले की इमामत

सवालः अगर कोई शख़्स मूए ज़रे नाफ़ बवज्हे कमज़ोरी के न बनाए उसके पीछे नमाज़ हो जाती है या नहीं?

जवाबः नमाज़ उसकी सहीह है और उसके पीछे नमाज़ हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–177)

अगर मअ़कूल उज़्र न हो तो हर जुमा को साफ़ करना चाहिए और चालीस दिन से ज़्यादा छोड़े रखना मकरूहे तहरीमी है।

(रद्दुलमुहतार किताबुलहज़र जिल्द–5 सफ़्हा–358)

पोपले की इमामत

सवालः जिसके मुंह में एक भी दाँत न हो, जिसकी वजह से हुरूफ़ की अदाएगी बराबर न हो, या जिसके पाँव की उंगलियाँ इधर उधर रहती हैं और अच्छा शख़्स मिल सकता है तो इमामत कैसी है?

जवाबः सब सूरतों में नमाज़ हो जाती है, लेकिन बेहतर ये है कि इमाम ऐसे शख़्स को बनाएँ जिससे मुक़्तदियों को नफ़रत न हो और वह इमामे सालेह नामज़ के मसाइल से वाक़िफ़ हो और कुरआन शरीफ़ अच्छा पढ़ता हो। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–1 सफ़्हा–122, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–520 बाबुलइमामत)

मसनूई दाँत वाले की इमामत

मसनूई दाँत वाले की इमामत दुरुस्त है, इसलिए दाँत लगवाना, फुक़हा ने दुरुस्त लिखा है, ख़्वाह चाँदी का ही क्यों न हो, बल्कि इमाम मुहम्मद (रह.) सोने का दाँत लगवाना भी दुरुस्त कहते हैं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–206, बहवाला रद्दुलमुहतार किताबुलहज़र जिल्द–5 सफ़्हा–318)

क़ातिल की इमामत

सवालः क़ातिल से क़िसास नहीं लिया गया, और न मक़्तूल के वारसा से ख़ून मआफ़ कराया गया, क़ातिल ने फ़क़त तौबा कर ली, और हक़्क़ुल एबादा अदा करने की ज़िम्मादारी उसके सर बाक़ी रही, जिसकी वजह से उसे फ़ासिक़ क़रार दिया जाएगा, या नहीं और उसके पीछे नमाज़ मकरूह होगी या नहीं?

जवाबः दुर्रेमुख़्तार में है कि क़ातिल की सिर्फ़ तौबा व इस्तिग़फ़ार काफ़ी नहीं है, जब तक मक़्तूल के वारिस

मआफ़ न कर दें। तफ़सील रद्दुलमुहतार बाबुलजिनायात जिल्द–1 सफ़हा–484 में मुलाहज़ा हो।

इससे इतनी बात मालूम हुई कि महज़ तौबा से क़त्ल का गुनाह मआफ़ न होगा और फ़ासिक़ रहेगा और नमाज़ उसके पीछे मकरूह होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम ज़िल्द–3 सफ़्हा–112)

औरतों का इमाम बनाना

सेहते इमाम के लिए एक शर्त (इमाम का) हक़ीक़ी मअनों में मर्द होना है, लिहाज़ा औरत और ख़ुन्सा मुश्किल (यानी ऐसा मुख़न्नस जिसकी जिन्स मुतअैयन न की जा सके) का इमाम बनना जबकि उसके पीछे मर्द मुक़्तदी हों, दुरुस्त नहीं है, लेकिन अगर औरतें मुक़्तदी हों तो उनकी इमामत के लिए मर्द होना शर्त नहीं है बल्कि अगर कोई औरत अपनी जैसी औरतों या मुख़न्नस की इमाम बने तो दुरुस्त है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–653)

इमाम के आक़िल होने की शर्त

सेहते इमाम की शराइत में से एक शर्त अक़्ल है लिहाज़ा फ़ातिरुलअक़्ल की इमामत, अगर उसको जुनून से इफ़ाक़ा नहीं होता तो दुरुस्त न होगी, अलबत्ता अगर उसकी हालत ऐसी है कि कभी इफ़ाक़ा हो जाता है और कभी जुनून लाहिक़ हो जाता है तो इफ़ाक़ा की हालत में उसकी इमामत सहीह हागी, और जुनून की हालत में

बिलइत्तिफ़ाक़ बातिल होगी।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–654)

ख़्वाँदा शख़्स का अनपढ़ की इक़्तिदा करना

इमामत के सहीह होने की एक शर्त यह है कि अगर मुक़्तदी ख़्वाँदा है तो इमाम भी ख़्वाँदा हो। नाख़्वाँदा शख़्स का ख़्वाँदा की इमामत करना सहीह नहीं है और (ख़्वाँदा होने की) शर्त ये है कि इमाम इतनी क़िराअत से वाक़िफ़ हो कि जिसके बग़ैर नमाज़ दुरुस्त नहीं हो सकती। पस अगर किसी गाँव का इमाम इतनी क़िराअत जानता है जिसके बग़ैर नमाज़ नहीं हो सकती तो तालीम याफ़्ता के लिए जाइज़ है कि उसके पीछे नमाज़ पढ़ ले, लेकिन अगर वह उम्मी (क़तअ़न नाख़्वाँदा) है तो उसके लिए अपने जैसे नाख़्वाँदा का इमाम बनने के अलावा किसी और का इमाम बनना दुरुस्त नहीं है। क़तअ़ नज़र इसके कि कोई ख़्वाँदा शख़्स उनके साथ शरीके जमाअ़त हो या न हो। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–654)

इमामत के लिए सेहतमंद होने की शर्त

सेहते इमामत के लिए एक शर्त ये है कि इमाम किसी माज़ूरी में मुब्तला न हो (यानी कोई ऐसा मरज़ लाहिक़ न हो जिससे उसका शुमार शरई माज़ूरी में हो) मसलन सलसले बौल, यानी पेशाब का न रुकना। दाइमी पेचिश में मुब्तला होना। रियाह का मुसलसल ख़ारिज होते रहना

और नक्सीर का जारी रहना वग़ैरा। पस अगर इमाम उनमें से किसी मरज़ में मुब्तला हो तो उसके लिए ऐसे अशख़ास की इमामत सहीह नहीं है जिनको ये मरज़ लाहिक़ न हो, लकिन अपने जैसे माज़ूरों की इमामत जाइज़ है बशर्तेकि वह भी इमाम वाले मरज़ में मुब्तला हों।

अगर अमराज़ मुख़्तलिफ़ हैं, मसलन एक पेशाब का मरीज़ है और दूसरे की नक्सरी जारी है तो उनमें से एक के लिए दूसरे का इमाम बनना दुरुस्त नहीं।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–655)

दौराने इद्दत निकाह पढ़ाने वाले की इमामत

सवाल: एक शख़्स ने इद्दत के दिनों में निकाह पढ़ाया है उसकी इमामत कैसी है?

जवाब: अगर बावजूद इल्म के ऐसा निकाह पढ़ाया तो निकाह पढ़ाने वाला और उस निकाह में शरीक होने वाले और बावजूद कुदरत के उस निकाह को न रोकने वाले सब गुनहगार हुए, सब के ज़िम्मा तौबा अललएलान लाज़िम है, अगर उस शख़्स से बेहतर इमामत के लाइक़ दूसरा आदमी मौजूद हो तो उस शख़्स की इमामत कमरूह है, दूसरे को इमाम बनाना चाहिए ता वक़्ते कि यह शख़्स तौबा न कर ले। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–114)

रिहन से फ़ायदा उठाने वाले की इमामत

शामी की तहक़ीक़ ये है कि नफ़ा उठाना मरहूना ज़मीन

से, सूद में दाख़िल है और " كُلُّ قَرْضٍ جَرَّنَفْعًا فَهُوَ رِبوًا " में दाख़िल है, पस जो शख़्स इस फ़ेले हराम का मुरतकिब होगा वह आ़सी व फ़ासिक़ होगा और फ़ासिक़ के पीछे नमाज़ मकरूह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–111, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–533 बाबुलइमामत)

ज़मीन मरहूना का नफ़ा, मुरतहिन को लेना सहीह नहीं है कि सूद में दाख़िल है और ऐसे शख़्स को इमाम बनाना ममनूअ़ है, नमाज़ उसके पीछे अगरचे बकराहत अदा हो जाती है लेकिन मुस्तक़िल दाइमी इमाम न बनाना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–122, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–523)

आ़क़ की इमामत

हदीस शरीफ़ में है " صَلُّوا خَلْفَ كُلِّ بَرٍّ وَّ فَاجِرٍ " पस आ़क़ भी मुसलमान है काफ़िर नहीं, इसलिए नमाज़ उसके पीछे सहीह है, मगर मकरूह है, क्योंकि आ़क़े वालिदैन और आ़क़े उस्ताद फ़ासिक़ है और इमामत फ़ासिक़ की मकरूह है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–122, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–523)

कम तौलने वाले की इमामत

एसा शख़्स इमाम बनाने के लाइक़ नहीं है, इस हालत

में उसके पीछे नमाज़ मकरूह है, मुहल्ला वालों को चाहिए कि उसको माजूल कर के किसी लाइक़ तर इमाम को इमाम बनाएँ।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–171, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–525

सफ़ेद बाल उखड़वाने वाले की इमामत

सवालः इमाम साहब अपनी दाढ़ी के सफ़ेद बाल उखड़वा देते हैं, उनके पीछे नमाज़ सहीह है या नहीं?

जवाबः ये फ़ेल अच्छा नहीं है, मकरूह है और नमाज़ उसके पीछे सहीह है, मगर ऐसा न करना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–201, बहवाला अबूदाऊद किताबुत्तरग़ीब सफ़्हा–196)

मुरतकिबे कबाइर की इमामत

सवालः एक इमाम साहब अक्सर मुहल्ले के लोगों के साथ ग़ीबत किया करते हैं, नीज़ बहुत बातों में झूट बोलना भी साबित हुआ, पाक औरत पर ज़िना की तोहमत लगाई, और भी बाज़ बातें नाक़ाबिले ज़िक्र हैं, क्या ऐसे आदमी को फ़ासिक़ कहा जाएगा या नहीं? इसके लिए शरई हुक्म क्या है?

जवाबः ग़ीबत करना, किसी पाक दामन पर तोहमत लगाना वग़ैरा गुनाहे कबीरा है, ऐसे उमूर का इरतिकाब करने वाला फ़ासिक़ है, और फ़ासिक़ की इमामत मकरूहे

तहरीमी है, अगर कोई बेहतर इमामत का अह्ल आदमी मौजूद हो तो उमूरे मज़कूरा के मुरतकिब को इमाम न बनाना चाहिए। बल्कि दूसरे शख़्स को इमाम बनाना चाहिए, अगर ये शख़्स सिद्क़े दिल से तौबा कर ले और अपनी ऐसी हरकतों से बाज़ आ जाए तो फिर उसकी इमामत भी मकरूह न होगी। बेहतर ये है कि शख़्से मज़्कूरा को मस्अला समझा कर और फ़ितना का अंदेशा ज़ाहिर कर के तौबा करा दी जाए, अगर वह न माने और फ़ितना का अंदेशा हो तो उसको इमामत से अलाहिदा कर के किसी दूसरे बेहतर शख़्स को इमाम मुक़र्रर कर दिया जाए।

और अगर उसकी अलाहिदगी में फ़ितना और दुश्वारी हो तो किसी दूसरी मस्जिद में नमाज़ पढ़ ली जाए।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–106, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–884)

बिला टोपी व अ़मामा वाले की इमामत

सवालः एक इमाम साहब के सर पर न टोपी थी और न पगड़ी, सिर्फ़ एक चादर थी जो तमाम बदन पर ओढ़ रखी थी, एक मुक़्तदी ने इमाम साहब से कहा कि इस तरह से नमाज़ मकरूह है।

इमाम साहब ने कहा मैं इसी तरह पढ़ाऊँगा। जिसकी मर्ज़ी हो पढ़े और जिसकी मर्ज़ी न हो न पढ़े इसके बारे में शरई हुक्म क्या है?

जवाबः नंगे सर नमाज़ पढ़ना और पढ़ाना जब कि

अमामा और टोपी मौजूद हो मकरूह है, मुअज़्ज़ज़ लिबास पहन कर नमाज़ पढ़ना और पढ़ाना चाहिए। ताहम फ़रीज़ा सूरते मज़कूरा से अदा हो जाता है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–114)

जुनुबी की इमामत

सवालः अगर कोई शख़्स नापाकी की हालत में इमामत करे तो उसके लिए क्या हुक्म है?

जवाबः वह शख़्स गुनाहे कबीरा का मुरतकिब है और सब नमाज़ियों की नमाज़ को भी ग़ारत करता है। अगर इस तरह नमाज़ पढ़ने से नमाज़ का इस्तिख़फ़ाफ़ मक़सूद है तो ये कुफ़्र है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–76, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–55)

जाहिल चोर की इमामत

सवालः ज़ैद इमाम है, सिर्फ़ हाफ़िज़ है, वह भी ग़लत पढ़ता है, और अगर मौक़ा मिले तो चोरी भी कर लेता है। ग़स्साली उसका पेशा है, निकाहे साबिक़ा पर दीगर निकाह करा देता है, मस्जिद में रहता है तो नमाज़ पढ़ लेता है, वरना क़ज़ा कर देता है, क़ौम को उससे नफ़रत है, उसके बारे में शरई हुक्म क्या है?

जवाबः अगर वाक़ई ये उमूर उसमें मौजूद हैं और उससे बेहतर इमामत का अह्ल आदमी मौजूद है तो

उसका इमाम बनाना मकरूहे तहरीमी है। बेहतर शख़्स को इमाम बनाना चाहिए, अगर ये शख़्स इन उमूर से तौबा कर ले और आइंदा ऐसी ममनूआत न करे नीज़ कुरआन शरीफ़ सहीह पढ़े तो उसकी इमामत मना नहीं है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–105)

फ़ैशन परस्त की इमामत

सवालः एक शख़्स जिसके सर पर अंग्रेज़ी बाल, दाढ़ी ख़शख़शी हो, लिबास भी सालिहीन का न हो तो ऐसे शख़्स का अज़ ख़ुद इमामत के लिए मुसल्ले पर खड़ा होना कैसा है?

जवाबः जिस शख़्स के सर के बाल, दाढ़ी, लिबास, ख़िलाफ़े शर्अ़ हों उसको न दूसरे लोग इमाम बनाएँ न वह ख़ुद इमामत के लिए मुसल्ले पर जाए। चूंकि ऐसा शख़्स फ़ासिक़ है और फ़ासिक़ को मुस्तक़िल इमाम बनाना मकरूहे तहरीमी है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–77, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–377)

अगर हाफ़िज़ (इमाम) अपनी क़बीह आदतों के छोड़ देने का अहद करे तो इमामे तरावीह बना सकते हैं और अगर इनकार करे तो फिर ऐसा शख़्स इमामत के मनसब के लाइक़ नहीं और इस वजह से अगर नमाज़ी उससे नराज़ हों तो उनकी नाराज़गी हक़ होगी। हदीस में हैः "शरई सबब से अगर नमाज़ी इमाम से नाराज़ हों तो ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ मक़बूल नहीं होती।" अगर हाफ़िज़

अपने तर्ज़े ज़िन्दगी को बदलने के लिए तैयार हो तो उसको इमाम बनाया जा सकता है, वरना इमामत का मुक़द्दस मनसब उसके सिपुर्द न किया जाए।

(फ़तावा रहीमिया सफ़्हा–417, बहवाला दुर्रेमुख़्तार मअ़ शामी जिल्द–1 सफ़्हा–522)

फ़ासिक़ की इमामत

सवालः ज़ैद एक जगह इमामत करता है, वह अफ़आ़ले क़बीहा में शिरकत करता है, मसलन नाच देखना, सीनेमा देखना, गंदे और फ़हश मज़ाक़ करना, दीन का मज़ाक उड़ाना वग़ैरा बग़ैरा, क्या ऐसे शख़्स को इमाम बनाना और उसकी इक़्तिदा करना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः ऐसे शख़्स को इमाम बनाना जाइज़ नहीं।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–77, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–376)

बच्चे की इमामत

सहीह क़ौल ये है कि नाबलिग़ के पीछे बालिग़ को नफ़्ल नमाज़ में भी इक़्तिदा करना सहीह नहीं अगर ऐसा कर लिया गया है तो नफ़्ल का एआ़दा एहतियातन कर लिया जाए।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–77)

फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–115 पर ये मस्अला इस तरह है अहनाफ़ का सहीह मज़हब ये है कि नाबालिग़

की इक़्तिदा बालिग़ीन को फ़र्ज़ व नफ़्ल किसी में दुरुस्त नहीं है। पस तरावीह भी नाबालिग़ के पीछे नहीं होगी, यही मज़हबे सहीह अहनाफ़ का है और बालिग़ पन्द्रह साल की उम्र में शुमार होगा, बशर्तेकि इससे पहले कोई अलामते बुलूग़ ज़ाहिर न हुई, हो लिहाज़ा जब तक लड़का बालिग़ न हो जाए उसको इमाम न बनाया जाए।

वैसे बच्चा का नफ़्लों में कुरआन शरीफ़ सुनते रहें, यानी वह लड़का नफ़्ल की नीयत बाँध कर खड़ा हो जाए और सुनने वाले वैसे ही बैठ कर उसका कुरआन शरीफ़ सुनते रहें और जब पन्द्रह साल का हो जाए तो इमामे तरावीह बना दें।

(बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–5 सफ़्हा–539)

बच्चे की तरावीह सिर्फ़ नफ़्ल है और बालिग़ की सुन्नते मुअक्कदा, दुसरे बच्चे की नफ़्ल शुरू करने से भी वाजिब नहीं होती और बालिग़ पर वाजिब हो जाती है। पस बच्चे की नमाज़ ज़ईफ़ होगी, इस पर बालिग़ की क़वी नमाज़ की बिना करना ख़िलाफ़े उसूल होने के सबब जाइज़ नहीं रहेगी। (इमदादुलुफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–361)

फ़तावा महमूदिया में है कि नाबालिग़ को तरावीह के लिए इमाम बनाना दुरुस्त नहीं है, अलबत्ता अगर वह नाबालिग़ों की इमामत करे तो जाइज़ है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–350)

इमामत का मुस्तहिक़

सवालः ईद की नमाज़ के मुतअल्लिक़ मुसलमानों में

इख़तिलाफ़ हुआ, बाज़ कहते हैं के ईद की नमाज़ इमाम साहब जो हमेशा पढ़ाते हैं वह पढ़ाऐं, और बाज़ का इसरार हाफ़िज़ के लिए है और कहते हैं कि हाफ़िज़ के होते हुए इमाम साहब के पीछे नमाज़ नहीं होती, आख़िर कार नमाज़ इमाम साहब ने पढ़ाई और हाफ़िज़ साहब नीयत तोड़ कर चले गए। इस सूरत में क्या करना चाहिए?

जवाब: तफ़रिक़ा मुसलमानों में बुरा है। नमाज़ हाफ़िज़ के पीछे भी हो जाती है और इमाम साहब के पीछे भी, नफ़सानियत बुरी है जो कोई नफ़सानियत से जमाअ़त से अलाहिदा हुआ, और नीयत तोड़ कर नमाज़ से चला गया, उसने बुरा किया और गुनाहगार हुआ, तौबा करे, और सब को बाहम इत्तिफ़ाक़ से रहना चाहिए, और इत्तिफ़ाक़ के साथ इमाम मुक़र्रर करना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–92)

(क़ाएदा ये है कि आलिम इमामत का ज़्यादा हक़दार है। बेहतर तो यही है कि मुत्तफ़िक़ा तौर पर इमाम का इंतिख़ाब हो ताकि कोई इख़्तिलाफ़ राह न पा सके, लेकिन अगर इख़्तिलाफ़ पैदा ही हो जाए तो कसरते राए पर फ़ैसला करना चाहिए, और फिर सब ही को अक्सरीयत का फ़ैसला तसलीम कर लेना चाहिए।)

इमामत में शैख़ व सैयद की तख़सीस नहीं

नमाज़ सब के पीछे हो जाती है, शैख़ व सैयद की तख़्सीस नहीं है, शैख़ व सैयद की नमाज़ ग़ैर शैख़ व सैयद के पीछे हो जाती है, इमाम को इमामत का लाइक़

होना चाहिए, नसब की इसमें कुछ क़ैद नहीं है, जो शख़्स नमाज़ के मसाइल से वाक़िफ़ हो और मुत्तक़ी हो वह ही ज़्यादा हक़दार इमामत का है, ख़्वाह सैयद हो, या दुकानदार हो, या बूढ़ा हो या जवान हो, ग़र्ज़ेकि कोई भी पेशा वाला हो। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–219, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–523)

जिस इमाम से बाज़ मुक़्तदी नाराज़ हों उसकी इमामत

कुतुबे फ़िक़्ह में है कि अगर इमाम में कोई नक़्स ने हो तो मुक़्तदियों की नराज़ी का असर नमाज़ में कुछ नहीं। इमाम की नमाज़ बिला कराहत दुरुस्त है और गुनाह मुक़्तदियों पर है। और अगर इमाम में कुछ शरई नक़्स हो और मुक़्तदी इस वजह से नाखुश हों तो इमाम के ऊपर मुवाख़ज़ा है और इसका इमाम बनना मकरूह है।

अगर इमाम में कोई ख़लल या नक़्स न हो और मुक़्तदी बिला वजह उससे नाराज़ हों तो उसका गुनाह उन मुक़्तदियों पर ही होगा। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–104, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–522)

ग़ैर सालेह औलाद वाले की इमामत

अगर कोई शख़्स खुद सालेह और लाइक़े इमामत हो तो उसकी इमामत में कुछ कराहत नहीं है, बल्कि अहक़्क़ बिलइमामत है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–102)

जिस इमाम की बीवी साड़ी बाँधती हो उसकी इमामत

पेश इमाम की इमामत में उससे कुछ कराहत नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–303)

लड़की की शादी पर रुपये लेने वाले की इमामत

लड़की के वालिदैन को शौहर से या शौहर के वालिदैन से कुछ रुपये लेने को फुक़हा ने रिशवत और हराम लिखा है, पस इस रुपये को वापस करना ज़रूरी है और तौबा उसकी यही है कि रुपये वापस कर दे, अगर रुपये वापस न किया तो फ़ासिक़ रहा और फ़ासिक़ की इमामत मकरूह है और फ़ासिक़ इमाम बनाने के लाइक़ नहीं है, उसके और उसके मुआ़विनीन के पीछे नमाज़ अगरचे हो जाती है लेकिन मकरूह होती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–260, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–523 बाबुलइमामत)

मस्जिद का माल अपनी ज़ात पर ख़र्च करने वाले की इमामत

(मस्जिद का माल अपनी ज़ात पर ख़र्च करना) ये सरीह ख़्यानत है, और ज़मान उसके ज़िम्मा लाज़िम है, और अगर वह इमाम तौबा न करे और ज़मान अदा न करे तो इमाम रखने के लाइक़ नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–178, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–523)

शीआ की इमामत

शीआ के पीछे सुन्नी की नमाज़ नहीं होती, चूंकि उनके बाज़ अक़ाएद ऐसे हैं जो मूजिबे कुफ़्र हैं, लिहाज़ा इस सूरत में नमाज़ का सहीह न होना अम्रे यक़ीनी है, और अगर शीआ ग़ाली न हो तब भी एहतियात लाज़िम है कि अक़ीदा अम्र मख़्फ़ी है और सब्बे शैख़ैन से जो इन्दलबअ़ज़ कुफ़्र है और क़ज़फ़े आइशा (रज़ि.) से जो बिल इत्तिफ़ाक़ कुफ़्र है, कोई शीआ ख़ाली नहीं होता।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–302)

मोची, ग़स्साल और नौमुस्लिम की इमामत

मोची, ग़स्साल और नौमुस्लिम के पीछे नमाज़ दुरुस्त है और महज़ इस वजह से उनकी इमामत में कुछ कराहत नहीं है, अलबत्ता अगर कोई दूसरी वजह कराहत की हो तो नमाज़ उनके पीछे मकरूह होगी, और बेहतर इमामत के लिए वह शख़्स है जो मसाइले नमाज़ से वाक़िफ़ हो और क़ुरआन शरीफ़ सहीह पढ़ता हो और सालेह हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–148, जिल्द–3 सफ़्हा–160, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–541)

मुर्दा को गुस्ल देने और तजहीज़ व तकफ़ीन करने से इमामत में ख़राबी नहीं आती, लेकिन अह्ले मुहल्ला के

लिए निहायत बुरी और शर्म की बात है कि वह अपने इमाम से ऐसे काम लेते हैं जिनको ख़ुद करना पसंद नहीं करते, बल्कि ज़िल्लत का काम समझते हैं, उनको चाहिए कि गुस्ले मैयत वग़ैरा में ख़ुद भी हिस्सा लें, अगर न जानते हों तो इमाम से सीख लें, उसको ज़िल्लत का काम न समझें, क्योंकि मैयत को गुस्ल देना फ़र्ज़े किफ़ाया है और सवाब का काम है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–42)

ग़ैर मुक़ल्लिद की इमामत

सवालः ग़ैर मुक़ल्लिद के पीछे, मुक़ल्लिद मुक़्तदी की नमाज़ हो जाती है या नहीं?

जवाबः ग़ैर मुक़ल्लिद इमाम अगर रिआयत इस अम्र की करता है कि वह अम्र नमाज़ में न करे जिससे हनफ़ी की नमाज़ फ़ासिद या मकरूह हो और मुतअस्सिब न हो तो इक़्तिदा उसकी दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–308, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–526)

मुन्किरीन हदीस की इमामत

क़ादयानी फ़िरक़ा जो कि हदीस का मुन्किर है वह काफ़िर है, उनके पीछे नमाज़ दुरुस्त नहीं है। और ग़ैर मुक़ल्लिदों का फ़िरक़ा जो कि अपने आपको अह्ले हदीस कहता है, वह भी दरहक़ीक़त अह्ले हदीस नहीं हैं उनके

पीछे भी नमाज़ मकरूह है। इमाम आलिम हनफ़ी को मुक़र्रर करना चाहिये। फ़िरक़ा मुन्किरीने हदीस की इमामत भी दुरुस्त नहीं है, उलमा ने उनके काफ़िर होने का फ़तवा दे दिया है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–174 बहवाला आलमगीरी कशोरी बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–83)

गाना बजाने वाली के शौहर की इमामत

अगर इमाम अपनी औरतों के रोकने पर क़ादिर हों और फिर नहीं रोकते तो वह लोग गुनाहगार हैं। उनके ज़िम्मा वाजिब है कि औरतों को नाशाइस्ता और नाजाइज़ अफ़आल से मना करें। अगर वह रोकने पर क़ादिर नहीं या रोकते हैं लेकिन औरतें नहीं मानतीं तो फिर उन पर औरतों के उन अफ़आल का गुनाह नहीं और इस सूरत में उनकी इमामत में भी उससे कराहत नहीं आती, अलबत्ता अगर बावजूद कुदरत के नहीं रोकते, बल्कि औरतों के अफ़आले मज़कूरा (नाच, गाना वग़ैरा) को अच्छा समझते हैं तो उनकी इमामत मना है, बशर्तेकि दूसरा शख़्स इमामत के लाइक़ उनसे बेहतर मौजूद हो, अगर मुक़ातआ करने से उनकी इसलाह की तवक़्क़ो हो तो मुक़ातआ करना मुनासिब है। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–59)

नामहरमों से परदा न करने वाली के शौहर की इमामत

सवालः (1) ज़ैद की बीवी अपने मामूँ और चचा के लड़के से परदा नहीं करती है बल्कि सामने आती है और

ज़ैद उसको मना भी करता है, मगर सिर्फ़ ज़बान से मना करता है, कोई तशद्दुद नहीं करता तो ज़ैद पर बीवी के परदा न करने का गुनाह होता है या नहीं और ज़ैद के पीछे नमाज़ पढ़नी दुरुस्त है या मकरूह, और ज़ैद को किस क़दर तशद्दुद करना चाहिए, अगर तशद्दुद करने से फ़साद का अंदेशा हो तो फिर भी तशद्दुद करे या नहीं?

(2) अगर ज़ैद की बीवी और ज़ैद का भाई उमर एक मकान में रहते हों, दूसरे घर में रहने की गुंजाइश न हो तो ऐसी सूरत में परदा की क्या सूरत होगी। अगर ज़ैद की बीवी उमर से परदा न करे तो उसका गुनाह उमर को भी होगा या नहीं?

जवाबः चचा और मामूँ के लड़के से शरअ़न परदा ज़रूरी है, अगर ज़ैद की बीवी उनसे परदा नहीं करती तो वह गुनहगार है और ज़ैद को मना करना ज़रूरी है, अगर मना न करेगा तो गुनहगार होगा, ज़ैद को तशद्दुद करना और अपनी बीवी को पदरा न करने पर शरअ़न मारना भी दुरुस्त है, अगर नाक़ाबिले बरदाश्त फ़साद का ख़्याल हो और इस वजह से ज़ैद अपनी बीवी पर तशद्दुद न करे, और बिला तशद्दुद के वह न माने तो शरअ़न ज़ैद पर गुनाह नहीं अव्वल सूरत में ज़ैद की इमामत मकरूह है जबकि इससे बेहतर इमामत का अह्ल मौजूद हो, सानी सूरत में ज़ैद की इमामत मकरूह नहीं।

(2) परदा हर हाल में ज़रूरी है, ख़्वाह अंदेशए फ़साद हो या न हो, मगर शरीअ़त ने जिन मवाक़ेअ़ को मुस्तसना कर दिया है वह मुस्तसना हैं।

अगर वुसअ़त है तो ज़ैद के ज़िम्मा अपनी बीवी के

लिए मुस्तक़िल मकान का इंतिज़ाम करना ज़रूरी है जिसमें उसका भाई वग़ैरा कोई न रहता हो, अगर वह परदा करने को कहता है और ज़ैद की बीवी बावजूद कोशिश व फ़हमाईश के परदा नहीं करती तो उसका गुनाह ज़ैद के ज़िम्मा नहीं होगा।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–99, बहवाला ख़ैरीया सफ़्हा–118)

जिसकी औरत बेपरदा हो उसकी इमामत

अगर इमाम अपनी औरत को बेपरदगी से मना करता हो और उसके इस फ़ेल (बेपरदगी) से राज़ी न हो मगर औरत ख़ाविन्द की बात न माने तो इमाम पर उसका मुवाख़ज़ा नहीं है और उसकी इमामत जाइज़ है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–80)

अगर उस इमाम की बीवी शरई तौर पर परदा नहीं करती और वह बेपरदगी से नहीं रोकता, बल्कि उसके उस फ़ेल से ख़ुश है और उससे बेहतर इमामत का अह्ल दूसरा शख़्स मौजूद है तो ऐसी हालत में उसको इमाम बनाना मकरूह है। क्योंकि ऐसा शख़्स शरअ़न फ़ासिक़ होता है, अगर वह (इमाम) बेपरदरगी से रोकता है और बीवी नहीं मानती तो इमामत मकरूह नहीं।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–45)

जिस इमाम की लड़कियाँ बेपरदा हों उसकी इमामत

सवालः जिसने अपनी जवान लड़कियों को नामहरम

अशख़ास के यहाँ रख रखा हो और अगर उसको समझाया जाता है तो गुमराही के चंद अलफ़ाज़ ज़बान से अदा करता है। ऐसी शख़्स की इमामत का क्या हुक्म है?

जवाब: नामहरम अशख़ास से परदा फ़र्ज़ है और नामहरम के साथ ख़लवत हराम है, पस अगर शख़्से मज़कूर अपनी जवान लड़कियों को नामहरम से परदा कराने पर क़ादिर है लेकिन फिर भी नहीं कराता तो गुनहगार है, उसको अपने इस फ़ेल से बचना ज़रूरी है और अगर वह बाज़ न आए और उससे बेहतर इमामत का अह्ल मौजूद हो तो शख़्से मज़कूर को इमाम न बनाया जाए, ऐसी हालत में उसकी इमामत मकरूह है और दूसरे अह्ल शख़्स को इमाम बनाना चाहिए, और ख़ास कर जब कि समझाने पर गुमराही के अलफ़ाज़ भी ज़बान से निकालता हो। ऐसी हालत में उसकी इमामत से ज़्यादा एहतेराज़ करना चाहिए। गो इन अलफ़ाज़ पर जब तक उनकी तअ़यीन न हो कोई हुक्म नहीं लगाया जा सकता।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–101)

ज़िद में तलाक़ देने वाले की इमामत

सवाल: एक शख़्स ने मौलवी आलिम हो कर अपनी औरत को महज़ इस वजह से तलाक़ दी कि मेरे बहनोई ने मेरी बहन को तलाक़ दी है, यानी एक की बहन दूसरे को ब्याही थी, जब पहले उसने मौलवी साहब की बहन को तलाक़ दे दी तो मौलवी साहब ने भी ज़िद में उसकी

बहन को तलाक़ दे दी है फिर अलावा अज़ीं महर ख़र्च नहीं देता तो ऐसे ज़ालिम के पीछे नमाज़ पढ़ना और सलाम व तआ़म का मआ़मला रखना कैसा है?

जवाबः जो लोग इस ज़ुल्म या इससे बड़े ज़ुल्म (हक़्कुल्लाह या हक़्कुलइबाद के तलफ़ करने में) मुलौवस न हों उनको चाहिए कि ऐसे शख़्स को अपनी नमाज़ के लिए इमाम न तजवीज़ करें। सलाम तआ़म वग़ैरा तर्क करने से बेहतर यही है कि उनको इसलाह पर आमादा करें, वरना आज कल सलाम व तआ़म तर्क़ करने से इसलाह नहीं होती, बल्कि बसाऔक़ात तबीअ़त में ज़िद पैदा हो जाती है। ख़ास कर अह्ले इल्म हज़रात जिनका किसी साहबे निस्बत बुजुर्ग से इसलाही तअ़ल्लुक़ न हो और वह ख़ुद फ़िक्रे इसलाह से ख़ारिज हों।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–78)

रुकूअ़ व सुजूद जल्द करने वाले की इमामत

सवालः जो नमाज़ में इस क़दर जल्दी करे कि मुक़्तदी तीन तस्बीह भी पूरी न कर सकें तो ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ का क्या हुक्म है?

जवाबः इतनी जल्दी करना मकरूह है इमाम को मुक़्तदियों की रिआ़यत इस क़दर करनी चाहिए जिससे वह लोग भी कम अज़ कम तीन तीन मरतबा रुकूअ़ सज्दा में तस्बीहात कह लें।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–108)

बिदअ़ती की इमामत

सवालः क्या बिदअ़ती के पीछे नमाज़ पढ़ना जाइज़ है? और क्या ऐसा शख़्स इमामत के क़ाबिल है?

जवाबः आज कल के फ़िरक़ए मुब्तदिआ़ के अक़ाइद हद्दे शिर्क तक पहुंचे हुए हैं, इसलिए उनके पीछे नमाज़ नहीं होती, अलबत्ता अगर कोई बिदअ़ती, शिरकिया अक़ाइद न रखता हो बल्कि मुवह्हिद्द हो, सिर्फ़ तीजा चालीसवाँ वग़ैरा जैसी बिदआ़त में मुब्तला हो उसकी इमामत मकरूहे तहरीमी है।

कोई सहीहुलअक़ाइद इमाम मिल जाए तो बिदअ़ती की इक़्तिदा में नमाज़ न पढ़े वरना उसके पीछे पढ़ ले, जमाअ़त न छोड़े, बिदअ़ती की इक़्तिदा में पढ़ी हुई नमाज़ अगरचे मकरूहे तहरीमी है मगर वाजिबुलइअ़दा नहीं। ये ऐसे बिदअ़ती का हुक्म है जो मुशरिक न हो, शिरकिया अक़ाइद रखने वाले का हुक्म लिखा है कि उसके पीछे नमाज़ क़तअ़न नहीं होती।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–290)

मौदूदी अक़ाइद रखने वाले की इमामत

सवालः जमाअ़ते इस्लामी से तअ़ल्लुक़ रखने वाले हाफ़िज़ साहब के पीछे कुरआन सुनना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः ऐसे शख़्स की इमामत मकरूहे तहरीमी है, अगर फ़राइज़ में सहीहुलअक़ीदा इमाम मुयस्सर न हो तो

उसके पीछे पढ़ लें।

मगर तरावीह बहरकैफ़ उसकी इक़्तिदा में न पढ़ें सहीह इमाम न मिले तो तन्हा पढ़ लें।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द– 3 सफ़्हा–291)

ख़िज़ाब लगाने वाले की इमामत

सवालः जो हाफ़िज़ साहब दाढ़ी को ख़िज़ाब लागते हैं क्या वह तरावीह की नमाज़ पढ़ा सकते हैं?

जवाबः सियाह ख़िज़ाब लगांने वाला फ़ासिक़ है, लिहाज़ा ऐसे इमाम की इक़्तिदा में तरावीह पढ़ना कमरूहे तहरीमी(1) है, सालेह इमाम न मिले तो तरावीह तन्हा पढ़ लें।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–294)

सीनेमा देखने वाले की इमामत

सवालः एक हाफ़िज़ साहब सीनेमा और नाटक देखने और नाच गाने के भी बहुत शौक़ीन हैं तो उनके पीछे नमाज़ पढ़ना कैसा है?

जवाबः जो शख़्स सीनेमा देखता हो, नाच गाने की महफ़िलों में शिरकत करता हो ऐसा शख़्स मनसबे इमामत के क़ाबिल नहीं है। उसके पीछे नमाज़ मकरूह है।

अगर तौबा न करे और इमामत भी न छोड़े तो दूसरी मस्जिद में नमाज़ पढ़नी चाहिए, अगर दूसरी मस्जिद न

(1) सहीह क़ौल के मुताबिक़ मकरूहे तंज़ीही है।

हो तो तन्हा पढ़ने के बजाए उसी इमाम के पीछे पढ़ ले इसलिए कि जमाअ़त की अहमियत और ताकीद ज़्यादा है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–348, बहवाला शामी बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–525)

टेलीवीज़न देखने वाले की इमामत

सवाल: क्या ऐसे इमाम की इक़्तिदा करना जो कि टेलीवीज़न देखता हो जाइज़ है?

जवाब: टेलीवीज़न देखना नाजाइज़ है और ऐसे इमाम की इक़्तिदा मकरूह तहरीमी है, मगर नमाज़ हो जाएगी, लौटाना ज़रूरी नहीं।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–288)

जिसके यहाँ शरई परदा न हो उसकी इमामत

सवाल: अगर इमाम साहब की बीवी परदा न करे तो उसकी इमामत जाइज़ है या नहीं?

जवाब: जिस शख़्स के यहाँ शरई परदा का एहतेमाम न हो वह फ़ासिक़ है, उसको इमाम बनाना जाइज़ नहीं उसकी इमामत मकरूहे तहरीमी है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–289)

अगर इमाम अपनी औरत को बेपरदगी से मना करता हो और इस फ़ेल से राज़ी न हो, मगर औरत ख़ाविंद की बात न माने तो इमाम पर उसका मुवाख़ज़ा नहीं और उसकी इमामत जाइज़ है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–80)

ख़स्सी की इममात

सवालः जिस शख़्स को जबरन ख़स्सी किया गया हो उसकी इमामत जाइज़ है या नहीं?

जवाबः ख़स्सी से तबअन क़दरे इंक़िबाज़ होता है, इसलिए उसकी इमामत मकरूहे तंज़ीही है, अलबत्ता इससे ज़्यादा मुस्तहिक़्क़े इमामत मौजूद हो तो कोई कराहत नहीं।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–286)

हिजड़े की इमामत

हिज़ड़ा जब आलिम बाअमल हो और बाक़ी सब जाहिल हों तो उसकी इमामत जाइज़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–173, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–523)

नस्बंदी कराने वाले की इमामत

मुकर्रम व मोहतरम जनाब मुफ़तियाने किराम दारुलउलूम, बाद सलामे मसनून!

मुन्दर्जा ज़ैल सवालात के जवाबात मुदल्लल इनायत फ़रामाऐं:

(1) नस्बंदी कराने वाले इमाम के पीछे नमाज़ मकरूहे तनज़ीही है या तहरीमी?

(2) अगर इमाम की नस्बंदी ज़बरदस्ती कर दी गई, तो क्या हुक्म है?

(3) इमाम ने नस्बंदी ख़ुद तो नहीं कराई, लेकिन अपनी बीवी की कराई तो उस इमाम के पीछे नमाज़ दुरुस्त है कि नहीं?

अलजवाब

(1) तौबा से पहले मकरूहे तहरीमी है और तौबा के बाद बिला कराहत दुरुस्त है।

(2) व (3) दोनों सूरतों में बाद तौबा व इस्तिग़फ़ार उसकी इमामत बिल कराहत दुरुस्त है।

अलजवाब सहीहुन		वल्लाह तआ़ला अलम
मुहम्मद ज़फ़ीरुद्दीन ग़ुफ़िरलहू		कफ़ीलुर्रहमान निशात उस्मानी
मुफ़्तिए दारुलउलूम देवबंद		नाइब मुफ़्तिए दारुलउलूम देवबंद

9–1–1408 हिजरी

नस्बंदी के बावजूद आदमी मर्द ही बाक़ी रहता है औरत या मुख़न्नस के हुक्म में नहीं हो जाता। इसलिए इमामत के मस्अले में भी उसके अहकाम आम मर्दों के हैं।

उसकी इमामत दुरुस्त और जाइज़ है, अगर उसकी नस्बंदी जबरन की गई है तो अब उसका कुसूर भी नहीं और अगर उसने अज़ ख़ुद रज़ा और रग़बत से कराई हो तो मूजिबे फ़िस्क़ है।

तौबा और नदामत के बाद कराहत ख़त्म हो जाएगी, जब तक ताइब न हो, चूंकि नस्बंदी नाजाइज़ है और ख़लक़िल्लाह में तबदीली है, उसके फ़ासिक़ होने के बाइस

उसकी इमामत मकरूह होगी।

(जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा–59)

दीवाने की इमामत

जुनून और दीवानगी ऐसी हो कि किसी वक़्त उसको होश न आए और ऐसी हालत में नमाज़ पढ़ाए तो उसके पीछे नमाज़ दुरुस्त नहीं, और अगर नमाज़ पढ़ाने के वक़्त होश में हो तो उसके पीछे नमाज़ सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–301, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–604)

जिमाअ़ पर ग़ैर क़ादिर की इमामत

सवालः मुख़न्नस इमाम नहीं हो सकता, लेकिन अगर कोई शख़्स अमराज़ की वजह से नाक़ाबिले जिमाअ़ हो जाए तो ये शख़्स इमाम हो सकता है या नहीं, जबकि जमाअ़त में यही शख़्स साहबे फ़ज़्ल व कमाल है।

जवाबः इन्नीन यानी नामर्द की इमामत सहीह है, नामर्द का हुक्म ख़ुन्सा का सा नहीं है, लिहाज़ा माजूर मज़कूर की इमामत सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–200)

इसी मौक़ा पर हाशिए में ये इबारत भी मौजूद है कि ख़ुन्सा की इमामत तो इसलिए दुरुस्त नहीं है कि उसके औरत होने का एहतेमाल होता है और इन्नीन (नामर्द) में इस तरह का कोई एहतेमाल नहीं होता।

वह्म की वजह से इमामत छोड़े या नहीं?

सवालः मैं अरसा से इमामत करता हूँ, अब मुझ को वह्म सा होने लगा है कि वुजू टूट गया होगा, इस वजह से क़ल्ब के अन्दर ये तक़ाज़ा है कि इमामत से अलाहिदा हो जाऊँ, शरअ़न क्या हुक्म है?

जवाबः वह्म पर कुछ कारबंद नहीं होना चाहिए और ऐसे वसवसे को दफ़ा करना चाहिए और "लाहौला वला कूव्वता इल्लाबिल्लाहि" अक्सर पढ़ते रहें और जब तक यक़ीन वुजू टूटने का न हो उस वक़्त तक कुछ इल्तिफ़ात इस तरफ़ न करना चाहिए और इमामत करना चाहिए।

हदीस शरीफ़ में ये आया है कि "जब तक हदस (रीह ख़ारिज होने) की आवाज़ या बदबू मालूम न हो उस वक़्त तक वुजू नहीं टूटता" (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–128, बहावाल मिशकात बाब मायूजिबुलवुजू)

जो नमाज़ें उसने पढ़ाई हैं अगर उनमें रियाह ख़ारिज होने का यक़ीन नहीं तो नमाज़ें सब की हो गईं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–334)

सूज़ाक वाले शख़्स की इमामत

सवालः एक इमाम को मर्ज़े सूज़ाक है, धब्बा बराबर आता रहता है, ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ हो जाती है या नहीं?

जवाबः अगर वह शख़्स उज़्र की हद को पहुंच गया

है और माजूर हो गया है कि हर वक़्त धब्बा आता है कोई वक़्त नमाज़ का ख़ाली नहीं रहता है तो उसके पीछे नमाज़ ग़ैर माजूरीन की सहीह नहीं होगी, उसको इमाम न बनाया जाए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–309, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–541)

मुसाफ़िर की इमामत

सवालः इमाम मुसाफ़िर अगर चार रकअ़त पूरी पढ़ ले तो मुक़्तदी जो मुसाफ़िर नहीं, उनकी नमाज़ उसके पीछे सहीह होगी या नहीं?

जवाबः इमाम की आख़िरी दो रकअ़त नफ़्ल हैं, और मुक़्तदी की फ़र्ज़, और फ़र्ज़ पढ़ने वाले की इक़्तिदा नफ़्ल पढ़ने वाले के पीछे सहीह न होगी इसलिए मुक़्तदियों की नमाज़ सहीह न होगी।

अलबत्ता अगर मुक़्तदी आख़िरी दो रकअ़तें अपने तौर पर पढ़ें, इमाम की इक़्तिदा मलहूज़ न रखें तो उनकी नमाज़ सहीह हो जाएगी। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–364)

इनआ़मी बौंड रखने वाले की इमामत

सवालः क्या ऐसा शख़्स इमामत के लाइक़ है जो प्राइज़ बौंड रखे और उस पर इनआ़म की रक़म वसूल करे, और इनआ़म सूदी रक़म से तक़्सीम होते हैं।

जवाबः इनआ़मी बौंड, सूद और क़ुमार का मजमूआ़ होने की वजह से हराम है, इसलिए इनआ़मी बौंड रखने

वाला फ़ासिक़ है और उसकी इमामत मकरूहे तहरीमी है।
(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–297)

नामहरम औरतों से हाथ मिलाने वाले की इमामत

सवालः जो शख़्स नामहरम औरतों से हाथ मिलाता है उसके पीछे नमाज़ पढ़ना कैसा है?

जवाबः नामहरम औरतों से हाथ मिलाने वाला फ़ासिक़ है, इसलिए उसकी इमामत मकरूहे तहरीमी है।
(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–299)

बैंक मुलाज़िम की इमामत

सवालः औक़ाफ़ के मुलाज़िम अइम्मा जिनकी दाढ़ी एक मुश्त से कम है, नीज़ बैंक मुलाज़िम हुफ़्फ़ाज़ व कुर्रा दाढ़ी ख़ोर की इमामत में नमाज़ हो जाएगी या नहीं?

जवाबः ये दाढ़ी ख़ोर बैंक में मुलाज़मत की वजह से सूद ख़ोर भी है, इन दो गुनाहों में से हर एक मूजिबे फ़िस्क़ है, इसलिए उसकी इमामत मकरूहे तहरीमी है।
(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–303)

अबरस और जुज़ामी की इमामत

जिसको बरस हो और बरस भी मामूली न हो बल्कि बदन में फैला हुआ हो और लोग उससे नफ़रत करते हों तो उसको इमाम बनाना मकरूह है।

जुज़ामी का दरजा तो इस मआमले में अबरस से बढ़ा हुआ है कि जुज़ाम अगर फैला हुआ हो और हर वक़्त टपकता हो तो ऐसे शख़्स को मस्जिद में आना मना है। इससे जमाअ़त भी साक़ित है और वह इमाम भी नहीं बनाया जा सकता। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–82, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–378 व बहवाला फ़तावा हिन्दीया जिल्द–1 सफ़्हा–441)

सूद ख़ोर की इमामत

सवालः सूद ख़ोर और दाढ़ी मुंडवाने वाले के पीछे नमाज़ होगी या नहीं और उनको इमाम बनाना दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः ऐसे शख़्स को इमाम बनाना मकरूहे तहरीमी है उसके पीछे नमाज़ मकरूह होगी।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–82, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–376)

मुरतकिबे मकरूह की इमामत

सवालः मकरूहात के मुरतकिब और सुन्नत व मुस्तहब्बात की पाबंदी न रखने वाले के पीछे नमाज़ कैसी होगी?

जवाबः मकरूह होगी। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–84, बहवाला तहतावी अला मराक़ियुलफ़लाह (मिस्री) सफ़्हा–245)

क़ौवाली सुनने वाले की इमामत

अगर कोई इमामत का अह्ल दूसरा शख़्स मौजूद हो तो क़ौवाली सुनने वाले और उर्स में शरीक होने वाले को इमाम नहीं बनाना चाहिए।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–84, बहवाला तहतावी (मिस्री) सफ़्हा–245)

अगली पुश्त में ख़राब नसब वाले की इमामत

अगर औलाद सालेह हो और क़ाबिले इमामत हो, मसलन ये कि आलिम हो, मसाइले शरीअ़त से वाक़िफ़ हो तो उसके पीछे नमाज़ बिला कराहत सहीह है, बल्कि अफ़ज़ल है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–130, बहवाला गुनया सफ़्हा–351)

मुलहम बिज़्ज़िना की इमामत

सवालः एक औरत अपनी ज़बान से कहती है कि फ़लाँ इमाम ने मेरे साथ ज़िना किया है और वह शख़्स इनकार करता है, इसमें शरअ़न क्या हुक्म है?

जवाबः औरत के कहने से मर्द पर ज़िना का सुबूत नहीं हो सकता और उसकी इमामत में कुछ कराहत नहीं आती। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–118)

वलदुज़्ज़िना की इमामत

वलदुज़्ज़िना, वालिद के न होने की वजह से सहीह तरबियत याफ़्ता नहीं होता है, नीज़ उससे तबअन इंक़िबाज़ होता है, इसलिए उसकी इमामत मकरूहे तंज़ीही है। और अगर उसमें ये इल्लते कराहत न पाई जाए बल्कि वह आलिम, मुत्तक़ी हो तो कराहत बाक़ी न रहेगी, बल्कि दूसरों की निस्बत उसकी इमामत अफ़ज़ल है, और यही हुक्म दूसरे दीनी मनासिब का है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–295, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–523)

तवाईफ़ के घर परवरिशयाफ़्ता बच्चा की इमामत

सवालः एक बच्चा के वालिदैन बचपन में मर गए, उसने तवाइफ़ के घर परवरिश पाई। कुरआन शरीफ़ भी पढ़ लिया, वह इमामत कर सकता है या नहीं?

जवाबः वह लड़का जिसने तवाईफ़ के घर परवरिश पाई है अगर उसने कुरआन शरीफ़ पढ़ लिया है और मसाइले नमाज़ से वाक़िफ़ है तो उसकी इमामत बिला कराहत दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–191)

ज़ानी ताइब की इमामत

ज़ानी अगर ताइब हो जाए और पिछले अफ़आले शनीआ

से तौबा कर ले और अक्सर नमाज़ी उसकी इमामत से राज़ी हों तो उसको इमाम बनाना दुरुस्त है और उसकी इमामत में कुछ कराहत नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–193, बहवाला मिशकात शरीफ़ बाबुत्तौबा सफ़्हा–206)

गै़र शादी शुदा की इमामत

सवालः बाज़ लोग कहते हैं कि जिसका निकाह न हो उसकी इमामत जाइज़ नहीं, जबकि इमाम साहब यूँ कहते हैं कि मैं इल्मे दीन हासिल कर रहा हूँ, फ़ारिग़ होने के बाद निकाह करूँगा। किसकी बात सहीह है? गै़र शादी शुदा इमामत कर सकता है या नहीं?

जवाबः इमामत सहीह होने के लिए इमाम का शादी शुदा होना शर्त नहीं है अगर वह पाकबाज़ी की ज़िन्दगी गुज़ार रहा हो और इल्मे दीन हासिल करने में मशगूल हो और तालीम पूरी करके शादी के लिए कहता हो तो क्या बुरा है।

जो लोग ख़्वाहमख़ाह पीछे पड़े हैं और इमामत को नजाइज़ क़रार देते हैं वह ज़्यादती कर रहे हैं, अगर अभी शादी हो गई और तालीम रुक गई तो उसके हक़ में कितना बड़ा नुक़्सान होगा, अलबत्ता तालीम पूरी होने की मुद्दत में गुनाह में मुब्तला होने का अंदेशा हो तो मुक़्तदियों को चाहिए कि शादी का इंतिज़ाम कर दें।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–6 सफ़्हा–351)

अगर उस पर शह्वत का ग़लबा नहीं तो उसके ज़िम्मे

शादी ज़रूरी नहीं और उससे उसकी इमामत में ख़लल नहीं आता, अलबत्ता अगर उस पर शहवत का ग़लबा है और ख़्यालात परागंदा रहते हैं तो बनिस्बत उसके ऐसे शख़्स को इमाम बनाना अफ़ज़ल है जिसकी बीवी मौजूद है और ख़्यालात परागंदा नहीं रहते, बल्कि उसको इत्मीनान हासिल है और इमामत की अहलियत भी रखता है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–40)

जो शादी शुदा इमाम एक साल तक घर न जाए उसका हुक्म

सवाल: हमारे इमाम साहब ढाई साल से इमामत कर रहे हैं और उनकी शादी को तीन साल हुए हैं एक साल से वह घर नहीं गए हैं, कुछ अन पढ़ लोग कहते हैं कि जो शादी शुदा इमाम एक साल तक अपने घर न जाए उसकी इमामत जाइज़ नहीं होती। यहाँ पर उसकी वजह से झगड़ा हो रहा है, सहीह क्या है?

जवाब: शादी शुदा मर्द अपनी औरत की इजाज़त और रज़ामंदी के बग़ैर चार माह से ज़्यादा मुद्दत दूर न रहे। (शामी जिल्द–2 सफ़्हा–547)

उस इमाम की बीवी ने इजाज़त दी होगी, और मुलाज़मत की वजह से दूर रहने पर रज़ामंद होगी, लिहाज़ा उसके पीछे नमाज़ सहीह होने में शुब्हा न करना चाहिए। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–357)

टख़्नों से नीचा पाएजामा पहनने वाले की इमामत

सवाल: इमाम का पाएजामा टख़्नों से नीचा है, सज्दा

में जाते वक़्त दोनों हाथों से पाएजामा को ऊपर चढ़ा लेते हैं और फिर सज्दे में जाते हैं, ये फ़ेल नमाज़ में हर रकअ़त में बराबर जारी रहता है हम उनके पीछे नमाज़ पढ़ें या नहीं?

जवाबः इमाम मज़कूर को ऐसा ना करना चाहिए क्योंकि अव्वल तो टख़नों से नीचा पाजामा नमाज़ से बाहर भी पहनना हराम और ममनूअ़ है। ये अम्र मूजिबे फ़िस्क़े इमाम है, और फ़ासिक़ के पीछे नमाज़ मकरूह है, और इमाम बनना फ़ासिक़ को तौबा के बग़ैर मकरूह है।

दूसरे नमाज़ में बार बार ऐसी हरकत करना भी नहीं चाहिए कि उसमें भी कराहत है और बाज़ सूरतों में नमाज़ के फ़ासिद होने का ख़ौफ़ है, बहरहाल इमाम मज़कूर को फ़ेले मज़कूर से रोकना चाहिए और अगर वह बाज़ न आए तो उसको माजूल कर देना चाहिए, और अगर उस पर कुदरत न हो तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ना जाइज़ है और जमाअ़त का सवाब हासिल हो जाता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–117, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–523)

पैंट पहनने वाले की इमामत

सवालः एक शख़्स पैंट पहन कर नमाज़ पढ़ाता है उसके लिए हुक्म क्या है। नमाज़ होती है या नहीं?

जवाबः नमाज़ हो जाएगी मगर ऐसे शख़्स को अपने इख़्तियार से इमाम बनाना जाइज़ नहीं है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–318)

चौड़ा पाजामा पहनने वाले की इमामत

"उसके पीछे नमाज़ सहीह है" इसलिए कि चौड़े पाएंचे का पाजाम पहनना दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–130)

धोती पहन कर इमामत करना

सवालः धोती और दो पल्ली टोपी और ऊँचा कुरता पहन कर इमामत करना दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः अगर सत्रे औरत (परदा पोशी) पूरा है तो नमाज़ हो जाती है, लेकिन बेहतर ये है कि अ़मामा और लिबासे शरई के साथ नमाज़ पढ़ाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–166, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब शुरूतुस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–174)

शलवार व क़मीज़ पहन कर इमामत

नमाज़ में अक्सर औक़ात टख़ने या पैर ढक जाते हैं मर्द को इतनी लम्बी शलवार पहनना कि जिससे टख़ने या पैर ढक जाएँ नाजाइज़ है और नमाज़ उससे मकरूह हो जाती है। नमाज़ में पैर या टख़ने न ढकें। क़मीज़ पहनना जाइज़ है, लेकिन कुरता अफ़ज़ल है, हर जगह जो सुलहा का लिबास है वह इख़्तियार करना चाहिए। ख़ुसूसन नमाज़ और इमामत के वक़्त।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–72)

सेहत के साथ न पढ़ने वाले की इमामत

सवालः जो शख़्स क़िराअत साफ़ सेहत के साथ न कर सके यानी अलिफ़ और अ़ैन, ते और तो, से और सीन, जीम और हे और ज़ाद, ज़ाल, ज़े, ज़ो में फ़र्क़ न करे तो ऐसे इमाम की इक़्तिदार करनी दुरुस्त है या नहीं और अगर बाज़ लोग बस्ती वाले ऐसे इमाम को रखें तो उसका गुनाह इमाम पर या बस्ती वालों पर होगा?

जवाबः अगर उससे बेहतर मसाइल से वाक़िफ़, कुरआन सहीह पढ़ने वाला, मुत्तबेअ़ सुन्नत हो तो उसको इमाम न बनाना चाहिए और इमाम मज़कूर को इमामत से अलाहिदा कर दिया जाए। बशर्तेकि उसमें फ़ितना न हो, अगर उससे बेहतर दूसरा शख़्स इमामत के लाइक़ मौजूद न हो बल्कि सब उसी तरह पढ़ने वाले हों तो फिर उसकी इमामत में भी मुज़ाएक़ा नहीं, लेकिन तसहीहे हुरूफ़ की कोशिश बहरहाल लाज़िम है जिसका तारिक गुनाह गार है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–74, बहवाला दुर्रेमुख़्तार मअ़ रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–377)

रिशवत ख़ोर की इमामत

अगर उससे बेहतर इमाम मौजूद हो तो रिशवत ख़ोर को इमाम बनाना मकरूह है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–74, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–376)

तारिके जमाअ़त की इमामत

सवालः तारिके जमाअ़त की इमामत जुमा व ईदैन में शरअ़न दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः जो शख़्स बिला उज़्र तर्क जमाअ़त का आदी हो, उसको इमाम बनाना मकरूह तहरीमी है बहालते मजबूरी उसके पीछे जो नमाज़ अदा की जाएगी उसका इआ़दा लाज़िम नहीं होगा।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–70, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–371 व बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–376)

अह्ले हदीस की इमामत

सवालः अह्ले हदीस के पीछे नमाज़ होगी या नहीं और ये अह्ले सुन्नत वलजमाअ़त में शामिल हैं या नहीं?

जवाबः अह्ले हदीस अगर अइम्मए मुजतहिदीन पर सब्ब व शत्म न करें और फ़राइज़ व वाजिबात में हनफ़ी मसलक की रिआ़यत कर के नमाज़ पढ़ाऐं तो उनके पीछे नमाज़ दुरुस्त हो जाएगी। ऐसे अह्ले हदीस भी अह्ले सुन्नत वलजमाअ़त से अगल नहीं जोकि दियानतदारी से हदीस पर अमल करते हैं और फ़ुक़हा से बुग्ज़ नहीं रखते।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–71)

रज़ाख़ानी की इमामत

सवालः एक शख़्स बरैलवी ख़्याल का है, उसका अक़ीदा है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) आलिमुलग़ैब हैं और आप (स.अ.व.) मुख़्तारे कुल हैं, नीज़ आप (स.अ.व.) हर जगह हाज़िर व नाज़िर हैं और ये शख़्स एक मस्जिद में इमामत भी करता है, क्या उस शख़्स के पीछे नमाज़ दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः ये सिफ़त अल्लाह तआला के लिए ख़ास है। हुज़ूर (स.अ.व.) के लिए इस सिफ़त को मानना बेदलील है, बल्कि ख़िलाफ़े नस्स है, इसलिए ऐसे शख़्स को इमाम बनाना दुरुस्त नहीं। तमाम नमाज़ियों को चाहिए कि ऐसे शख़्स को इमामत से हटा कर दूसरे सहीहुलअक़ीदा, मसाइले तहारत और नमाज़ से वाक़िफ़, मुत्तबेअ़ सुन्नत आदमी को इमाम तजवीज़ करें वरना सब गुनहगार होंगे।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–79, बहवाला दुर्रेमुख़्तार मअ़ रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–376)

कम्यूनिष्ट पार्टी को वोट देने वाले की इमामत

सवालः (1) कम्यूनिष्ट पार्टी का मिम्बर बनना और उसको कामियाब बनाने के लिए वोट देना जाइज़ है कि नहीं और वोट देने वाले के पीछे नमाज़ पढ़ना कैसा है?

(2) ज़ैद कम्यूनिष्ट टिकट से टाउन ऐरिया का मिम्बर है और उसका हिमायती भी है उसके पीछे नमाज़ पढ़ना

कैसा है?

(3) बकर हाफ़िज़े कुरआन है, उसने कम्यूनिष्ट उम्मीदवार को कामियाब बनाने के लिए वोट भी दिया है उसके पीछे नमाज़े तरावीह पढ़ना कैसा है?

जवाबः कम्यूनिष्ट अपनी अस्ल के एतेबार से मज़हबे इस्लाम के मुख़ालिफ़ हैं और उनके उस बुनयादी नज़रिए की पाबंदी करते हुए उनकी पार्टी का मिम्बर बनना मज़हबे इस्लाम की मुख़ालफ़त करना है। उनको वोट देना, मज़हबे इस्लाम के मुख़ालिफ़ को वोट देना है, इस बात को समझते और एतिक़ाद करते हुए मिम्बर बनने वाले और उसको वोट देने वाले को इमाम बनाना दुरुस्त नहीं, बाज़ आदमी मज़हबे इस्लाम के मोअ़तक़िद और पाबंद होकर भी बाज़ सियासी और वक़्ती मसालेह की बिना पर कम्यूनिष्ट या किसी और मुख़लिफ़े इस्लाम पार्टी के टिकट पर मिम्बर बनते हैं और उनकी इस मसलिहत के पेशे नज़र, सच्चे पक्के मुसलमान उनको वोट देते हैं, उनका यह हुक्म नहीं है, लेकिन इस रविश से एक मुख़लिफ़े इस्लाम पार्टी को फ़रोग़ होकर इक़्तिदार हासिल होता है जिससे बहुत से लोगों को ग़लत फ़हमी पैदा होगी और कम्यूनिष्ट पार्टी को इस्लाम के ख़िलाफ़ नहीं बल्कि मुवाफ़िक़ समझेंगे, और जब ऐसे लोग मिम्बर बन जाएँगे तो वह कम्यूनिष्ट जिन्होंने उनको वाक़िअ़तन कम्यूनिष्ट समझ कर वोट दिया है उनसे अपने वह मुतालबात पूरे कराऐंगे जो इस्लाम मुख़ालिफ़ होंगे। और अगर ये उसमें कोशिश नहीं करेंगे तो वोट देने वाले उनको ग़द्दार और मक्कार क़रार देंगे और ये ग़द्दारी व

मक्कारी सब इस्लाम के सर रखी जाएगी और आइंदा न ऐसे मिम्बर पर कभी एतेमाद होगा और न ऐसे वोट देने वालों पर जो कम्यूनिष्ट पार्टी का सहारा लेकर एक मुसलमान को मिम्बर बनाएँ।

नीज़ ये अमल एक शरीफ़ आदमी कभी इख़्तियार नहीं कर सकता कि ख़ुद मुसलमान हो और दुनिया को धोका देकर अपने आपको कम्यूनिष्ट ज़ाहिर करे और वोट हासिल करे, ऐसे शख़्स पर उसका ज़मीर इंतिहाई मलामत करेगा, इस्लाम में ऐसे अमल की हरगिज़ इजाज़त नहीं।

नबी करीम (स.अ.व.) की ख़िदमत में हाज़िर होने वाले जो लोग ज़मीर के ख़िलाफ़ कहते और अमल करते थे उनकी सख़्त मज़म्मत कुरआन पाक व हदीस शरीफ़ में आई है, ऐसे लोगों पर नबी करीम (स.अ.व.) को एतेमाद न था और न ख़ुद उनकी पार्टी को। उन लोगों का हाल ये था। "مُذَبْذَبِيْنَ بَيْنَ ذَالِكَ لَا اِلٰى هٰؤُلَآءِ وَلَا اِلٰى هٰؤُلَاءِ"

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–80)

गैर मुअज़्ज़ज़ की इमामत

सवालः क्या इमामत का हक़ सिवाए मुअज़्ज़ज़ क़ौम के दूसरी क़ौम को हो सकता है, या नहीं? बाज़ ये कहते हैं कि सिर्फ़ मुन्दर्जा ज़ैल क़ौमों के आदमी नमाज़ पढ़ा सकते हैं। यानी सैयद, शौख़, मुग़ल, पठान। और दूसरी क़ौम को इमामत का हक़ हासिल नहीं है। शरअ़न क्या हुक्म है।

जवाबः इमामत का इस्तेहक़ाक़ हर एक उस मुसलमान

को है जो अह्लियत इमाम होने की रखता है फिर जिस क़दर लवाज़माते इमामत मसलन मसाइले इल्मे तजवीद व क़िराअत और सलाह व तक़्वा जिसमें ज़्यादा होगा उसी क़दर वह औला व अलयक़ बिलइमामत मुतसव्वर होगा। (यानी सब में ज़्यादा मुस्तहिक़ होगा) दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा में है कि जिसमें अह्लियत इमामत की हो वह इमाम हो सकता है।

इस हुक्म में जुमला अक़वाम और अह्ले हिरफ़े बराबर हैं। (तमाम पेशा करने वाले और हर बिरादरी के लोग मुराद हैं) अलबत्ता अगर शराफ़ते इल्मी वग़ैरा के साथ शराफ़ते निस्बती (ख़ानदानी) भी हो मसलन वह कुरैशी हो, सैयद हो, या शैख़ हो, या अन्सारी हो, तो वह अफ़ज़ल होगा। बमुक़ाबला दूसरे हज़रात के "ثم الاشرف نسبًا" का हामिल है।

उन लोगों का क़ौल ज़ो ये कहते हैं कि सिवाए शैख़ व सैयद वग़ैरा के किसी के पीछे नमाज़ नहीं होती, ग़लत है। कोई क़ौम हो ख़्वाह सैयद या शैख़ या पठान वग़ैरा या नौर बाफ़ (जुलाहे) या नद्दाफ़ (रूई धुनने वाले) और हज्जाम (नाई) वग़ैरा जो लाइक़ इमामत के हैं। उनके पीछे नमाज़ सहीह है और उनमें ज़्यादा इल्म व तक़्वा व क़िराअत वालों को तरजीह दी जाएगी और अगर सब इल्म व तक़्वा में और क़िराअत में बराबर हैं तो जो अशरफ़ है नसब के एतेबार से वह ज़्यादा मुस्तहिक़्क़ इमामत होगा।

अल्ला तआला के नज़दीक बुज़ुर्ग तर वह है जो मुत्तक़ी ज़्यादा है जैसा कि क़ुरआन मजीद में है।

"اِنَّ اَكْرَمَكُمْ عِنْدَ اللّٰهِ اَتْقٰكُمْ"

लेकिन बावजूद सआदते तक़्वा के अगर शराफ़ते निस्बती भी हो तो नूरुन अला नूर है लेकिन हक़ीर समझना किसी मुसलमान को और किसी पेशा वर को दुरुस्त नहीं है। "انّما المومنون اخوة" (आम मुसलमान भाई हैं) को इस मौक़ा पर ज़रूर याद रखना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–81, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–521)

सहीह मख़ारिज पर ग़ैर क़ादिर की इमामत

सवाल: एक इमाम साहब अच्छा पढ़ने वाले नहीं हैं, और कई हुरूफ़ समझ में नहीं आते, कुछ लोगों का ख़्याल है कि उनको इमामत से माज़ूल कर दिया जाए, वह ये कहते हैं कि मैंने चूंकि नये दाँत लगवाए हैं इसलिए तारों की वजह से आवाज़ भारी हो जाती है।

बाक़ी रहा इशकाल हुरूफ़ समझ में न आने का तो इमाम साहब का कहना है कि तमाम हुरूफ़ समझता हूँ, क्या उनकी इमामत दुरुस्त है?

जवाब: अगर ये इमाम हुरूफ़ को उनके मख़ारिज से सहीह तरह से अदा करता हो और क़रीब से सुनने वाले तमाम हुरूफ़ को बख़ूबी समझ भी सकें तो ये इमाम ज़्यादा हक़दार है इमामत का, उसको बरक़रार रखना चाहिए, और अगर हुरूफ़ को सहीह तरीक़े से मख़ारिज से अदा करने की क़ुदरत न रखता हो, ख़्वाह ये अदमे क़ुदरत नये दाँतों की वजह से हो या और कोई सबब हो, और क़रीब से सुनने वाले तमाम हुरूफ़ को बख़ूबी साफ़

और वाज़ेह तौर पर न समझ सकें तो उसकी इमामत दुरुस्त नहीं।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–302)

अगर कुरआन शरीफ़ ऐसा ग़लत पढ़ता है कि जिससे मअ़ना बिगड़ जाते हैं तो उसके पीछे बिल्कुल अनपढ़ लोगों की जिनको तीन आयतें भी सहीह याद नहीं नमाज़ दुरुस्त है, और जिसको तीन आयतें सहीह याद हैं उनकी नमाज़ दुरुस्त नहीं, किसी सहीह पढ़ने वाले को इमाम बनाना चाहिए जिससे सब की नमाज़ दुरुस्त हो जाए।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–39)

फ़र्ज़ पढ़ चुकने के बाद फिर फ़र्ज़ की इमामत

मस्अला ये है कि जिसने फ़र्ज़ पढ़ लिए हों वह फिर इमाम, फ़र्ज़ पढ़ने वालों का नहीं हो सकता, जिसने अपनी नमाज़े फ़र्ज़ तन्हा पढ़ ली तो फ़र्ज़ उसके अदा हो गए, अब उनको नफ़्ल नहीं कर सकता, बल्कि अगर दोबारा उसी नमाज़ को पढ़ेगा तो वह नफ़्ल होगी, और नफ़्ल पढ़ने वाले के पीछे फ़र्ज़ पढ़ने वालों की नमाज़ नहीं होती।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–108, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–542)

ऐसे शख़्स की इमामत जिसके ज़िम्मा क़ज़ा नमाज़ हो

सवालः ज़ैद साहबे तरतीब है, और एक मस्जिद में

इमाम है, इत्तिफ़ाक़ से उसकी एक नमाज़ क़ज़ा हो गई दूसरी नमाज़ की जमाअत का वक़्त हो गया, मगर वह इससे पहले क़ज़ा नमाज़ नहीं पढ़ सका इसलिए ज़ैद ने उस वक़्त वक़्ती नमाज़ पढ़ा दी, और मज़ीद चार नमाज़ें गुज़रने के बाद क़ज़ा नमाज़ पढ़ ली, इस सुरत में मुक़्तदियों की नमाज़ में तो कोई फ़साद नहीं आया?

जवाबः इस सूरत में मुक़्तदियों को चाहिए कि वह इमाम को पहले क़ज़ा नमाज़ पढ़ने का मौक़ा दें इमाम को लाज़िम है कि इमामत न करे, बल्कि कोई दूसरा शख़्स नमाज़ पढ़ाए, और ये क़ज़ा नमाज़ पढ़ने के बाद जमाअत में शरीक हो, इसी तरह ज़ैद ने नमाज़ पढ़ा दी तो उसकी नमाज़ की तरह मुक़्तदियों की नमाज़ भी मौक़ूफ़ हो गई अगर फ़ौत शुदा नमाज़ की क़ज़ा से पहले ऐसी पाँच नमाज़ों का वक़्त गुज़र गया कि उनकी अदाएगी के वक़्त क़ज़ा नमाज़ भी याद थी तो सब की नमाज़ें दुरुस्त हो गईं। (रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–569) की इबारत से मालूम होता है कि इमाम के याद होने की सूरत में मुक़्तदियों की नमाज़ का कोई अलग हुक्म नहीं ब्यान किया गया, इससे साबित हुआ कि इमाम की तरह मुक़्तदियों की नमाज़ भी बिलआख़िर सहीह हो जाएगी क़ानूने तब्ईयत का मुक़्तज़ा भी यही है।

मगर इमाम को ऐसा हरगिज़ नहीं करना चाहिए, इसलिए कि अगर उस दौरान में इमाम या मुक़्तदियों में से किसी का इंतिक़ाल हो गया तो क़ज़ा रह जाने वाली नमाज़ों का अज़ाब इमाम पर होगा।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–304)

जिस इमाम के ज़िम्मा वित्र की क़ज़ा हो

सवालः ज़ैद एक मस्जिद में इमाम है, आख़िरे शब में आँख न खुलने की वजह से ज़ैद की वित्र क़ज़ा हो गई। ऐसे वक़्त बेदार हुआ कि फ़ज्र की जमाअ़त का वक़्त क़रीब था। इसलिए वित्र की क़ज़ा पढ़े बग़ैर, फ़ज्र की जमाअ़त पढ़ा दी, दूसरे दिन इशराक़ के वक़्त वित्र की क़ज़ा पढ़ी, तो मुक़्तदियों की नमाज़ें सहीह होंगी या नहीं? अगर दूसरे दिन फ़ज्र से क़ब्ल वित्र की क़ज़ा पढ़ ले तो उसका क्या हुक्म है।

जवाबः इमाम की तरह मुक़्तदियों की नमाज़ें भी मौक़ूफ़ थीं। क़ज़ाए वित्र से क़ब्ल छः नमाज़ों का वक़्त गुजर जाने से सब की नमाज़ सहीह हो गई, बशर्तेकि उन नमाज़ों की अदाएगी के वक़्त क़ज़ा नमाज़ याद हो, अगर दूसरे रोज़ तुलूए आफ़ताब से क़ब्ल वित्र की क़ज़ा पढ़ लेता तो इमाम और मुक़्तदी सब की दरमियानी तमाम नमाज़ें बातिल हो जातीं।

तंबीहः इमाम को ऐसा करना जाइज़ नहीं, अगर इस दौरान में इमाम या किसी मुक़्तदी का इंतिक़ाल हो गया तो क़ज़ा रह जाने वाली नमाज़ों का अज़ाब इमाम पर होगा। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–305)

सुन्नते मुअक्कदा न पढ़ने वाले की इमामत

सवालः अगर जमाअ़त से पहले सुन्नते मुअक्कदा

नहीं पढ़ सका तो इमाम हो सकता है या नहीं, और मुक़्तदियों की नमाज़ में कुछ फ़र्क़ आएगा या नहीं?

जवाब: वह शख़्स इमाम हो सकता है और मुक़्तदियों की नमाज़ में कुछ कराहत और ख़लल न होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–96)

असनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–286 पर ये मस्अला इस तरह है– "इमाम को वक़्ते मुतअैयन की रिआयत रखना लाज़िम है इसलिए जमाअ़त के वक़्त से पहले सुन्नतों से फ़रागत का एहतेमाम करे, अगर कभी किसी उज़्र की वजह से ताख़ीर हो गई तो मुक़्तदियों को चाहिए कि इमाम को सुन्नतें अदा करने का मौक़ा दें।

और अगर ऐसा नहीं किया गया और बग़ैर सुन्नतें अदा किये नमाज़ पढ़ा दी तो भी दुरुस्त है।

मुस्तक़िल इमाम का हक़

सवाल: एक इमाम एक जगह इमामत पर मुतअैयन है क्या उस जगह दूसरा शख़्स जो उससे इल्म में ज़ाइद हो बिला इजाज़त इमामत कर सकता है या नहीं? अगर नहीं कर सकता तो बिला इजाज़त निकाह ख़्वानी किस तरह कर सकता है?

जवाब: अहादीस और रिवायाते फ़िक़्हीया से ये साबित हो गया है कि जो शख़्स इमाम किसी मुहल्ले का हो उसकी मौजूदगी में उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ दूसरा इमाम न हो और निकाह ख़्वानी के लिए शारेअ़ अलैहिस्सलाम ने क़ाज़ी निकाह ख़्वाँ को मुअैयन और मुक़र्रर नहीं किया

बल्कि ये काम औलिया के सिपुर्द किया है जिसकी तफ़सील फ़िक़्हा की किताबों में मौजूद है, पस निकाह ख़्वानी को इमामत पर क़यास करना सहीह नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–81, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–522)

मौजूदा इमाम की इजाज़त ज़रूरी है

सवालः एक मस्जिद में इमाम मुक़र्रर है, उसकी मौजूदगी में उससे ज़्यादा अफ़ज़ल शख़्स अगर आ जाता है तो मुक़्तदी इमाम साहब की इजाज़त के बग़ैर उसको इमाम बना लेते हैं ये फ़ेल जाइज़ है या नहीं?

जवाबः मस्जिद का जो इमाम मुक़र्रर हो और उसमें इमामत की अह्लियत हो तो वह इमाम मुक़र्रर रहे। दूसरे शख़्स की निस्बत इमामत का ज़्यादा मुस्तहिक़ है, अगरचे दूसरा शख़्स अफ़ज़ल व अअ़लम व अक़रा हो, लेकिन अगर चंद मुक़्तदियों ने उस दूसरे शख़्स को इमाम बना दिया तो उसमें भी कुछ हरज नहीं है। रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–522 में है कि अगर ज़्यादा फ़ज़ीलत वाले को किसी मुक़्तदी ने इमाम बना दिया है तो कोई मुज़ाइक़ा नहीं है। लेकिन बेहतर ये है कि बगै़र इजाज़ते इमाम मुअैयन इमामत न की जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–86)

नाइब इमाम की मौजूदगी में किसी और की इमामत

सवालः मुहल्ला के इमाम साहब मौजूद नहीं, लेकिन

वह अपना नाइब किसी मुक़्तदी को बना गए हैं, उस नाइब के होते हुए किसी दूसरे का इमामत करना कैसा है?

जवाबः नाइब इमाम के होते हुए दूसरे शख़्स को ख़ुद इमामत के लिए आगे नहीं बढ़ना चाहिए।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–77)

ज़रूरत के वक़्त बिला इजाज़त इमाम बनाना

सवालः सुब्ह या अस्र की नमाज़ का वक़्त क़रीबुलख़त्म है और पेश इमाम साहब मौजूद नहीं, (नामूल ज़रूरत या सुस्ती की बिना पर वह मस्जिद में मौजूद नहीं) तो अब अगर मुक़्तदियों ने किसी पढ़े लिखे को आगे बढ़ा दिया तो उसका बिला इजाज़ते इमाम, इमामत करना कैसा है?

जवाबः दुरुस्त है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–82)

इमाम की इजाज़त मुक़्तदी के लिए शर्त नहीं

सवालः ज़ैद इमामे मस्जिद है। बकर से कहता है कि तुम हमारे पीछे नमाज़ न पढ़ना, तो क्या बकर ज़ैद के पीछे नमाज़ पढ़ सकता है या नहीं?

जवाबः ज़ैद के पीछे बकर नमाज़ पढ़ सकता है और नमाज़ सहीह है। ज़ैद की इजाज़त और हुक्म की ज़रूरत नहीं है। बकर हर हाल में उसके पीछे नमाज़ पढ़ सकता है और ज़ैद का ये कहना बेजा और ख़िलाफ़े शरीअत था।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–148, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब शुरूतुस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–394)

क़अदए अख़ीरह में इमाम फ़ौत हो गया तो क्या हुक्म है

"इस सूरत में नमाज़ बातिल हो जाएगी, दोबारा पढ़नी पड़ेगी।" (फ़तावा रहीमीया जिल्द–3 सफ़्हा–38, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–588)

शाफ़ई इमाम की इत्तिबा इख़्तिलाफ़ी मसाइल में

सवाल: (1) इमाम शाफ़ई–युल–मज़हब के पीछे हनफ़ी मुक़्तदी को सूरए हज के सज्दए सानिया के वक़्त सज्दए तिलावत करना चाहिए या नहीं, नीज़ सूरए हज में शाफ़ई इमाम तो सज्दा न करेगा, मुक़्तदी उस वक़्त करे या बाद में या साक़ित हो गया?

(2) नीज़ हनफ़ी इमाम के साथ फ़ज्र में कुनूत पढ़े या नहीं अगर पढ़ लिया तो नमाज़ फ़ासिद तो न होगी?

(3) ईद में तकबीराते ज़ाएदा शाफ़ई इमाम के पीछे छः कहें या बवज्हे मुताबअ़ते इमाम नौ, अगर नौ पढ़ें तो नमाज़ हुई या नहीं?

(4) अगर अस्र का वक़्त हनफ़ीया के नज़दीक न हुआ हो और शाफ़ई इमाम इब्तिदाए वक़्त में अस्र पढ़े तो क्या हनफ़ी इक़्तिदा कर सकता है, अगर कर ली तो इआदा वाजिब होगा या नहीं?

जवाब: (1) इमाम की मुताबअ़त में सूरए हज का

सज्दए सानिया मुक़्तदी को कर लेना चाहिए, (शामी जिल्द–1 सफ़्हा–801) और सूरए साद का सज्दा इमाम न करे तो मुक़्तदी को भी नहीं करना चाहिये, क्योंकि सज्दए सूरए (साद) मुख़्ततफ़ फ़ीह है और वजूबे इत्तिबाए इमाम मुत्तफ़क़ अलैहि (शामी जिल्द–1 सफ़्हा–490) जब नमाज़ में सज्दा न किया तो बाद में भी न करेगा।

(2) मुक़्तदी को ऐसी हालत में ख़ामोश खड़ा रहना चाहिए, अगर कुनूत पढ़ेगा तो मकरूह का मुरतकिब होगा।
(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–700)

(3) नौ तकबीरें इमाम की मुताबअ़त में कहने से नमाज़ में कोई ख़राबी न आएगी। (शामी जिल्द–1 सफ़्हा–492)

(4) बेहतर ये है कि अस्र की नमाज़ मिसलैन से क़ब्ल न पढ़ी जाए, ताहम अगर किसी ने पढ़ी तो सहीह हो जाएगी। (कबीरी सफ़्हा–225)

इमाम शाफ़युल मज़हब के मुतअ़ल्लिक़ अगर वसूक़ हो कि वह हनफ़ीया के मज़हब की रिआयत करता है तो हनफ़ी को उसकी इक़्तिदा जाइज़ है।

अगर वसूक़ से मालूम है कि वह हनफ़ीया के मज़हब की रिआयत नहीं करता तो उसकी इक़्तिदा दुरुस्त नहीं, और अगर रिआयत और अदमे रिआयत कुछ मालूम नहीं तो इक़्तिदा मरूह है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–95)

शाफ़ई और अह्लेहदीस की इमामत

सवालः हनफ़ी मसलक वाले की नमाज़ अह्ले हदीस

या शाफ़ई इमाम के पीछे हो सकती है या नहीं?

जवाबः अगर ये यक़ीन हो कि इमाम नमाज़ के अरकान व शराइत में दूसरे मज़ाहिब की रिआयत करता है तो उसकी इक़्तिदा में बिला कराहत जाइज़ है और अगर रिआयत न करने का यक़ीन हो तो उसके पीछे पढ़ी हुई नमाज़ सहीह न होगी, और जिस का हाल मालूम न हो उसकी इक़्तिदा मकरूह है, आज कल के गैर मुक़ल्लिदीन की अक्सरीयत यही नहीं कि रिआयते मज़ाहिब का ख़्याल रखती है, बल्कि उसको ग़लत समझती है और अ़मदन उसके ख़िलाफ़ एहतेमाम करती है और उसको सवाब समझती है, इसलिए उनकी इक़्तिदा से जहाँ तक मुम्किन हो एहतेराज़ लाज़िम है, मगर ज़रूरत के वक़्त उनके पीछे नमाज़ पढ़ ले जमाअ़त न छोड़े।

ये तफ़सील उस वक़्त है जबकि ये इमाम सहीहुलअक़ीदा हो, अगर उसका अक़ीदा फ़ासिद है, मुक़ल्लिदीन को मुशरिक जानता है और सब्बे सलफ़ करता है तो उसकी इमामत बहरहाल मकरूहे तहरीमी है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़हा–282, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–526)

शाफ़ई इमाम की इक़्तिदा में रफ़एयदैन

सवालः ज़ैद मज़हबन हनफ़ी है। वह बाजमाअ़त नमाज़ एक ऐसे इमाम के पीछे पढ़ता है जो शाफ़ई या हंबली है, लिहाज़ा ज़ैद न तो आमीन ज़ोर से कहता है और न रफ़एयदैन करता है, चुंकि ये इमाम की इत्तिबा या तक़लीद

न हुई तो ऐसी सूरत में ज़ैद की नमाज़ सहीह हुई या नहीं?

इसी तरह शाफ़ई हनफ़ी इमाम के पीछे नमाज़ पढ़े और वह इमाम की इत्तिबा के ख़िलाफ़ रफ़एयदैन करे और आमीन ज़ोर से कहे, इसकी क्या सूरत है?

जवाबः इन उमूर में इमाम की इत्तिबा लाज़िम नहीं। लिहाज़ा हनफ़ी की नमाज़ शाफ़ई के पीछे और शाफ़ई की हनफ़ी के पीछे दुरुस्त है, अहनाफ़ रफ़एयदैन न करें।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–316, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–780)

हनफ़ी मुक़्तदी अगर शाफ़ई इमाम के पीछे ईद की नमाज़ पढ़े तो तकबीराते ईद में इत्तिबा शाफ़ई इमाम की करनी चाहिए, लेकिन शाफ़ई वग़ैरा इमाम की मुस्तक़िल तौर पर फ़ज्र में पढ़ी जाने वाली कुनूत रफ़एयदैन और नमाज़े जनाज़ा की चार से ज़ाइद तकबीर में इत्तिबा न की जाए कि वह मनसूख़ हैं।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–273)

हनफ़ी इमाम शाफ़ई मुक़्तदियों की किस तरह इमामत करे

सवालः मैं हनफ़ीयुल मज़हब हूँ, शाफ़ई मज़हब के मकतब में पढ़ाता हूँ, कभी कभी जेह्री नमाज़ पढ़ाता हूँ, तो अगर मैं शाफ़ईयुल मज़हब के मुक़्तदियों का लिहाज़ कर के सूरए फ़ातिहा के बाद इतनी देर ख़ामोश रहूँ जितनी देर में वह लोग जल्दी से सूरए फ़ातिहा पढ़ लें, फिर दूसरी सूरत शुरू कर दूँ तो इसमें कोई हरज है?

जवाबः हनफ़ी इमाम के लिए इस तरह (सूरए फ़ातिहा

के बाद सूरत मिलाने में) ताख़ीर जाइज़ नहीं है, ममनूअ़ है, नमाज़ नाक़िस और वाजिबुलएआदा होगी, यानी दोबारा वह नमाज़ पढ़नी पड़ेगी।

सज्दए सह्व भी काफ़ी न होगा। क्योंकि सूरते मसऊला में क़सदन ताख़ीर की गई है ये सह्व नहीं है क्योंकि जान बूझ कर किया है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–166)

हनफ़ी इमाम शवाफ़ेअ़ को ईद की नमाज़ पढ़ा सकता है मगर अपने तरीक़ा पर पढ़ाए, मुक़्तदियों को उसकी इत्तिबा करना होगी, और अगर मुक़्तदी रज़ा मंद न हों तो उनमें से कोई इमाम बन जाए और हनफ़ी उसकी इक़्तिदा में नमाज़ पढ़ लें और उनको इमाम की इत्तिबा में तकबीरें ज़्यादा कहनी होंगी।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–6 सफ़्हा–359, बहवाला दुर्रेमुख़्तार मअ़ शामी जिल्द–1 सफ़्हा–780)

नापाक हालत में नमाज़ पढ़ा दी तो क्या हुक्म है

सवालः अगर किसी इमाम ने हालते हदस या हालते जनाबत में नमाज़ पढ़ा दी तो उन नमाज़ों का क्या हुक्म होगा। जबकि ये याद न हो कि इस वक़्त कौन कौन नमाज़ी थे और किस को किस तरह इत्तिला दे?

जवाबः दुर्रेमुख़्तार में है कि अगर इमाम ने हालते जनाबत में, हालते हदस में, नमाज़ पढ़ा दी तो उसको लाज़िम है कि मुक़्तदियों को इत्तिला कर दे।

पस इमाम मज़कूर को चाहिए कि जहाँ तक हो सके,

जो जो मुक़्तदियों में याद आ जाएँ उनको इत्तिला कर दे कि फ़लाँ वक़्त की नमाज़ का एआदा कर लें, क्योंकि वह नमाज़ नहीं हुई थी और जो याद न आए उसकी नमाज़ हो गई। उसको इत्तिला न होने में कुछ हरज नहीं है, अगर फिर कभी याद आ जाए तो उसको भी इत्तिला कर दी जाए और ख़ुद इमामे मज़कूर भी उस नमाज़ का एआदा करे और उस गुनाह से तौबा व इस्तिग़फ़ार करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–77, बहवाला दुर्रेमुख़्तार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–553)

अरसए दराज़ तक इमामत के बाद इक़रारे कुफ़्र

सवालः एक शख़्स मुद्दत तक नमाज़ पढ़ाता रहा अब वह ख़ुद अपने कुफ़्र का इक़रार करता है और कहता है कि वह कुफ़्र की हालत में इमामत करता रहा है, क्या मुक़्तदियों पर उस मुद्दते मदीदा की नमाज़ों का एआदा वाजिब है?

जवाबः अगर उसके कुफ़्र पर सिवाए इक़रार के और कोई दलील नहीं तो उसको इक़रार के वक़्त से मुरतद क़रार दिया जाएगा। गुज़श्ता ज़माने में उसकी इक़्तिदा में पढ़ी गई नमाज़ें दुरुस्त हैं। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–279, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–554)

अरसा के बाद इमाम के काफ़िर होने का इल्म

सवालः एक शख़्स अरसए दराज़ तक इमामत करता

रहा अब क़राईन से पता चला कि वह काफ़िर है मगर ख़ुद वह शख़्स काफ़िर होने का इक़रार नहीं करता बल्कि अपने आपको मुसलमान कहता है। मगर लोगों को उसके क़ौल पर एतेमाद नहीं, बल्कि लोगों का ख़्याल ये है कि अपने को मुसलमान ज़ाहिर करता है। निफ़ाक़ की वजह से, तो क्या जितनी नमाज़ें उसकी इक़्तिदा में पढ़ी गई उनका एआदा वाजिब है?

जवाबः अगर शवाहिद व क़राईन से उसके कुफ़्र का ज़न्ने ग़ालिब हो जाए तो उसके पीछे पढ़ी गई नमाज़ों का एआदा फ़र्ज़ है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–279, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–553)

क्या तरावीह पढ़ाना इमाम की ज़िम्मादारी है?

सवालः इमाम साहब पाँचों वक़्त नमाज़ पाबंदी से पढ़ाते हैं मगर तरावीह में सुनाने की आदत नहीं रही है। बाज़ कहते हैं तरावीह पढ़ाना इमाम की ज़िम्मादारी है। शरीअ़त का क्या हुक्म है?

जवाबः तरावीह में जब कि इमाम साहब कुरआन शरीफ़ सुनाने से आजिज़ और क़ासिर हैं तो "اَلَمْ تَرَكَيْفَ" से पढ़ाने के ज़िम्मादार हैं।

अगर मुक़्तदी हज़रात तरावीह में कुरआन शरीफ़ सुनने की सआदत हासिल करना चाहते हैं तो उसका इंतिज़ाम मुक़्तदी हज़रात ख़ुद करें इमाम साहब को मजबूर न करें।

लिवज्हिल्लाह तरावीह पढ़ाने वाला न मिल सके तो

किसी हाफ़िज़ को रमज़ान के लिए नाइब इमाम मुक़र्रर कर लें। इशा वग़ैरा एक दो नमाज़ें उसके ज़िम्मे लाज़िम कर देनी चाहिए और वह तरावीह भी पढ़ाए तो उजरत देने की गुंजाईश निकल सकती है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–349)

तरावीह में इमामत का हक़

सवालः बकर एक मस्जिद में इमाम मुक़र्रर हुआ है और हाफ़िज़े कुरआन है, ज़ैद भी हाफ़िज़े कुरआन है और वह ज़मानए बईद से उस मस्जिद में तरावीह पढ़ाता था अब बकर कहता है कि मैं इमाम मुक़र्रर हुआ हूँ। तरावीह पढ़ाने का हक़ मुझको है, ज़ैद कहता है कि मेरा क़दीमी हक़ है तो किस को हक़ है?

जवाबः सूरते मस्ऊला में जबकि बकर इमाम मुक़र्रर हो गया है तो तरावीह की भी इमामत का हक़ उसी को हासिल है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–282, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–22 बाबुलइमामत)

तरावीह में मुआवज़ा की शरई हैसियत

सवालः रमज़ान शरीफ़ में ख़त्मे कुरअन शरीफ़ की ग़रज़ से हाफ़िज़ साहब का लेने देने की नीयत से सुनना सुनाना और बाद में लेना देना कैसा है? नीयत दोनों की लेने देने की होती है। बग़ैर इसके सुनता सुनाता नहीं है।

अगर किसी मस्जिद में कुरआन शरीफ़ न सुनाया जाए महज़ तरावीह पढ़ने पर इक्तिफ़ा किया जाए तो वह लोग फ़ज़ीलते क़यामे रमज़ान से महरूम होंगे या नहीं?

जवाबः उजरत पर कुरआन शरीफ़ पढ़ना दुरुस्त नहीं है, इसमें सवाब भी नहीं है और बहुक्म "अलमारूफ़ कलमशरूत" जिसकी नीयत लेने देने की है वह भी उजरत के हुक्म में है और नाजाइज़ है।

इस हालत में सिर्फ़ "اَلَـمْ تَـرَكَيْفَ" से तरावीह पढ़ना और उजरत का कुरआन शरीफ़ न सुनना बेहतर है और सिर्फ़ तरावीह अदा करने से क़यामे रमज़ान की फ़ज़ीलत हासिल हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–246, बहवाला रद्दुलमुहतार मब्हसे तरावीह जिल्द–1 सफ़्हा–690)

इमामते तरावीह के लिए बुलूग़ शर्त है

मस्अला ये है कि अगर लड़के में और कोई अलामते बुलूग़ मसलन एहतिलाम व इंज़ाल न पाई जाए तो पूरे पन्द्रह साल होने पर शरअ़न बालिग़ समझा जाता है। पस जिस की उम्र यकुम रमज़ान शरीफ़ को चौदह साल ग्यारह माह की हुई। उसकी इमामत तरावीह और वित्र में दुरुस्त नहीं है, क्योंकि सहीह मज़हब इमाम अबूहनीफ़ा का यही है कि नाबालिग़ की इमामत फ़राइज़ व नवाफ़िल और वाजिब में दुरुस्त नहीं है, अलबत्ता अगर कोई अलामत बुलूग़ की पाई जाए तो दुरुस्त है।

नीज़ चौदह साल की उम्र के लड़के के पीछे फ़राइज़

व़ तरावीह कुछ दुरुस्त नहीं, जबकि पूरे पन्द्रह बरस का न हो जाए, अलबत्ता चौदह साल की उम्र में बालिग़ होने के आसार पैदा हो चुके हों और वह भी कहे कि मैं बालिग़ हो चुका हूँ तो उसके पीछे दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–226, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–539)

माज़ूर हाफ़िज़ की इमामत

हाफ़िज़ साहब अगर उज़्र की वजह से बैठ कर तरावीह पढ़ाएँ और मुक़्तदी हज़रात खड़े हों तो बाज़ फुक़हा ने कहा है कि सब की नमाज सहीह हो जाएगी, और बाज़ फुक़हा ने कहा है कि मुक़्तदिया का बैठना मुस्तहब है ताकि इमाम की मुताबअ़त बाक़ी रहे, मुख़ालफ़त की सूरत न रहे (दोनों सूरतें जाइज़ हैं)

तरजुमा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–189)

जिसने इशा की नमाज़ नहीं पढ़ी उसकी इमामत

सवालः इशा की जमाअ़त हो गई। उसके बाद तरावीह की जमाअ़त होने लगी तो हाफ़िज़ साहब जिन्होंने अभी इशा के फ़र्ज़ अदा नहीं किए थे नमाज़े तरावीह पढ़ाने के लिए खड़े हो गए और दो रकअ़त तरावीह पढ़ा दी मुक़्तदियों में से बाज़ ने एतेराज़ किया तो हाफ़िज़ को हटा दिया गया, उसके बाद इमाम साहब की इक़्तिदा में बक़िया तरावीह अदा की गई।

दरयाफ़्त तलब अम्र ये है कि मुक़्तदियों की पहली दो रकअ़तें सहीह हुईं या नहीं अगर नहीं हुईं तो क्या उनका एआदा ज़रूरी है?

जवाबः सूरते मस्ऊला में तरावीह की दो रकअ़तें क़ाबिले एआदा थीं, क्योंकि तरावीह इशा के बाद है **पहले नहीं।**

उसी वक़्त एआदा कर लेना था और अगर एआदा नहीं किया गया तो बाद में सुब्ह सादिक़ से पहले तन्हा तन्हा पढ़ी जा सकती थी।

अब वक़्त निकल गया उसकी क़ज़ा नहीं है, इस्तिग़फ़ार करें और उन दो रकअ़तों में जितना कुरआन शरीफ़ पढ़ा गया था उसको लौटाया न गया हो तो दूसरे दिन लौटा लिया जाए।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–385, बहवाला कबीरी सफ़्हा–385)

वित्र की इमामत

वित्र की जमाअ़त का इमाम फ़र्ज़ नमाज़ के इमाम के अलावा हो सकता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–158)

ये जो मशहूर है कि जो शख़्स फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ाए वही वित्र पढ़ाए, अगर दूसरा शख़्स वित्र पढ़ाए तो जाइज़ नहीं, ये ग़लत है। दूसरा शख़्स वित्र पढ़ा सकता है दुरुस्त है। (फ़तावा रशीदिया कामिल सफ़्हा–328)

ये सूरत जाइज़ है, तरावीह पढ़ाने वाला वित्र पढ़ा सकता है, जबकि वह बालिग़ हो, क्योंकि नाबालिग़ के

पीछे न तरावीह दुरुस्त है और न वित्र।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–192)

इमाम सिर्फ़ फ़र्ज़ पढ़ाए और हाफ़िज़ वित्र

सवालः इमाम साहब अगर इशा के फ़र्ज़ और वित्र पढ़ाएँ या सिर्फ़ फ़र्ज़ पढ़ाएँ और हाफ़िज़ साहब तरावीह पढ़ाएँ तो क्या हुक्म है?

जवाबः इसमें मुज़ाएक़ा नहीं, हज़रत उमर (रज़ि.) फ़र्ज़ नमाज़ और वित्र पढ़ाते थे और हज़रत उबैय इब्न कअ़ब (रज़ि.) तरावीह पढ़ाते थे। इसी तरह से इमाम सिर्फ़ फ़र्ज़ पढ़ाए और हाफ़िज़ साहब तरावीह और वित्र पढ़ाएँ तो उसमें भी कोई हरज नहीं।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–394, बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–74)

टेलीवीज़न से इमामत

नमाज़ कोई मशीनी अमल नहीं है बल्कि एक इबादत है जिसमें इंसान अपने पूरे वजूद, ज़ाहिरी और बतिनी कैफ़ियत, क़ल्ब व रूह व दिल व दिमाग़, ज़बान, आज़ा व जवारेह और हरकात व सकनात के साथ ख़ुदा के हुज़ूर हाज़िर होता है, ये ख़ुदा से हम कलामी और क़ल्ब के ख़ौफ़ व आ़जिज़ी से लबरेज़ होने का इज़हार और निशान होता है, इमाम जो कुछ बोलता है वह गोया ग़ायत दरजा एहतिराम व अदब और ख़ुशूअ़ व ख़ुज़ूअ़ के साथ अपने

मुक़्तदियों की बात ख़ुदा तक पहुचाने का काम करता है।

टेलीवीज़न की इमामत में जो नमाज़ होगी वह महज़ एक मशीनी हरकत होगी। इसमें वह ख़ौफ़ व ख़शीयत, तवाज़ोअ़ व इनकिसारी, अदब व शाइस्तगी और ख़ौफ़ व रजा कहाँ हो सकता है, इसलिए फ़िक़्ही नुक़तए नज़र से हट कर इबादत व बंदगी की रूह और उसकी शान व कैफ़ियत भी उसके मुग़ाएर है कि इंसान उन मसनूई कल पुरज़ों की इक़्तिदा में नमाज़ अदा करने लगे। फ़िक़्ही एतेबार से "इक़्तिदा" सहीह होने के लिए ज़रूरी है कि इमाम व मुक़्तदी के दरमियान शारेअ़ आम, बड़ी नहर, या किसी पुल वग़ैरा का फ़ासिला न हो, इतने फ़ासिले की मौजूदगी में इक़्तिदा दुरुस्त न होगी।

(फ़तावा हिन्दीया जिल्द–1 सफ़्हा–45)

यही हुक्म टेलीवीज़न में भी है कि अगर अस्ल इमाम और मुक़्तदियों के दरमियान सफ़ों के तसलसुल के बग़ैर इस क़दर फ़स्ल हो तो इक़्तिदा दुरुस्त न होगी और अगर बड़ा मजमा हो तो सफ़ों का तसलसुल भी क़ाइम हो अलबत्ता नमाज़ गाह में आसानी और नक़्ल व हरकत के अंदाज़ा के लिए मुख़्तलिफ़ जगह टेलीवीज़न लगा दिए जाएँ तो नमाज़ हो जाएगी, लेकिन अमले कराहत से ख़ाली न होगा इसलिए कि टी0 वी0 की फ़िक़्ही हैसियत से क़तअ़ नज़र नमाज़ के सामने इस तरह तसवीरों का आना बजाए ख़ुद भी मकरूह है और इसलिए भी कि इससे ख़ुशूअ़ मुतअस्सिर होगा। जहाँ तक नक़्ल व हरकत की इत्तिला का मस्अला है तो वह लाउड स्पीकर से भी मुम्किन है। (जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा–58)

टेप रिकार्ड से इमामत

टेप रिकार्ड से न इमामत दुरुस्त है और न अज़ान, इसलिए कि इमाम और मुअज़्ज़िन वही हो सकता है जो "नातिक़" और "गोया" हो और टेप रिकार्ड में खुद गोयाई नहीं है, बल्कि एक बेइरादा ग़ैर मुख़्तार नक़्ल करने का आला है जो किसी आवाज़ की नक़्ल करता है। अज़ान व इमामत इबादत है जो क़ल्ब की कैफ़ियत के साथ अंजाम दी जाती है और टेप रिकाड़ एक जामिद और ग़ैर हस्सास शय है जिसकी आवाज़ को इबादत नहीं कहा जा सकता। उसकी आवाज़ की हैसियत मुस्तक़िल "बोल" की नहीं होती है, बल्कि वह ताबेअ़ महज़ है।

यही वज़ह है कि अगर कोई शख़्स टेप रिकार्ड पर तलाक़ देते हुए कहे कि मैंने तलाक़ दी है और उसको तीन दफ़ा बजाया जाए तो तलाक़ एक ही वाक़ेअ़ होगी उसकी तकरार की वजह से अस्ल तलाक़ में तकरार न होगा। कोई उसी तरह टेप पर हज़ार का इक़रार करे और उसे बार बार बजाया जाए तो इक़रार एक ही हज़ार का होगा, इसलिए कि उस आवाज़ की हैसियत ताबेअ़ की है।

लिहाज़ा इस तरह दी गई अज़ान और इमामत, अज़ान व इमामत न होगी, बल्कि महज़ उसका सौती और लफ़्ज़ी तकरार होगा, उसकी नज़ीर ये है कि फुक़हा ने सिखाए हुए परिन्दों की आवाज़ और तिलावत को अस्ल तिलावत का दर्जा नहीं दिया है और इसी लिए उसकी वजह से सज्दए तिलावत वाजिब नहीं होता।

(जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा—58, बहवाला फ़तावा हिन्दीया सफ़्हा—68)

इमामत का सब से ज़्यादा मुस्तहिक़

हनफ़ीया (रह.) के नज़दीक इमामत का ज़्यादा मुस्तहिक़ वह है जो नमाज़ के दुरुस्त या ना दुरुस्त होने के मसाइल को ज़्यादा जानता हो, और खुले गुनाहों से बचता हो।

उसके बाद वह शख़्स है जो कुरआन की तिलावत और तजवीद में बढ़ कर हो, उसके बाद वह जो इस्लाम लाने वालों में दूसरों पर मुक़द्दम हो ओर फिर वह जिसकी जिसमानी साख़्त बेहतर हो, फिर वह जिसकी सूरत सब से अच्छी हो, फिर वह जो ख़ानदान में सब से आला हो, फिर वह जिसका लिबास ज़्यादा सुथरा हो। अगर इन तमाम उमूर में सब बराबर हों और इमामत के बारे में बाहमी निज़ाअ़ व झगड़ा हो तो कुरआ़ अंदाज़ी से काम लिया जाए वरना जिसे भी जी चाहे इमामत के लिए आगे कर दें। अगर लोग कुरआ़ अंदाज़ी पर राज़ी न हों तो जिसके हक़ में अक्सरीयत की राये हो उसे इमाम बना लिया जाए, अगर कभी अक्सरीयत ने ग़ैर मुस्तहिक़ को इमाम चुन लिया तो बुरा किया लेकिन गुनाह नहीं है। ये तमाम मसाइल उस सूरत में हैं जबकि क़ौम का कोई बादशाह या उस जगह का जहाँ लोग जमा हुए हैं मालिक या वज़ीफ़ा पाने वाला न हो वरना इमामत के लिए सब से मुक़द्दम सुलतान (बादशाह) है, फिर साहबे ख़ाना, इसी तरह किसी मस्जिद का मुक़र्रर शुदा इमाम।

अगर घर में मालिक और किराये दार दोनों हों तो ज़्यादा हक़ किराये दार का है। अगर वह घर किसी औरत का हो तो हक़्क़े इमामत उसी औरत का है लेकिन उस औरत पर वाजिब है कि वह इमामत के लिए किसी को अपना नाइब बना दे, क्योंकि औरत का इमाम बनना दुरुस्त नहीं है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–684)

इमामत का मस्अला बड़ा अहम और अज़ीमुश्शान है इसलिए इमाम आला दरजा का मुत्तक़ी व परहेज़गार आलिम, आमिल, आक़िल, अख़लाक़े हमीदा से मुत्तसिफ़, हुस्ने क़िराअत से अच्छी तरह वाक़िफ़, सहीहुलअक़ीदा तंदुरुस्त व वजीहुस्सूरत नमाज़ के मसाइल का जानने वाला, और ज़ाहिरी उयूब से पाक होना चाहिए। (मुसलमानों के इमाम की हैसियत फ़ौज के कमान्डर से ज़्यादा ही है और फ़ौजी अफ़सर ज़ाहिरी ऐब वाला यानी अंधा, लूला, हाथ कटा, लंगड़ा, एक चश्म, बीमार अपाहिज वग़ैरा नहीं होता है।) नीज़ ये भी ज़रूरी है कि नमाज़ पढ़ने वालों ने इमाम को अपनी मर्ज़ी और ख़ुशी से इमामत के लिए मुक़र्रर किया हो और उसकी इमामत को दिल व जान से क़बूल करते हों।

इमामत के मकरूहात का ब्यान

(1) फ़ासिक़ का इमाम बनना मकरूह है, हाँ वह अपने जैसे का इमाम हो तो मकरूह नहीं है।

(2) बिदअ़ती की इमामत मकरूह है, लेकिन बिदअ़त कुफ़्र तक न पहुंची हो।

(3) इमाम का नमाज़ का तूल देना मकरूहे तहरीमी है। बजुज़ उस सूरत के जबकि कोई शख़्स महदूद अशख़ास का इमाम हो और वह लोग तूल देने पर राज़ी हों, क्योंकि आँहज़रत (स.अ.व.) का इरशाद है कि "مَنْ اَمَّ فَلْيُخَفِّفْ" (यानी जो इमाम हो वह नमाज़ मुख़्तसर करे)।

(4) नाबीना शख़्स का इमाम बनना मकरूहे तंज़ीही है हाँ अगर वह सब में अफ़ज़ल हुआ तो मकरूह नहीं है। यही हुक्म वलदुज़्ज़िना (नाजाइज़ औलाद) का है।

(5) आलिम की मौजूदगी में बे इल्म का इमाम बनना, ख़्वाह देहात का हो या शहर का बाशिंदा।

(6) गोरी चिट्टी सूरत वाले बेरीश लड़के का इमाम बनना, अगरचे वह ज़्यादा इल्म रखता हो, मकरूहे तंज़ीही है, ये कराहत उस सूरत में है जबकि इमामत से कोई ख़राबी पैदा होने का अंदेशा हो, अगर ऐसा अंदेशा न हो तो कमरूह नहीं है।

(7) ऐसे शख़्स का इमाम बनना जो बेवकूफ़ हो और भोंडा हो या फ़ालिज ज़दा या कोढ़ का मरीज़ हो जिसके बरस के दाग़ फैले हों, और जुज़ामी और अपाहिज को जो पूरे क़दमों पर खड़ा न हो सकता हो। नीज़ जिसका हाथ कटा हुआ हो इमाम बनना मकरूह है।

(8) उसकी इमामत भी मकरूह है जो उजरत ले कर लोगों की इमामत करे[1], अलबत्ता वक़्फ़ करने वाले ने उसकी उजरत के लिए शर्त लगा दी हो तो उसकी इमामत

(1) मतअख़्ख़िरीन फ़ुक़हाए ने इमामत की उजरत जाइज़ क़रार दी है, पस दौरे हाज़िर में ऐसे शख़्स की इमामत बिला कराहत दुरुस्त है।

मकरूह नहीं है, क्योंकि इस सूरत में वह उजरत यक गोना सदक़ा व इमदाद है।

(9) उस शख़्स की इमामत मकरूह है जो फ़ुरूई मसाइल में मुक़्तदी के मसलक से इख़्तिलाफ़ रखता हो। बशर्तेकि इस अम्र का अंदेशा हो कि वह ऐसे इख़्तिलाफ़ की परवाह न करेगा जिससे नमाज़ या वुज़ू जाता रहता है। लेकिन इस अम्र में शक न हो बईं तौर कि वह जानता हो कि उसे इख़्तिलाफ़ की परवाह है या ये कि उसे इस इख़्तिलाफ़ का इल्म ही नहीं तो इमामत मकरूह न होगी।

(10) इमाम का दूसरे तमाम मुक़्तदियों से एक हाथ ज़्यादा ऊँची जगह पर खड़ा होना मकरूह है। इससे कम ऊँची जगह हो तो मकरूह नहीं है, इसी तरह मुक़्तदियों का भी इमाम से इतनी ऊँची जगह पर होना मकरूह है।

इन दोनों सूरतों में कराहत उसी हालत में होगी जब कि इमाम के साथ उसके खड़े होने की जगह पर कोई फ़र्दे वाहिद भी शरीके जमाअ़त न हो, अगर एक शख़्स या ज़्यादा अशख़ास उसके साथ (उस जगह पर) खड़े हो जाएँ तो कराहत न रहेगी।

(11) उस शख़्स का इमाम बनना मकरूह है जिसे लोग नापसंद करते हों और उसकी किसी दीनी ख़राबी के बाइस उसके पीछे नमाज़ पढ़ने से कतराते हों।

(12) नमाज़े जनाज़ा के सिवा औरतों की जमाअ़त मकरूहे तहरीमी है। अगर जनाज़ा की नमाज़ औरतें पढ़ाएँ तो इमाम औरत उनके दरमियान (सफ़ के अन्दर) खड़ी हो जैसे उन आदमियों की जमाअ़त जिनका सत्र

ढँका हुआ न हो। औरतों का जमाअ़त में हाज़िर होना मकरूह है ख़्वाह जुमा या ईद का दिन हो या रात को वअज़ हो, हाँ दिन में ज़रूरतन कहीं परदा के साथ आना जाना जाइज़ है जबकि किसी ख़राबी के पैदा होने का अंदेश न हो।

(13) इसी तरह मर्द के लिए औरतों का इमाम बनना मकरूह है, जबकि जमाअ़त वाले ऐसे घर में हों जहाँ उनके साथ मर्द मुक़्तदी न हों या औरतें, इमाम की महरम जैसे माँ या बहन न हों।

(किताबुलफ़िक़्ह अलल मज़ाहिबिलअरबआ़ जिल्द–1 सफ़्हा–688)

(14) किसी ख़स्सी, ज़नख़े या नामर्द का इमामत के उहदा पर तक़र्रुर किया जाना मकरूह है इसी तरह उसकी भी इमामत मकरूह है जिसकी बातों में औरतों का सा अंदाज़ हो, या जो नाजाइज़ औलाद हो, लेकिन ऐसे अशख़ास अगर मुक़र्रर शुदा इमाम न हों तो उनकी इमामत मकरूह नहीं है।

(15) किसी गुलाम का इमाम मुक़र्रर किया जाना मकरूह है।

(16) ग़ैर मख़तून की इमामत मकरूहे तंज़ीही है इसी तरह उस शख़्स की इमामत जिसका हाल मालूम न हो कि नेकू कार है या बदकार है, या वह शख़्स जिसका नसब मालूम न हो।

(17) इमाम का मस्जिद की मेहराब में नफ़्ल पढ़ना या मेहराब के अन्दर हैअते नमाज़ में महज़ बैठना मकरूह है।

(18) नाबीना शख़्स का इमाम बनना जाइज़ है ताहम

बीना अफ़ज़ल है। (किताबुलफ़िक़्ह सफ़्हा–690)

लाउडस्पीकर (माइक) पर इमामत

लाउडस्पीकर के ज़रीए नमाज़ दुरुस्त है या नहीं? इब्तिदा में हिन्द और बैरूने हिन्द के उलमा के दरमियान इस मस्अला में इख़तिलाफ़ था। बाज़ हज़रात की राये थी कि लाउडस्पीकर की आवाज़ बिऐनिही इमाम की आवाज़ नहीं, बल्कि उस आवाज़ की बाज़गश्त है, इस तरह उस आवाज़ पर मुक़्तदियों की नक़्ल व हरकत गोया इमाम के बजाए एक दूसरी आवाज़ की बिना पर होगी और ये बात जाइज़ नहीं है कि मुक़्तदी इमाम के बजाए किसी और की आवाज़ पर नक़्ल व हरकत शुरू कर दें।

इसके मुक़ाबिले में कुछ लोगों का ख़्याल था कि उसके बावजूद नमाज़ के लिए लाउडस्पीकर का इस्तेमाल सहीह है और शरीअ़त में उसकी नज़ीर मौजूद है, कि नमाज़ के बाहर के एक शख़्स की तलक़ीन पर नमाज़ियों ने नक़्ल व हरकत की। चुनांचे जब बैतुलमुक़द्दस के बजाए ख़ानए कअ़बा को क़िबला बनाया गया और मदीना के मुज़ाफ़ात की बाज़ मसाजिद में जहाँ बैतुलमुक़द्दस ही की तरफ़ रुख़ कर के लोग नमाज़ अदा कर रहे थे। क़िबला की तबदीली की इत्तिला एक शख़्स ने दी और सभों ने अपना रुख़ बदल लिया। ज़ाहिर है ये नक़्ल व हरकत एक ऐसे शख़्स की आवाज़ पर अमल में आई जो नमाज़ से बाहर था।

अब ये बात पायए तहक़ीक़ को पहुंच चुकी है कि लाउडस्पीकर की आवाज़ इमाम की आवाज़ की नक़्ल

और उसका चरबा नहीं है, बल्कि बिऐनिही इमाम की वही आवाज़ है जो उसकी ज़बान से निकलती है इस तरह अब लाउडस्पीकर से नमाज़ व इमामत के जवाज़ पर उलमा का इत्तिफ़ाक़ हो चुका है। बाज़ उलमा इसके इस्तेमाल में एक गूना कराहत समझते हैं और नागुज़ीर ज़रूरत ही पर उससे काम लेने को दुरुस्त समझते हैं। उनकी दलील ये है कि फुक़हा ने बिला ज़रूरत इमाम की आवाज़ को तक़वियत देने वाले "मुकब्बिरीन" के तक़र्रुर को मकरूह और बिदअ़त क़रार दिया है लिहाज़ा यही हुक्म लाउडस्पीकर का भी होगा। मगर ये इस्तिदलाल क़ाबिले ग़ौर है कि मुकब्बिरीन की आवाज़ बिऐनिही इमाम की आवाज़ नहीं होती, जबकि लाउडस्पीकर (माइक) की आवाज़ का बिऐनिही इमाम की आवाज़ होना साबित हो चुका है। फिर उन दोनों को एक दर्जा क्योंकर दिया जा सकता है। हाँ ये ज़रूर है कि लाउडस्पीकर को हसबे ज़रूरत और इस तरह इस्तेमाल करना चाहिए कि उसकी आवाज़ मुनासिब हुदूद और मस्जिद में रहे। जैसा कि आज कल ये बात मुम्किन हो गई है।

(जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा–57)

इमाम जुमा के लिए बाहर जाए या जुहर की इमामत करे?

सवाल: गाँव के इमाम साहब जुमा के दिन दूसरे क़स्बा या शहर वग़ैरा में जुमा पढ़ने के लिए चले जाते हैं इमाम को अपने गाँव में जमाअ़ते जुहर करनी बेहतर है या दूसरी जगह जुमा पढ़ना? इस हदीस का मतलब क्या

है? कि "जिसने तीन या चार जुमा तर्क किए गोया उसने इस्लाम को पीठ दिखलाई।"

जवाबः इस हदीस शरीफ़ में वईद तर्के जुमा पर आती है, उसका मतलब तो ये है कि जिस जगह जुमा फ़र्ज़ हुआ और फिर कोई शख़्स जान बूझ कर बिला उज़्र तर्क करे तो उसके लिए ये वईद है और छोटे गाँव में जुमा फ़र्ज़ नहीं है और जुमा वहाँ अदा नहीं होता, वहाँ ये वईद और ये हुक्म नहीं है, बल्कि उनके लिए ये हुक्म है कि उनको गाँव में जुहर बा जमाअत अदा करनी चाहिए।

लेकिन अगर कोई शख़्स क़स्बा या शहर में जाकर जुमा पढ़े तो सवाब की बात है और जो शख़्स क़स्बा या शहर में न जाए वह गावँ में जुहर की नमाज़ पढ़े उसको उस क़स्बा या शहर में जाकर जुमा न पढ़ने से कुछ गुनाह न होगा। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–93, बहवाला आलमगीरी मिस्री बाब फ़िलजुमुआ जिल्द–1 सफ़्हा–136)

इमाम, जुमा में क़िराअत तवील करे या ख़ुत्बा

ख़ुत्बा मुख़्तसर होना चाहिए और क़िराअत, सुन्नत के मुवाफ़िक़ होनी चाहिए। जैसे सूरए "سَبِّحِ اسْمَ رَبِّكَ الْاَعْلٰى" वग़ैरा (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–92, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलजुमुआ जिल्द–1 सफ़्हा–758)

इमाम का ख़ुत्बा की हालत में किसी की ताज़ीम करना

सवालः इमाम ने ख़ुत्बा की हालत में ख़ुत्बा बंद कर

के किसी की ताज़ीम की और उसको मिम्बर पर चिढ़ा दिया फिर बाक़ी ख़ुत्बा अदा नहीं किया तो नमाज़ हुई या नहीं?

जवाबः नमाज़ हो गई मगर आइंदा ऐसा न करना चाहिए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–94, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलजुमुआ जिल्द–1 सफ़्हा–758)

इमाम व ख़तीब की अदमे मौजूदगी का हुक्म

सवालः (1) नमाज़ और ख़ुत्बा में मुक़र्रेरा वक़्त पर इमाम साहब और नाईब साहब हाज़िर न हों तो क्या आधा घन्टा इंतिज़ार के बाद मुतवल्ली साहब किसी दूसरे को इमाम बना सकते हैं?

(2) दूसरा शख़्स नमाज़ पढ़ा सकता हैं या नहीं वह नमाज़ सहीह होगी या नहीं?

(3) ख़तीब साहब अक्सर पंजवक़्ता नमाज़ में ग़ैर हाज़िर रहते हैं और तिजारत करते हैं। उनके पीछे नमाज़ दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः (1) (2) बन सकते हैं और दूसरा शख़्स नमाज़ पढ़ा सकता है और वह नमाज़ सहीह है।

(3) नमाज़ दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–131)

मिम्बर के दरजात की तादाद

हुज़ूर अकरम (स.अ.व.) के मिम्बर के तीन दरजे थे,

उसकी मुवाफ़क़त औला है और कमी व ज़्यादती भी जाइज़ है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–120)

क्या इमाम का मिम्बर पर खड़ा होना ज़रूरी है

मिम्बर पर खड़े हो कर ख़ुत्बा पढ़ना सुन्नत है, हुज़ूर अकरम (स.अ.व.) और हज़राते ख़ुलफ़ाए राशिदीन (रज़ि.) का यही मअ़मूल था।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–125, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–770)

मिम्बर के किस ज़ीना पर ख़ुत्बा दे?

इसमें शरअ़न कुछ तहदीद नहीं है, जौन से दर्जे (सीढ़ी) पर खड़ा हो जाए जाइज़ है और सुन्नत मिम्बर चढ़ने की अदा हो जाएगी।

पस इससे ज़्यादा की कुछ क़ैद शरअ़न नहीं है, दूसरे या तीसरे जिस दरजा पर खड़ा हो जाए दुरुस्त है इसमें कुछ सूए अदबी किसी की नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–116, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलजुमा जिल्द–1 सफ़्हा–770)

ख़ुत्बा में अफ़राद की शर्त

सवालः (1) अगर इमाम ने तन्हा ख़ुत्बा पढ़ा या सिर्फ़

औरतों और बच्चों के सामने ख़ुत्बा पढ़ा तो ये जाइज़ है या नहीं?

(2) अगर एक या दो अफ़राद के सामने ख़ुत्बा पढ़े और तीन या ज़्यादा आदमियों के साथ नमाज़ पढ़े तो दुरुस्त है या नहीं?

जवाब: जाइज़ नहीं, क्योंकि जुमा के ख़ुत्बा के लिए इमाम के अलावा कम अज़ कम तीन मर्दों का होना ज़रूरी है जिनसे जमाअ़त क़ाइम हो सके।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–223)

इमाम का अ़सा लेकर ख़ुत्बा देना

इससे मुतअ़ल्लिक़ इबाराते फ़िक़्हीया मुख़्तलिफ़ हैं। सूरते तत्बीक़ ये है कि फ़ी नफ़्सिही सुन्नते ग़ैर मुअक्कदा है मगर उसका इल्तिज़ाम व इस्तिमरार मकरूह व बिदअ़त है।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–142)

तत्बीक़ की ये सूरत हो सकती है कि ज़रूरत हो तो छड़ी हाथ में रख ले, कुछ हरज नहीं है और अगर ज़रूरत न हो तो न ले।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–66, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलजुमुआ जिल्द–1 सफ़्हा–773)

अ़सा हाथ में लेकर ख़ुत्बा पढ़ना साबित तो है लेकिन बग़ैर अ़सा के ख़ुत्बा पढ़ना इससे ज़्यादा साबित है पस हुक्म ये है कि अ़सा हाथ में लेना भी जाइज़ है और न लेना बेहतर है, और हनफ़ीया ने इसी को इख़्तियार किया

है पस इसको ज़रूरी समझना और न लेने वाले को तअ़न व तशनीअ़ करना दुरुस्त नहीं, इसी तरह लेने वाले को भी मलामत करना दुरुस्त नहीं है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–214)

अज़ाने ख़ुत्बा का हुक्म

पहली सफ़ की कै़द तो कहीं नहीं मिलती, अलबत्ता कुतुबे फ़िक़्ह के अलफ़ाज़ "اَمَامَ الْمِنْبَرِ، عِنْدَالْمِنْبَر اور بَيْنَ يَدَى الْمِنْبَر" से साबित होता है कि ये अज़ान मिम्बर के सामने और क़रीब होनी चाहिए। मिम्बर से क़रीब होने का मतलब ये नहीं कि सफ़े अव्वल ही में हो।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–126, बहवाला जामेउलरुमूज़ जिल्द–1 सफ़्हा–18)

क्या इमाम इक़ामत से पहले मस्अला बता सकता है

सवाल: इक़ामत से पहले इमाम के लिए कोई मस्अला ब्यान करना या वअ़ज़ व नसीहत करना जाइज़ है या नहीं?

जवाब: मुख़्तसर तौर पर कोई मसअ़ला बताना और अम्रे बिलमारूफ़ व नह्य अनिलमुनकर (बुराई से रोकना और भलाई का हुक्म देना) जाइज़ है, तवील वअ़ज़ जाइज़ नहीं।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–212, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–770)

खुत्बा और जुमा में फ़स्ल होना

सवालः जुमा और ख़ुत्बा में ज़्यादा फ़स्ल हो जाए तो क्या ख़ुत्बा का इआदा ज़रूरी है?

जवाबः ख़ुत्बा और जुमा में मोअ़तदबेह फ़स्ल हो जाने से एआ़दए ख़ुत्बा ज़रूरी है।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–112, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–771)

गैर ख़तीब की इमामते जुमा

ख़ुत्बा जुमा देने वाले के अलावा दूसरे शख़्स की इमामत जाइज़ है बशर्तेकि नमाज़ पढ़ाने वाला शख़्स ख़ुत्बा में हाज़िर हुआ हो, ख़्वाह कुल ख़ुत्बा में ये बाज़ में।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–111)

क्या इमामे जुमा सुन्नत पढ़ने वालों का इंतिज़ार करे

ख़तीब को इंतिज़ार करना सुन्नत पढ़ने वालों की फ़राग़त का लाज़िम नहीं है, जब मुक़र्ररा वक़्त हो जाए, ख़तीब ख़ुत्बा के लिए खड़ा हो सकता है, उस पर कुछ मुवाख़ज़ा और गुनाह नहीं है, क्योंकि इमाम मतबूअ़ है, ताबेअ़ नहीं है, मुक़्तदियों को तो ये हुक्म है कि जिस वक़्त ख़तीब जुमा के लिए मिम्बर पर आ जाए तो नवाफ़िल व सुन्नत न पढ़ें, लेकिन ख़तीब को ये हुक्म नहीं है कि

वह फ़रागत का इंतिज़ार करे, अगर दो चार मिनट का इमाम साहब इंतिज़ार कर लें तो इसमें कुछ हरज नहीं है, लेकिन इंतिज़ार न करने से इमाम गुनहगार न होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–76, बहवाला मिशकात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–101 बाबुलजुमुआ रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–767)

खुत्बा पढ़ने का तरीक़ा

हदीस शरीफ़ में है कि आँहज़रत (स.अ.व.) जब ख़ुत्बा देते तो चश्म मुबारक सुर्ख़ हो जाती, आवाज़ बुलंद और तर्ज़े कलाम में शिद्दत आ जाती और ऐसा मालूम होता कि कोई लश्कर हमला करने वाला है और आप मुख़ातबीन को उस ख़तरए अज़ीमा से आगाह फ़रमा रहे हैं।

(मुस्लिम शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–284)

पुरजोश मुक़र्रिरों की तरह आप (स.अ.व.) हाथ तो नहीं फैलाते थे, अलबत्ता समझाने या आगाह करने के मवाक़ेअ़ पर अंगुश्ते शहादत से इशारा फ़रमाया करते थे लिहाज़ा अगर आलिम ख़तीब हसबे मवाक़ेअ़ हाज़िरीन को ख़िताब करे और ख़ुत्बा को तरग़ीब व तरहीब के अंदाज़ में पढ़े तो जाइज़ और मसनून है, लेकिन दाएँ बाएँ रुख़ फेरना आँहज़रत (स.अ.व.) से साबित नहीं "बदाए" में है कि आँहज़रत (स.अ.व.) ख़ुत्बा के वक़्त क़िब्ला पुश्त हो कर और लोगों की तरफ़ रुख़ कर के खड़े रहते थे। (जिल्द–1 सफ़्हा–264) इसलिए अल्लामा इब्न हजर (रह.) वग़ैरा मुहक़्क़िक़ीन दाएँ बाएँ रुख़ करने को बिदअ़त कहते

हैं। (शामी जिल्द–1 सफ़्हा–759) हाँ रुख़ सामने रख कर दाएँ बाएँ नज़र करने में हरज नहीं है। (रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–759) नीज़ ये भी ज़ाहिर है कि तरग़ीब व तरहीब के मज़ामीन वही शख़्स सहीह अंदाज़ में अदा कर सकता है जो मअ़ना और मज़मून से वाक़िफ़ हो। ना वाक़िफ़ शख़्स ऐसी ग़लती कर सकता है जो वाक़िफ़ की नज़र में मज़हका अंगेज़ हो। लिहाज़ा ख़ुत्बा में जो भी अंदाज़ इख़्तियार किया जाए वह समझ कर इख़्तियार किया जाए।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–264)

क्या ख़ुत्बा में जेह्र शर्त है?

ख़ुत्बा में इस क़दर जेह्र (ज़ोर से पढ़ना) शर्त है कि पास बैठने वाला सुन सके।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–134)

ग़लती पर ख़तीब को लुक़मा देना

चूंकि ख़ुत्बा में कोई मुतअ़ैयन मज़मून पढ़ना ज़रूरी नहीं है। अगर एक मज़मून में ख़तीब रुक गया (और आगे चल न सका) तो और कुछ पढ़ सकता है।

लिहाज़ा लुक़मा देने की ज़रूरत नहीं, और हालते ख़ुत्बा में हर क़िस्म का तकल्लुम (बात चीत करना) नाजाइज़ है; इसलिए लुक़मा देना भी नाज़ाइज़ है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–141)

क्या मुकब्बिर के लिए इमाम की इजाज़त ज़रूरी है

सवाल: जुमा व ईदैन में बिला इजाज़ते इमाम, तकबीर पुकार कर रुकूअ व सज्दा में कहना ताकि नमाज़ियों को सहूलत हो जाइज़ है या नहीं? एक आलिम इमाम फ़रमाते हैं कि बिला इजाज़ते इमाम तकबीर पुकारने से मुकब्बिर की नमाज़ नहीं होती, सहीह क्या है?

जवाब: नमाज़ियों की सहूलत और इत्तिला के लिए तकबीर पुकार कर कहना दुरुस्त है। इसमें इमाम की इजाज़त ज़रूरी नहीं है, उस आलिम इमाम का मज़कूरा क़ौल ग़लत है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–150)

ईद का ख़ुत्बा किसी ने दिया और नमाज़ किसी और ने पढ़ाई

इस तरह नमाज़ हो जाती है, मगर बेहतर व मुनासिब ये है कि ख़ुत्बा और नमाज़ एक ही शख़्स पढ़ाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–184, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलजुमा जिल्द–1 सफ़्हा–771)

क्या इमाम दो जगह ईद की इमामत कर सकता है

दो जगह ईदैन या जुमा की नमाज़ दो मरतबा नहीं पढ़ा सकता, अगर ऐसा किया तो दूसरी मरतबा वाले

मुक़्तदियों की नमाज़ नहीं हुई, क्योंकि इमाम की दूसरी नमाज़ नफ़्ल हुई और नफ़्ल पढ़ाने वाले के पीछे फ़र्ज़ और वाजिब पढ़ने वाले की नमाज़ नहीं हुई।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–224)

उजरत पर जुमा व ईदैन पढ़ाना

इमामत पर उजरत लेना फ़ुक़हा ने ज़ाइज़ लिखा है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–224)

मुराहिक़ ख़ुत्बा पढ़े और बालिग़ नमाज़ पढ़ाए

अफ़ज़ल ये है कि इमाम व ख़तीब एक ही होना चाहिए ताहम अगर मुराहिक़े ज़ी शुऊर, ख़ुत्बा पढ़े और बालिग़ आदमी नमाज़ पढ़ाए तब भी दुरुस्त है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–342)

इमाम का ख़ुत्बा में ज़िक्रे मुआविया करना

सवालः हज़रत मौलाना दोस्त मुहम्मद (रह.) और हज़रत मौलाना अब्दुस्सत्तार साहब मद्दज़िल्लहू ने जो ख़ुत्बात शाये किए हैं जिनमें सैयदा फ़ातिमा (रज़ि.) के अलावा हुज़ूरे अकरम (स.अ.व.) की बक़िया तीन साहब ज़ादियों के नाम भी दर्ज हैं और सहाबा (रज़ि.) में से बाक़ी सहाबा (रज़ि.) के साथ हज़रत सैयदना मुआविया (रज़ि.) का नाम दर्ज है।

ये ख़ुत्बात जुमा में पढ़ना जाइज़ है या नहीं? अगर जाइज़ है तो सिर्फ़ मुबाह की हद तक या मौजूदा हालात के पेशे नज़र अफ़ज़ल व मुअक्कद है? अगर ये जाइज़ व अफ़ज़ल है तो हमारे अमाएदीने मुतक़द्दिमीन व मुतअख़्ख़िरीन के ज़माने में जो ख़ुत्बात मुरौवज थे उनमें मुन्दर्जा बाला नाम क्यों दर्ज नहीं थे? नीज़ ये कि उन ख़ुत्बात से अकाबिरे सलफ़े सालिहीन मसलन हज़रत थानवी (रह.) के मसलक से इनहिराफ़ तो लाज़िम नहीं आएगा?

जवाबः हर ज़माने के ख़ुत्बा के मज़मून की तरतीब में इस्लाम में पैदा होने वाले फ़ितनों से मसलके अह्ले सुन्नत की हिफ़ाज़त का एहतिमाम किया गया है चुनांचे हज़रात सहाबए किराम रज़िअल्लाहु तआला अन्हुम के असमाए मुबारका और उनके लिए दुआ और उनके मनाक़िब, ख़ुत्बा में लाने से रवाफ़िज़ व ख़वारिज की तरदीद और मसलके अह्ले सुन्नत का ऐलान मक़सूद है, साबिक़ ज़माना में जो फ़ितने थे उनकी तरदीद के लिए उन्ही सहाबा रज़िअल्लाहु तआला अन्हुम का ज़िक्र काफ़ी था जो मतबूआ ख़ुतबों में मज़कूर हैं।

मौजूदा दौर का एक नया फ़ितना एक ऐसी जमाअत का ज़ुहूर है जो अपने आपको अह्ले सुन्नत होने का दावा करती है और हज़राते सहाबा रज़िअल्लाहु तआला अन्हुम से अक़ीदत का दावा करती है, मगर कुलूब, बुग़्ज़े सहाबा रज़िअल्लाहु तआला अन्हुम से मस्मूम हैं, बिलख़ुसूस हज़रत उसमान और हज़रत मुआविया (रज़ि.) से मुतअल्लिक़ उनके कुलूब की नजासत उनकी ज़बान व क़लम से मुसलसल उबल रही है।

मस्लके अह्ले सुन्नत में किसी सहाबी (रज़ि.) से अदना से अदना बदगुमानी की गुंजाईश नहीं, किसी सहाबी के बारे में ज़रा सी बदगुमानी भी अल्लाह तआ़ला के ग़ज़ब और जहन्नम की मूजिब है इसलिए ये लोग अह्ले सन्नत से ख़ारिज हैं और इलहाद में रवाफ़िज़ की राह पर चल रहे हैं, नीज़ रवाफ़िज़ को हज़रत फ़ातिमा रज़िअल्लाहु तआ़ला अन्हा के सिवा दूसरी साहब ज़ादियों से भी बुग्ज़ है, इसलिए उन फ़ितनों की तरदीद के पेशे नज़र ख़ुत्बा में हज़रत मुआ़विया रज़िअल्लाहु तआ़ला अन्हो और बनाते मुकर्रमात रज़िअल्लाहु तआ़ला अन्हा के मनाक़िब और फ़ज़ाइल का ज़िक्र और उन के लिए रज़िअल्लाह अन्हुन्ना कहने का मअ़मूल बनाना चाहिए, इससे हज़रत थानवी (रहि.) के मस्लक से इन्हिराफ़ लाज़िम नहीं आता, बल्कि उनके मस्लक की ताईद होती है, इसलिए कि उनके ख़ुत्बात जिस नज़रिए पर मबनी हैं उनमें ये इज़ाफ़ा भी उसी नज़रिए के तहत किया गया है। जिसकी तफ़सील ऊपर बताई जा चुकी।

(अहसुनल फ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–146)

बाद नमाज़े जुमा दुआ मुख़्तसर या तवील?

दुआ में ज़्यादा तूल न देना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–109, बहवाला रद्दुलमुहतार सिफ़तुस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–494)

और ये मस्अला किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–2896 में इस तरह है कि:

"इतनी मांगी जाए कि मुक़्तदियों पर शाक़ न हो और उनको तत्वील नागवार न हो।"

इमाम का जुमा की सानी दुआ कराना

जुमा के बाद सुन्नतें पढ़ कर हर शख़्स अपनी नमाज़ से फ़ारिग़ हो कर दुआ कर लिया करे, ये बेहतर और मुस्तहब है, लेकिन सुन्नतों से फ़ारिग़ हो कर सब का मुन्तज़िर रहना और इमाम साहब और मुक़्तदियों का फिर मिल कर दुआ करना जैसा कि बाज़ एलाक़ों में इसका रिवाज हो चुका है और इस पर इतना इसरार होता है कि सब्बो व शत्म और लअ़न व तअ़न की नौबत आती है ये साबित नहीं बल्कि ग़लत तरीक़ा है उसको छोड़ना चाहिए। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–303)

इमाम जिस वक़्त नमाज़ से फ़ारिग़ हो, मअ़ मुक़्तदियों के सब इकट्ठे दुआ मांगें फिर सुन्नतें और नफ़्लें पढ़ कर अपने कारोबार में जाएँ, दोबारा सेह बारा दुआ मांगना साबित नहीं है और नमाज़ियों को मुक़ैयद रखना दूसरी तीसरी दुआ तक जाइज़ नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–130)

इमामत में अपने मस्लक की रिआयत

सवालः ईदैन में इमाम हनफ़ी है और निस्फ़ मुक़्तदी से ज़ाइद शाफ़ई हैं और निस्फ़ से कम हनफ़ी हैं तो इमाम को किसके मज़हब के मुवाफ़िक़ नमाज़ पढ़ानी

चाहिए?

जवाबः ईदैन की नमाज़ में इमामे हनफ़ी अपने मज़हब के मुवाफ़िक़ तकबीराते ज़वाइद कहे यानी तीन तकबीरात हर रकअ़त में अलावा तकबीरे इफ़तिताह और रुकूअ़ के।

मुक़्तदी जो शाफ़ई मज़हब हैं वह अपने मज़हब के मुवाफ़िक़ तकबीरात पूरी कर लें, अगर उनके नज़दीक ये जाइज़ हो कि हनफ़ी इमाम के पीछे तकबीरात पूरी कर ली जाएँ। अलग़रज़ इमामे हनफ़ी को उनके मज़हब का इत्तिबा ज़रूरी नहीं है, लेकिन इमाम अगर उनकी रिआ़यत से उनके मज़हब के मुवाफ़िक़ तकबीरात कहेगा तो इसमें भी कुछ हरज नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–229, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलईदैन जिल्द–1 सफ़्हा–114)

अगर इमाम तकबीराते ईदैन भूल जाए?

सवालः अगर इमाम, नमाज़े ईद की तकबीरात ज़वाइद कहना भूल जाए और रुकूअ़ में पहुंच कर याद आएँ तो क्या रुकूअ़ में ये ज़वाइद तकबीरात कहे, और रुकूअ़ की तस्बीहात को छोड़ दे, या रुकूअ़ से उठ कर खड़ा होकर और तकबीरात कह कर फिर रुकूअ़ का एआ़दा करे?

जवाबः ऐसी सूरत में न तकबीरात ज़वाइद रुकूअ़ में कहे न रुकूअ़ से लौट कर खड़ा होकर कहे, न सज्दए सह्व करे, कि हर सूरत में नमाज़ियों को परेशानी होगी और उनकी नमाज़ ख़राब होने का क़वी इमकान रहेगा। ऐसी हालत में सज्दए सह्व साक़ित हो जाता है और

नमाज़ का एआदा भी वाजिब नहीं होता। इस मस्अला में फ़ुक़हा के दूसरे अक़वाल भी हैं, जोकि बह्र, बदाए, फ़तहुलक़दीर वग़ैरा में मज़कूर हैं। लेकिन रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा– 561 में अल्लामा शामी (रह.) ने उसी को इख़तियार किया है जो यहाँ दर्ज किया गया है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–307)

जुमा व ईदैन में सज्दए सह्व

सवालः अगर जुमा या ईदैन की नमाज़ में कोई वाजिब भूल कर छूट जाए तो इमाम को सज्दए सह्व करना चाहिए या नहीं?

जवाबः अगर मजमअ़ कम है कि मुक़्तदी सब समझ जाएँगे कि इमाम ने सज्दए सह्व किया है तब तो सज्दए सह्व कर लिया जाए, अगर मजमअ़ ज़्यादा है कि मुक़्तदियों को पता नहीं चलेगा, बल्कि वह समझेंगे कि इमाम ने नमाज़ ख़त्म करने के लिए सलाम फेर दिया है तो सज्दए सह्व नहीं करना चाहिए।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–308, बहवाला तहतावी सफ़्हा–253)

ईदैन में दुआ किस वक़्त की जाए?

सवालः ईदैन में इमाम दुआ किस वक़्त कराए नमाज़ के बाद या ख़ुत्बा के बाद?

जवाबः ईदैन की नमाज़ के बाद मिस्ल दीगर नमाज़ों

के दुआ माँगना मुस्तहब है, ख़ुत्बा के बाद दुआ मांगने का इस्तिहबाब किसी रिवायित से साबित नहीं है, और ईदैन की नमाज़ के बाद दुआ करने का इस्तिहबाब उन्ही हदीसों और रिवायात से मालूम होता है जिनमें उमूमन नमाज़ों के बाद दुआ माँगना वारिद हुआ है, और नमाज़ के बाद दुआ मक़बूल होती है, हिस्ने हसीन में वह अहादीस मज़कूर हैं और हमारे अकाबिर हज़रात का यही मअ़मूल रहा है।

(फ़तावा दारुलमुउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–225, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–495)

नक़्श व निगार वाले मुसल्ले पर नमाज़ पढ़ाना

मुसल्लों पर जो कअ़बा वग़ैरा का नक़्शा होता है चूंकि वह अस्ल नहीं है बल्कि उस जैसा एक मसनूई, नक़्शा है लिहाज़ा एहतेराम ज़रूरी नहीं, और मुसमलानों के दिलों में उसकी अज़मत होती है एहानत का ख़्याल भी नहीं होता, इसलिए अगर नादानिस्ता इत्तिफ़ाक़न पैर पड़ जाए तो गुनाह नहीं होगा, और बेहतर तो ये है कि ऐसे मुसल्ले पर नमाज़ न पढ़ी जाए कि ख़ुशूअ़ व ख़ुज़ूअ़ में ख़लल होगा और नमाज़ की रूह ख़ुशूअ़ व ख़ुज़ूअ़ है और बग़ैर इसके नमाज़ बे जान है।

नमाज़ी के सामने नक़्श व निगार का होना नमाज़ी की तवज्जोह और ख़्याल को अपनी तरफ़ मुतवज्जेह करेगा।

आँहज़रत (स.अ.व.) ने हज़रत आईशा रज़िअल्लाहु अन्हा के दरवाज़े पर ख़ूबसूरत पर्दा देख कर फ़रमाया उसको

हटा लो उसके बेल बूटे मेरी नमाज़ में ख़लल अंदाज़ होते हैं। (सहीह बुख़ारी शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–54)

आप (स.अ.व.) ने फूलदार चादर भी अपने लिए पसंद नहीं फ़रमाई और फ़रमाया कि ये चादर मुझे नमाज़ में ग़ाफ़िल करती है।

(सहीह मुस्लिम शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–208)

इस हदीस की शरह में इमाम नूववी (रह.) फ़रमाते हैं कि मेहराबे मस्जिद और क़िबला की दीवार के नक़्श व निगार की कराहत इसलिए है कि ये चीज़ें नमाज़ियों के ख़्यालात और तवज्जुहात को अपनी तरफ़ माएल करती हैं और आँहज़रत (स.अ.व.) ने फूलदार चादर को उतार देने पर यही इल्लत ब्यान फ़रमाई थी कि उसके नक़्श व निगार ने मेरी तवज्जोह नमाज़ से हटा दी। (नववी शरह मुस्लिम) फ़तावा रहीमिया जिल्द–6 सफ़्हा–374, बहवाला फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–172)

कअ़बा की तसवीर वाले मुसल्लों पर नमाज़ पढ़ने में शरअ़न कोई हरज नहीं, और उस तसवीर से ख़ानए कअ़बा की ताज़ीम में कोई फ़र्क़ नहीं आता।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–1 सफ़्हा–111)

इमाम चौकी पर और मुक़तदी फ़र्श पर

सवाल: गर्मी और बरसात में बिच्छू और साँप के ख़ौफ़ से अगर इशा और सुब्ह की नमाज़ इमाम साहब मस्जिद के फ़र्श पर चौकी बिछा कर पढ़ाएँ और मुक़्तदी फ़र्श पर पढ़ें तो क्या हुक्म है?

जवाबः अगर वह चौकी एक ज़िराअ़ (64 सेन्टी मीटर) के बक़द्र ऊँची है तो मकरूह है वरना जाइज़ है, बहरहाल ऐसा न करना बेहतर है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–343, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबु मा युफ़्सिदु बिहिस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–604)

इमाम फ़र्श पर और मुक़्तदी मुसल्ले पर

अगर इमाम के नीचे जाए नमाज़ हो और मुक़्तदियों के नीचे न हो, या बरअक्स हो तो नमाज़ दोनों सूरतों में सहीह है, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–111
इसलिए कि उससे कोई ख़राबी पैदा नहीं हुई सिर्फ़ जगह का पाक होना ज़रूरी है ख़्वाह उस पर जाए नमाज़ बिछी हो या न हो। (हाशिया फ़तावा दारुलउलूम देवबंद जिल्द–4 सफ़्हा–111)

इमाम का बीच की मंज़िल में खड़ा होना

सवालः एक मस्जिद तीन मंज़िला है, बीच की मंज़िल में इमाम खड़ा होता है, और नीचे की मंज़िल में और ऊपर की मंज़िल में मुक़्तदी खड़े होते हैं। तो नीचे के मुक़्तदियों की नमाज़ सहीह हो जाएगी या नहीं? तरीक़ए मज़कूर पर नमाज़ पढ़ना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः इक़्तिदा सहीह हो जाएगी, मगर इमाम को नीचे की मंज़िल में खड़ा होना चाहिए, बालाई मंज़िल पर

बिला ज़रूरत खड़ा न हो।

मस्जिद की अस्ल वज़अ़ और उम्मत के मुतवारिस तआ़मुल के ख़िलाफ़ है। (अहसनुफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–86)

मस्जिद की बालाई मंज़िल में जमाअ़त

गर्मी की वजह से मस्जिद के जमाअ़त ख़ाना या सेहने मस्जिद को छोड़ कर छत पर इशा और तरावीह वग़ैरा की जमाअ़त करना मकरूह है।

हाँ! जिन साहब को जमाअ़त ख़ाना और सेहन में जगह न मिले अगर वह छत पर जा कर नमाज़ पढ़ें तो बिला कराहत जाइज़ है, ये मजबूरी है।

कअ़बा शरीफ़ के ऊपर नमाज़ पढ़ना (बेअदबी और बेहुरमती की वजह से) मकरूह है। हाँ! अगर तामीर और मरम्मत की वजह से चढ़ना हो तो मकरूह नहीं है इसी तरह से कोई भी मस्जिद हो, उसकी छत पर चढ़ना मकरूह है और इसी बिना पर ये भी मकरूह है।

गर्मी की शिद्दत से छत पर जमाअ़त न करें, मगर ये कि मस्जिद में गुंजाईश न रहे तो इस मजबूरी की वजह से छत पर चढ़ना मकरूह न होगा।

बहरहाल गर्मी की शिद्दत ज़रूरत और मजबूरी नहीं पैदा करती, क्योंकि इससे यही होता है कि मशक़्क़त बढ़ जाती है और जब मशक़्क़त बढ़ जाती है तो अज्र व सवाब ज़्यादा मिलता है। इसको मजबूरी नहीं कहा जा सकता। फ़तावा आलमगीरी जिल्द–5 सफ़्हा–322 पर है कि तमाम मसिज्दों की छत पर चढ़ना मकरूह है इसलिए

सख़्त गर्मी में छत पर चढ़ कर जमाअ़त करना मकरूह है, हाँ अगर मस्जिद तंग हो और नमाज़ियों के लिए वुसअ़त न हो तो ज़रूरतन बाक़ी लोगों का ऊपर चढ़ना मकरूह नहीं है।

गर्मी में मस्जिद के सेहन में बाजमाअ़त नमाज़ बग़ैर हरज के सहीह है, अगर किसी जगह सेहन, दाख़िले मस्जिद न हो, मस्जिद से ख़ारिज हो, तो बानिए मस्जिद और गिरोह न हो तो जमाअ़त के लोग मुत्तफ़िक़ हो कर दाख़िले मस्जिद की नीयत कर लें (तो वह मक़ाम मस्जिद में दाख़िल हो जाएगा) और उस पर मस्जिद के जुमला अहकाम जारी होंगे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–31, बहवाला कबीरी सफ़्हा–392 व मजमूआ़ फ़तावा सअ़दिय्या सफ़्हा–148)

अगर मस्जिद के ऊपर मुस्तक़िल मुसक़्क़फ़ मंज़िल न हो तो ऐसी हालत में बिला ज़रूरत मस्जिद के ऊपर चढ़ना और निचली मंज़िल में हब्स (गर्मी) वग़ैरा की वजह से बालाई मंज़िल में जमाअ़त करना मकरूह है। अलबत्ता मस्जिद के अन्दर जगह न मिलने की वजह से कुछ मुक़्तदियों का मस्जिद की छत पर नमाज़ पढ़ना मकरूह नहीं है। (अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–287)

अगर मस्जिद में इमाम के नीचे की मंज़िल ख़ाली हो

सवाल: मस्जिद के नीचे दो एक मंज़िला मकान है इमाम के खड़े होने की जगह ठोस नहीं है। बल्कि ख़ाली है, इसमें कुछ हरज तो नहीं?

जवाबः अगर इमाम के खड़े होने की जगह नीचे से ख़ाली है तो कुछ हरज नहीं है, ठोस होना उस जगह का ज़रूरी नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–166)

इमाम का दरमियाने मेहराब से हट कर खड़ा होना

सवालः इमाम को नमाज़ के लिए मेहराब का निस्फ़ हिस्सा छोड़ कर दाएँ या बाएँ खड़े हो कर नमाज़ पढ़ना कैसा है? अगर मेहराब के अन्दर ही मिम्बर बना हो जैसा कि अक्सर मस्जिद में होता है तो इस सूरत में इमाम को किस जगह खड़ा होना चाहिए?

जवाबः मेहराब से मक़सद ये है कि इमाम सफ़ के ठीक बीच में खड़ा हो, और ये सुन्नत है, पस अगर मेहराब सहीह तौर पर सफ़ के दरमियान में है तो मेहराब के ऐन दरमियान को छोड़ कर दाएँ या बाएँ जानिब हट कर खड़ा होना मकरूह है, ख़्वाह मिम्बर मेहराब के अन्दर हो या न हो, बहरहाल मेहराब के दरमियान खड़ा होना चाहिए।

अक्सर मसाजिद में देखा गया है कि इमाम मिम्बर को छोड़ कर बक़िया मेहराब के दरमियान में खड़ा होता है। ये मकरूह है। इसकी इसलाह लाज़िम है, और इस मस्अले की इशाअत ज़रूरी है बल्कि इससे भी ज़्यादा तामीरे मसाजिद में इस इसलाह की अशद ज़रूरत है कि मिम्बर की जगह दाएँ जानिब छोड़ कर मस्जिद के ठीक दरमयिान में इस तरह मेहराब बनाएँ कि मेहराब का ऐन

वस्त जहाँ इमाम खड़ा होगा। वहाँ से मस्जिद का दोनों तरफ़ फ़ासिला बराबर हो।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–293, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–531)

इमाम का मेहराब के अन्दर खड़ा होना

सवालः इमाम के मेहराब के अन्दर खड़े होने से नमाज़ मकरूह होगी या नहीं?

जवाबः इमाम पाँव मेहराब से बाहर रखे, बिला उज़्र मेहराब में पाँव रखना मकरूहे तंज़ीही है, वजहे कराहत में दो क़ौल हैं।

(1) मेहराब में खड़े होने से दोनों तरफ़ के मुक़्तदियों पर इमाम की हालत मुशतबह रहती है। अलबत्ता इश्तिबाह न होने की सूरत में कोई कराहत नहीं।

(2) अह्ले किताब से तशबोह है इस बिन पर जानिबैन में मुक़्तदियों के लिए कोई इश्तिबाह न होने के बावजूद भी इमाम का मेहराब में खड़ा होना मकरूहे तंज़ीही है।

अगर क़दम मेहराब के बाहर हों तो कराहत नहीं रहती। (अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–311, बहवाला रद्दुलमुहतार सफ़्हा–604)

नमाज़ियों की कसरत की वजह से इमाम का दर में खड़ा होना

सवालः रमज़ानुलमुबारक में नमाज़ियों की कसरत

और मस्जिद का फ़र्श छोटा होने की वजह से इमाम को मस्जिद की दर में खड़े हो कर नमाज़ पढ़ाना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः इमाम के दर में खड़े होने को शामी में मकरूह लिखा है और इमाम आज़म (रह.) का ये क़ौल नक़्ल किया है, इसलिए इमाम को चाहिए कि अगर ज़रूरत दर में खड़े होने की हो, नमाज़ियों की कसरत वग़ैरा की वजह से, तो क़दम दर से बाहर रखे और सज्दा अन्दर के हिस्से में करे, तो बेहतर है।

वरना बज़रूरत दर में खड़े हो कर नमाज़ पढ़ाने से भी नमाज़ हो जाती है। लेकिन बचना इससे बेहतर है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–129, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबु मा युफ़्सिदु बिहीस्सलात व मा यकरहू फ़ीहा जिल्द–1 सफ़्हा–604)

जगह की तंगी की वजह से इमाम का दरमियान में खड़ा होना

सवालः हुजूम की वजह से सफ़ों का तवाज़ुन न हो, इमाम व मुक़्तदी बराबर खड़े हो जाएँ यानी छोटी मस्जिद की तौसीअ़ हुई जिसमें साबिक़ा मस्जिद सिर्फ़ बाएँ जानिब आई और मस्जिदे मौजूदा के ऐन मेहराब के मुक़ाबिल सिर्फ़ इमाम अपने बाएँ दो आदमी खड़े कर के जमाअ़त कराए जो फ़िलवक़्त ख़ारिजी जगह मस्जिद की सीढ़ियों का रास्ता है। ऐसी सूरत में जमाअ़त का क्या हुक्म है?

जवाबः बिला ज़रूरत ऐसा करना मकरूह है, मगर जगह तंग होने की वजह से बिला कराहत जाइज़ है।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–514)

इमाम को दरमियान में खड़ा होना चाहिए। दोनों तरफ़ बराबर मुक़्तदी करने चाहिएँ। हाँ एक तरफ़ ज़्यादा मुक़्तदियों का खड़ा होना ख़िलाफ़े सुन्नत है। तरीक़ए सुन्नत ये है कि जिस वक़्त जमाअ़त खड़ी हो दोनों तरफ़ मुक़्तदी बराबर हों। फिर बाद में जो आकर शरीक हों उनको भी ये लिहाज़ रखना चाहिए कि हत्तलवुस्अ़ दोनों तरफ़ बराबर शरीके जमाअ़त हों। और इमाम का हद से ज़्यादा जिह्र या हद से ज़्यादा इख़फ़ा (आहिस्ता या ज़ोर से) दोनों ख़िलाफ़े सुन्नत हैं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–347, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–83)

जिस मस्जिद मे मेहराब न हो इमाम कैसे खड़ा हो?

सवालः एक मस्जिद में इमाम साहब के खड़े होने की जगह ही नहीं है। इमाम साहब एक क़दम के क़रीब मुक़्तदियों से आगे खड़े होते हैं, आधी सफ़ उसके दाएँ और आधी सफ़ बाएँ, बीच में जगह ख़ाली है तो क्या नमाज़ दुरुस्त है?

जवाबः जब मस्जिद इतनी तंग है तो इमाम का बीच में खड़ा होना दुरुस्त है। जिस तरह एक मुक़्तदी हो तो दाहनी तरफ़ खड़ा होता है। उसी तरह तमाम आदमी दाहनी तरफ़ और बाईं तरफ़ खड़े हो जाएँ।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द—2 सफ़्हा—86)

इमाम के दाएँ या बाएँ खड़ा होना

सवालः मस्जिद की तंगी की वजह से दो सफ़ें नहीं हो सकतीं इसलिए इमाम के दाएँ बाएँ पीछे को ख़ाली छोड़ कर सफ़ कर लेते हैं। आया इस तरह नमाज़ हो सकती है या नहीं?

सफ़े अव्वलः मुक़्तदी, इमाम, मुक़्तदी

जवाबः सफ़ को भरने और ख़ाली जगह को पुर करने की बहुत ताकीद आई है, इसलिए दरमियान में जगह नहीं छोड़नी चाहिए, अगर उज़्र हो और कोई सूरत नहीं हो सकती हो तो इमाम को ज़्यादा आगे नहीं होना चाहिए। बल्कि इस क़दर आगे हो जाए कि इमाम के पैर मुक़्तदी के पैरों से आगे रहें यानी ऐड़ी।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द—2 सफ़्हा—243)

मुक़्तदी के कहने पर इमाम का नमाज़ में आगे बढ़ना

सवालः इमाम साहब हसबे क़वाइदे शरईया एक मुक़्तदी के साथ नमाज़ पढ़ा रहे थे दूसरी रकअत की क़िराअत ख़त्म होने से पहले एक और मुक़्तदी आकर शामिले जमाअत होना चाह रहा था क्योंकि पहले मुक़्तदी को पीछे हटने का मौक़ा नहीं था, इसलिए दूसरे मुक़्तदी ने इमाम साहब से कहा आप एक क़दम आगे बढ़ जाएँ चूनांचे इमाम साहब ने एक क़दम बढ़ कर क़िराअत बदस्तूर

जारी रखी और नमाज़ ख़त्म कर दी। ज़ैद कहता है कि सब की नमाज़ फ़ासिद हो गई, क्योंकि मुक़्तदी को बजाए कहने के हाथ से इशारा करना चाहिए था। क्या नमाज़ के इआ़दा की ज़रूरत है या नहीं?

जवाबः इस सूरत में बाज़ फुक़हा का क़ौल नामाज़ के फ़ासिद होने का है। मगर सहीह ये है कि नमाज़ हो गई।

वाक़ई उस मुक़्तदी को इशारा से इमाम साह़ब से आगे बढ़ने को कहना चाहिए था। लेकिन बहरहाल नमाज़ हो गई उसको लौटाने की ज़रूरत नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–38, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–533)

अगर इमाम के साथ एक शख़्स हो

सवालः अगर इमाम के साथ सिर्फ़ एक मुक़्तदी नमाज़ पढ़ता हो और दूसरा आ जाए या जमाअ़त की पूरी सफ़ भर गई हो और एक नमाज़ी बाद में आएँ तो उसको अगली सफ़ में से मुक़्तदी को खींचना ज़रूरी है या नहीं?

जवाबः अगर इमाम के साथ एक मुक़्तदी है फिर दूसरा आ जाए तो बेहतर ये है कि पहला मुक़्तदी पीछे हो जाए और दोनों इमाम के पीछे हो जाएँ और उसमें ये शर्त लिखी है कि अगर मुक़्तदी की नमाज़ के फ़साद का अंदेशा न हो तो उसको पीछे को हटा दे वरना न हटाए। इससे मालूम हुआ कि पीछे करने की ज़रूरत उस वक़्त

है जब ये मालूम हो कि वह पीछे हट जाएगा और उसको ये मस्अला मालूम हो।

इसी तरह सफ़ में अकेले खड़े होने का हुक्म है, अगर सफ़ में से कोई शख़्स उसके पीछे हटाने से बेतकल्लुफ़ हट जाए तो ऐसा करे वरना तन्हा खड़ा हो जाए, जैसा कि शामी में उसकी तफ़सील मौजूद है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–358, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–531)

(मतलब ये है कि अगर पीछे आने की जगह है तब तो मुक़्तदी पीछ हट आएँ और अगर पीछे हटने की जगह नहीं है तो फिर इमाम को आगे बढ़ाना चाहिए और अगर उसकी भी गुंजाईश नहीं है तो दूसरा मुक़्तदी इमाम के बाईं तरफ़ खड़ा हो जाए, ज़रा पीछे हट कर, जैसा कि पहला मुक़्तदी खड़ा है।)

सिर्फ़ औरत या बच्चा मुक़्तदी हो तो कहाँ खड़ा हो

सवालः ज़ैद अपने घर में जमाअ़त से नमाज़ पढ़ा रहा है, अगर मुक़्तदी सिर्फ़ एक नाबालिग़ लड़का या सिर्फ़ एक औरत हो या बच्चा और औरत दोनों इक़्तिदा करें तो ये कहाँ खड़े हों? महरम और ग़ैर महरम औरत में क्या कुछ फ़र्क़ है?

जवाबः बच्चा इमाम के दाएँ जानिब खड़ा हो और औरत इमाम के पीछे, औरत महरम हो या ग़ैर महरम दोनों का यही हुक्म है।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–399, बहवाला

रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–530)

मुक़्तदी एक मर्द या एक बच्चा हो तो कैसे खड़े हों

सवालः मस्जिद में जमाअ़त के वक़्त इमाम के अलावा एक मर्द और एक नाबालिग़ लड़का मौजूद है। उनकी सफ़ बंदी किस तरह करनी चाहिए?

जवाबः मर्द और नाबालिग़ बच्चा दोनों मिल कर खड़े हों। (अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–300, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–534)

इक़्तिदा के शरई हुदूद

सवालः इक़्तिदा के लिए शरई क्या हुदूद मुक़र्रर हैं। मुन्दर्जा ज़ैल सूरतों में कौन सी जाइज़ है और कौन सी नाजाइज़?

(1) इमाम बुलंद मक़ाम पर है, मुक़्तदी नीचे, ख़्वाह दाएँ या बाएँ या पीछे, फिर उसकी दो सूरतें हैं, एक ये कि इमाम से क़रीब हों ख़्वाह दरमियान में दीवार वग़ैरा हाइल हो या न हो, दूसरी सूरत ये कि इमाम से दूर हों ख़्वाह दीवार वग़ैरा हाइल हो या न हो।

(2) इमाम नीचे के मक़ाम पर है और मुक़्तदी ऊपर उसकी भी मज़कूरा बाला चार सूरतें होंगी।

(3) अफ़्रीक़ा में अक्सर मकानात का ज़ेरीं हिस्सए फ़र्श, काठ और चौबें का होता है और उसके नीचे ज़मीन तक क़द्दे आदम के बराबर कम व बेश मुज़ौवफ़ होता है।

ऐसी सूरतों में जमाअ़त ख़ाना के ज़ेरीं हिस्सा में भी मुक़्तदी खड़े हो सकते हैं या नहीं?

(4) मस्जिद के मुत्तसिल रहने वाला या दूर रहने वाला मगर ऐसा कि तकबीराते इंतिक़ाल वग़ैरा सुन सकता है। ऐसा शख़्स अपने मकान में इक़्तिदा कर सकता है या नहीं?

जवाबः (1) (2) इमाम अगर तन्हा ऊँचे मक़ाम पर हो तो मकरूह है और अगर इमाम के साथ कुछ मुक़्तदी हों तो फिर किसी हाल में कराहत नहीं है।

दूर और नज़दीक जब कि सफ़ूफ़ मुत्तसिल हों दोनों दुरुस्त हैं।

(3) इसमें भी वही जवाब है कि अगर इमाम के साथ बाज़ मुक़्तदी हैं तो हिस्सए ज़ेरीं (नीचे का हिस्सा) में खड़े हो कर इक़्तिदा करना दुरुस्त है।

(4) मस्जिद के इमाम की, अपने मकान में रहते हुए इक़्तिदा नहीं कर सकता, लेकिन अगर मुक्तदियों की सफ़, उसके मकान तक मिल जाए तो उस वक़्त, अपने मकान में रहते हुए इमामे मस्जिद की इक़्तिदा जाइज़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–356)

मुक़्तदी के इमाम से आगे बढ़ जाने का हुक्म

सवालः मस्जिद में जमाअ़त के दौरान दूसरी मंज़िल के नमाज़ी इमाम से कुछ आगे बढ़ गए, उनकी नमाज़ फ़ासिद हो गई या नहीं?

जवाबः अगर मुक़्तदी की ऐड़ी इमाम की ऐड़ी से

आगे हो गई तो उसकी नमाज़ नहीं होगी, अगर ऐड़ी बराबर हो तो नमाज़ हो जाएगी, अगरचे मुक़्तदी के पाँव की उंगलियाँ इमाम के पाँव से आगे हों।

अलबत्ता अगर मुक़्तदी और इमाम के पाँव में इतना ज़्यादा तफ़ावुत हो कि दोनों की ऐड़ियाँ बराबर होने के बावजूद मुक़्तदी के पाँव का अक्सर हिस्सा इमाम के पाँव से आगे बढ़ गया तो नमाज़ न होगी।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–298, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–514)

नमाज़ के औक़ात कौन मुक़र्रर करे?

बेहतर ये है कि इमाम और मुक़्तदी सब की मुत्तफ़िक़ा राए से शरीअ़त के मुताबिक़ वक़्त मुक़र्रर किया जाए। अगर मुक़्तदी ना वाक़िफ़ हों और शरई वक़्त की शनाख़्त न रखते हों तो इमामे वक़्त मुक़र्रर कर के एलान कर दे और उसकी सब पाबंदी करें।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–68)

मुक़र्ररा वक़्त से पहले नमाज़ पढ़ाना

अगर नमाज़ का वक़्त ही न हुआ हो तो नमाज़ पढ़ना पढ़ाना नाजाइज़ है। अगर वक़्त तो हो गया लेकिन किसी आरिज़ की वजह से वक़्ते मुक़र्ररा से दो चार मिनट पहले इमाम ने नमाज़ पढ़ा दी और पाबंदे जमाअ़त नमाज़ी भी आ चुके थे, तो इसमें मुज़ाइक़ा नहीं। अगर पाबंदे जमाअ़त

नमाज़ी नहीं आए थे, तो वक़्ते मुक़र्ररा तक उनका इंतिज़ार करना चाहिए।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–137)

क्या इमाम पर मुतऐयन वक़्त का एहतिमाम ज़रूरी है

उमूमन मसाजिद में जब इमाम साहब नमाज़ के सहीह वक़्त पर नहीं पहुंचते तो नमाज़ी एतेराज़ करते हैं, उनको दो चार मिनट इंतिज़ार करना दुश्वार मालूम होता है, हालांकि इंतिज़ारे नमाज़ की हदीस है और अज़ान के बाद पूरे वक़्त में किसी वक़्त भी जमाअ़त करने की इजाज़त है और वक़्त का तअ़ैयुन महज़ सहूलत के लिए है, ताकि नमाज़ी उस वक़्त पर जमा हो जाएँ। सवाल ये है कि:

(1) इमाम का इंतिज़ार किया जाना चाहिए या नहीं? और कितना इंतिज़ार किया जाए?

(2) क्या इमाम पर घड़ी के वक़्त की ऐसी पाबंदी कि दो चार मिनट भी ताख़ीर न हो अज़रूए शरअ़ ज़रूरी है

(3) जो इमाम अक्सर दो चार मिनट देर से मस्जिद में पहुंच कर नमाज़ पढ़ाता हो उसकी किस बात की एहतियात ज़रूरी है?

(4) जो नमाज़ी ताख़ीर पर मस्जिद में शोर गुल मचाते हैं और चरचा करते हैं, उनका क्या हुक्म है?

(5) नबी करीम (स.अ.व.) के ज़माना में और क़ुरूने ऊला में किस तरह अमल रहा है?

(6) फ़ुक़हाए किराम इस मस्अला में क्या तफ़सील

बताते हैं?

जवाबः हुज़ूरे अकरम (स.अ.व.) के ज़मानए मुबारक और कुरूने ऊला में नीज़ हज़रात फुक़हा रहिमहुल्लाह तआला के दौर में न दुन्यवी मशागिल ज़्यादा थे और न ही घड़ियाँ थीं, इसलिए जमाअत का उसूल ये रहा कि वक़्त हो जाने के बाद अज़ान हुई और उसके बाद नमाज़ियों का इजतिमा हो गया, जमाअत हो गई।

इस ज़माना में एक तरफ़ दुन्यवी मशागिल में मस्रूफ़ियत, इनहिमाक और दूसरी जानिब दीन से ग़फ़लत और बेएतिनाई के पेशे नज़र घड़ियों की सहूलत से इस्तिफ़ादा नागुज़ीर हो गया है, लिहाज़ा आज कल के हालात के पेशे नज़र घड़ी से वक़्त की तअयीन और इमाम के लिए वक़्ते मुअैयन की पाबंदी ज़रूरी है।

हुज़ूर अकरम (स.अ.व.) और सहाबए किराम रिज़वानुल्लाह अलैहिम अजमईन के ज़माना में लोगों के इजतिमा को मलहूज़ रखा जाता था, अब चूंकि घड़ी के मुअैयन वक़्त पर ही नमाज़ी जमा हो जाते हैं, लिहाज़ा ये अम्र भी इसको मुक़्तज़ी है कि मुअैयन वक़्त से ताख़ीर न की जाए।

अलावा अज़ीं कुरूने ऊला के अइम्मा तन्ख़्वाह नहीं लेते थे, और इस ज़माना का इमाम तन्ख़्वाह दार मुलाज़िम है, इसलिए भी उस पर मुतअैयन वक़्त की पाबंदी लाज़िम है, अलबत्ता नमाज़ियों को उमूरे ज़ैल का ख़्याल रखना ज़रूरी है:

(1) अगर कभी बतक़ाज़ए बशरीयत इमाम को चार पाँच मिनट ताख़ीर हो जाए तो बेसबरी और चीख़ व

पुकार के बजाए सब्र व तहम्मुल से काम लें।

और इस ताख़ीर को किसी उज़्र पर महमूल कर के इमाम पर ज़बान दराज़ी और तअ़न से एहतेराज़ करें।

(2) अगर इमाम हमेशा ताख़ीर से आने का आदी हो तो उसको अच्छे और नर्म अंदाज़ में समझाने की कोशिश की जाए।

(3) अगर समझाने के बावजूद इमाम की रविश नहीं बदलती हो तो मुन्तज़िमा कमेटी इमाम को माज़ूल कर सकती है मगर इस सूरत में भी इमाम से मुतअ़ल्लिक़ बदज़बानी और उसकी ग़ीबत हरगिज़ जाइज़ नहीं।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–301)

अगर इमाम ठीक वक़्त पर तैयार हो कर नमाज़ के लिए मस्जिद में पहुंचे तो इसमें कोई मुज़ाएक़ा नहीं। वक़्त से पहले मस्जिद में न आने से नमाज़ मकरूह नहीं होती, अलबत्ता अज़ान सुन कर फ़ौरी तैयारी शुरू कर देना चाहिए, ताकि ऐन वक़्त पर मुक़्तदियों को इंतिज़ार न करना पड़े।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–91)

नमाज़ शुरू करने में इमाम मुतवल्ली का पाबंद नहीं

नमाज़ के औक़ात, शरीअ़त की जानिब से मुक़र्रर हैं, मगर इसमें वुसअ़त है, इसलिए ऐसे वक़्त नमाज़ शुरू की जाए कि शरअ़ के नज़दीक वह वक़्त मुस्तहब हो और पाबंदे जमाअ़त नमाज़ी अक्सर उस वक़्त आ जाते हों। अगर मुतवल्ली जमाअ़त शुरू कराने में उसकी रिआ़यत

रखता है तब तो उसमें कोई मुज़ाएक़ा नहीं। अगर उसकी रिआयत नहीं रखता बल्कि सिर्फ़ आमद पर मौक़ूफ़ रखता है ख़्वाह वक़्त मुस्तहब हो या ग़ैर मुस्तहब, ख़्वाह अक्सर जमाअ़त के पाबंद नमाज़ी आ गए हों या न आए हों, बल्कि जब ख़ुद आ गया तो नमाज़ फ़ौरन शुरू करा दे, और जब तक ख़ुद न आए तो इमाम को इंतिज़ार का हुक्म दे, अगरचे वक़्ते मुस्तहब निकल कर वक़्ते मकरूह में दाख़िल हो गया, या अभी वक़्ते मुस्तहब शुरू ही नहीं हुआ तो ऐसी हालत में उसकी रिआ़यत शरअन पसंदीदा नहीं और इमाम को इसमें उसकी इत्तिबा भी नहीं करनी चाहिए। नमाज़ शुरू करने में इमाम मुस्तक़िल है मुतवल्ली या और किसी के ताबेअ़ नहीं, बल्कि सब लोग इमाम के ताबेअ़ हैं। ताहम इमाम को ऐसा रवैया इख़्तियार नहीं करना चाहिए जिससे तमाम मुक़्तदियों को तकलीफ़ हो।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–126)

इमाम का किसी फ़र्द के लिए जमाअ़त में ताख़ीर करना

सवालः अक्सर जुहला मुतवल्लियान, इमामे आलिम पर हुकूमत करते हैं। मसलन नमाज़ के औक़ाते मुक़र्ररा पर जब इमाम नमाज़ शुरू करने का इरादा करता है तो मुतवल्ली कहता है कि इमाम साहब ज़रा ठहरिए, फ़लाँ नहीं आया है। क्या इंतिज़ार जाइज़ है?

जवाबः नमाज़ियों के इजतिमाअ़ के बाद किसी फ़र्द के इंतिज़ार में जमाअ़त में ताख़ीर करना जाइज़ नहीं, अलबत्ता कोई शख़्स शरीर हो और उससे ख़तरा हो तो

उसके शर से बचने के लिए ताख़ीर की जा सकती है।

(अहसुनल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–306, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–462)

जो शख़्स मुतवल्ली हो कर अपने वासते ऐसी ताकीद करे और ताख़ीर करे वह गुनहगार है और ऐसों का इंतिज़ार भी दुरुस्त नहीं है। हाँ आम मुसलमानों का इंतिज़ार दुरुस्त है बशर्तेकि दूसरों को जो हाज़िर हो चुके हैं, तकलीफ़ न हो, और वक़्त भी मकरूह न हो जाए। मगर रईसों और दुनियादारों का इंतिज़ार न करे। वक़्त पर सब आ जाएँ या अक्सर आ जाएँ तो नमाज़ पढ़ाए।

(फ़तावा रशीदिया कामिल सफ़्हा–287)

क्या इमाम के लिए अमामा ज़रूरी है?

(1) अ़मामा मुस्तहब है।

(2) अ़मामा बाँध कर नमाज़ पढ़ाना, बतौर आदत साबित है न कि बतौर इबादत।

(3) अ़माम बाँध कर नमाज़ पढ़ाना औला और मुस्तहब है।

(4) बिला अ़मामा भी नमाज़ मकरूह नहीं।

(5) हुजूर (स.अ.व.) से बिला अ़मामा नमाज़ साबित है।

(6) अम्रे वाजिब का सा मुआमला अम्रे मुस्तहब के साथ करना नाजाइज़ है।

(7) जिन शहरों में बिला अ़मामा के मुअ़ज़्ज़ज़ मजालिस में जाना आ़र की बात हो, वहाँ नमाज़ भी बिला अ़मामा मकरूह है।

(8) कभी कभी मुस्तहब के मुक़ाबिल रुख़्सत यानी महज़ मुबाह पर भी अमल करना चाहिए। ख़ास कर ऐसी जगह जहाँ मुस्तहब पर इसरार किया जाता हो कि उससे मन्दूब हद्दे कराहत तक पहुंच जाता है। इसकी वजह से फ़साद पर आमादा होना तो बड़ी जिहालत और गुनाह है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–56)

अ़मामा बाँध कर नमाज़ पढ़ना मुस्तहब है लेकिन बग़ैर अ़मामा के भी बिला कराहत दुरुस्त है, अलबत्ता जिस जगह अ़मामा का इतना रिवाज हो कि बग़ैर अ़मामा के किसी मुअ़ज़्ज़ज़ मजलिस में जाते हों बल्कि अपने घर से भी न निकलते हों तो ऐसी जगह बग़ैर अ़माम नमाज़ पढ़ाना और पढ़ना मकरूह है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–74)

अमामा बाँध कर नमाज़ पढ़ाना मुस्तहब है, लेकिन कभी कभी न बाँधा जाए ताकि अ़वाम उसको लाज़िम और ज़रूरी न समझ लें।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–357)

रूमाल लपेट कर नमाज़ पढ़ाना

सवाल: ऐसा रूमाल लपेट कर नमाज़ पढ़ाए कि जिसमें सर का दरमियानी हिस्सा खुला रहे तो क्या नमाज़ होगी या नहीं?

जवाब: टोपी पहननी चाहिए। नमाज़ के वक़्त इस तरह सर पर रूमाल लपेटना मकरूह और मना है। फ़तावा

क़ाज़ी ख़ाँ में है: सर पर रूमाल इस तरह लपेटना कि दरमियानी हिस्सा खुला रहे, ये मकरूह है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–185, बहवाला क़ाज़ी ख़ाँ जिल्द–1 सफ़्हा–57)

अ़मामा और शमला की लम्बाई की हद

सवाल: कितना अ़मामा बाँधना सुन्नत है और उसका कितना शमला पीछे छोड़ना मसनून है। अगर कोई सुरीन तक छोड़े तो नमाज़ में नुक़्सान आता है या नहीं? एक शख़्स कहता है अगर शमला सवा बालिश्त से ज़्यादा छोड़े तो नमाज़ मकरूहे तहरीमी होती है। इस बारे में शरअ़न क्या हुक्म है?

जवाब: दुर्रेमुख़्तार में है अ़मामा का शमला पीछे छोड़ना मुस्तहब है और वस्ते ज़हर यानी कमर के दरमियान तक शमला का होना मुस्तहब है और बाज़ ने कहा है एक बालिश्त होगा और उस शख़्स का ये कहना कि अगर सवा बालिश्त से ज़्यादा शमला छोड़े तो नमाज़ मकरूहे तहरीमी होगी, ग़लत है। वस्ते ज़हर तक होना शमला का या एक बालिश्त होना, ये सब उमूरे मुस्तहब्बा में से हैं। इसके ख़िलाफ़ करना मकरूहे तहरीमी नहीं है और नमाज़ में कुछ कराहत नहीं आती। एक क़ौल शमला के बारे में दुर्रेमुख़्तार में ये भी है कि मौज़ए जुलूस तक शमला का होना मुस्तहब है। इससे मालूम हुआ कि कमर की जड़ तक यानी सुरीन के शुरू तक भी शमला का होना मकरूह नहीं है। शमला छोटा हो या बड़ा इसी तरह अ़मामा के

तूल (लम्बाई) की शरअ़न कोई ख़ास हद नहीं है। आँहज़रत (स.अ.व.) का अ़मामा कभी बारह हाथ का हुआ है और कभी सात हाथ का, और दूसरों को आप (स.अ.व.) ने किसी मुतअैयन लम्बाई वाले अ़मामा का हुक्म नहीं फ़रमाया। पस जितना लम्बा अ़माम हो और जितना बाँधने की आदत हो बाँध ले, कुछ वह्म न करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–138, बहवाला अलबहरुलराइक़ बाबु मा युफ़्सिदुस्सलात व मा यकरहु फ़ीहा जिल्द–2 सफ़्हा–27)

इमाम पर मुक़्तदी की रिआयत

सवालः जो इमाम क़िराअत ख़त्म करने के बाद रुकूअ़ में जाते वक़्त लफ़्ज़ अल्लाहुअकबर को इस क़दर लम्बा कर के कहता है कि अक्सर नमाज़ी उससे पहले रुकूअ़ में चले जाते हैं। क्या ऐसी सूरत में मुक़्तदियों की रिआयत के लिए मामूली क़िराअत और देर न लगा कर रुकूअ़ में चला जाना इमाम पर वाजिब है या नहीं?

जवाबः बेशक मुक़्तादियों की रिआयत, ऐसे मवाक़ेअ़ पर मुनासिब है और तकबीर को ज़्यादा तवील न करे, बल्कि मुख़्तसर करे, ताकि मुक़्तदियों की तकबीर पहले ख़त्म न हो।

और मुक़्तदियों को मुनासिब है कि देर में तकबीर शुरू करें ताकि इमाम पर सबक़त न हो जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–93, बहवाला मिशकात शरीफ़ सफ़्हा–101)

इमाम के लिए तस्बीहात की तादाद

मुन्फ़रिद (तन्हा पढ़ने वाले) को इजाज़त है, ख़्वाह तीन मरतबा तस्बीहात पढ़े या पाँच या सात या और ज़्यादा, मगर ताक़ पढ़े।

अलबत्ता इमाम ज़्यादा तस्बीहात न कहे, बल्कि इसका लिहाज़ रखे कि मुक़्तदी इत्मीनान के साथ तीन बार तस्बीह पूरी कर लें।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–296, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–462)

मुस्तहब ये है कि इमाम पाँच बार तस्बीह पढ़े। अगर तीन बार कहे तो इस तरह कहे कि मुक़्तदियों को तीन बार तस्बीह कहने का मौक़ा मुयस्सर आए।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–371)

इमाम साहब सुन्नतें पढ़ने वाले का इंतिज़ार करें या नहीं?

सवालः जुहर की नमाज़ दो बजे होती है, अभी दो बजने में तीन मिनट बाक़ी थे, एक शख़्स ने सुन्नतों की नीयत बाँध ली, तीसरी रकअ़त में दो बज गए। तो क्या इमाम साहब को इतनी ताख़ीर की इजाज़त है या नहीं कि वह शख़्स चार रकअ़त पूरी कर ले?

जवाबः इस क़दर इजाज़त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–47, बहवाला फ़तावा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–53)

मुक़तदी न आएँ तो इमाम तन्हा नमाज़ पढ़ सकता है?

सवालः एक मस्जिद फ़ासिला पर है, इसलिए उसमें जमाअ़त अक्सर नहीं होती है। इमाम जो वहाँ मक़र्रर है इस सूरत में मुक़्तदियों के न पहुंचने पर तन्हा नमाज़ पढ़ ले तो तर्के जमाअ़त का गुनाह तो न होगा?

जवाबः इस सूरत में तर्के जमाअ़त का गुनाह इमाम साहब पर नहीं है, बल्कि जब कोई न आए तो इमाम, अज़ान व इक़ामत कह कर तन्हा नमाज़ पढ़ लिया करे, इसमें जमाअ़त का सवाब भी उसको हासिल होगा और मस्जिद का हक़ भी अदा होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–53, बहवाला रद्दुमुहतार बाबुअहकामिलमस्जिद जिल्द–1 सफ़्हा–617)

इमाम के लिए मुअ़ैयन आदमी का इंतिज़ार

सवालः क्या एक शख़्स के बाइस जमाअ़त में ताख़ीर करना जाइज़ है, जब कि मुस्तक़िल इमाम मौजूद हो। अगर वह शख़्स नहीं आता तो बजाए एक बजे के डेढ़ और दो बजे ज़माअ़त होती है और उसके बुलाने के लिए पै दर पै आदमी भेजा जाता है। ये फ़ेल (फ़ेअ़ल) शरीअ़त की नज़र में मज़मूम है या ममदूह?

जवाबः वक़्ते मुक़र्रर पर अगर और नमाज़ी आ जाएँ तो किसी ख़ास शख़्स का इंतिज़ार जाइज़ नहीं। मगर जब वक़्ते मुस्तहब में गुंजाइश हो और क़ौम पर गिरानी

भी न हो, या ये शख़्स शरीर और फ़ितना परदाज़ हो तो किसी क़दर इंतिज़ार में मुज़ाएक़ा नहीं। अगर वह दीनी उमूर में मशगूल रहता है तो उसको नमाज़ की इत्तिला करने में मुज़ाएक़ा नहीं।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–223, बहवाला तहतावी जिल्द–1 सफ़्हा–220)

इमाम अगर किसी दुनियादार रईस का इंतिज़ार करता है और हाज़िरीन की रिआयत नहीं करता तो इमाम और मुकब्बिर दोनों गुनहगार हैं, मगर नमाज़ उनके पीछे हो जाती है। (फ़तावा रशीदिया कामिल सफ़्हा–228)

आने वाले के लिए क़िराअत या रुकूअ़ लम्बा करना

सवालः अगर इमाम नमाज़ी के आने की वजह से क़िराअत या रुकूअ़ लम्बा करे कि नमाज़ी शामिल हो जाएँ, तो क्या गुनहगार होगा?

जवाबः अगर इमाम ने किसी नमाज़ी को पहचान लिया, और उसकी ख़ातिर क़िराअत या रूकूअ़ को लम्बा किया तो मकरूहे तहरीमी है, अलबत्ता बग़ैन पहचाने लम्बा करने में कोई कराहत नहीं।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–314)

इमाम के सलाम के वक़्त इक़्तिदा करना

सवालः इमाम साहब ने नमाज़ ख़त्म की, पहला सलाम फेरते हुए अभी "अस्सलामु" का लफ़्ज़ बोला "अ़लैकुम"

नहीं बोला, कि किसी ने इक़्तिदा की, उसकी ये इक़्तिदा सहीह होगी या नहीं?

जवाबः मज़कूरा बाला इक़्तिदा सहीह नहीं है। दोबारा तकबीरे तहरीमा कह कर नमाज़ शुरू करे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–205, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–436)

ज़ाती रंजिश की बिन पर जमाअत से गुरेज़

सवालः बाज़ लोग ज़ाती रंजिश की बिना पर अपने इमाम के पीछे नमाज़ नहीं पढ़ते और दूसरे नमाज़ियों को भी बहकाते हैं कि जब हमारा दिल साफ़ नहीं तो हमारी नमाज़ नहीं होती, तो क्या उनका ये क़ौल दुरुस्त है?

जवाबः इमाम से दिल साफ़ न रखना अगरचे बुरा है, लेकिन नमाज़ फिर भी हो जाती है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–82)

बग़ैर वजहे शरई इमाम के पीछे नमाज़ का तर्क

कुतुबे फ़िक़्ह में लिखा है कि अगर इमाम बेक़ुसूर हो, और लोग उसकी इक़्तिदा से कराहत करें तो गुनाह नमाज़ छोड़ने वालों पर है। और अगर इमाम में क़ुसूर हो तो उस इमाम को इमामत करना ऐसे लोगों की जो उसकी इमामत से नाख़ुश हों, मकरूह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–77, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–522)

इमाम व मुक़्तदियों को कब खड़ा होना चाहिए?

अगर इमाम पहले से मुसल्ले से क़रीब है तो जब मुकब्बिर (तकबीर कहने वाला) हैया अलस्सलाह कहे, इमाम साहब और मुक़्तदी सब खड़े हो जाएँ और अगर इमाम साहब सफ़ों की तरफ़ से आएँ तो जिस सफ़ पर इमाम पहुंचता जाए उस सफ़ के नमाज़ी खड़े होते जाएँ, यहाँ तक कि जब इमाम मुसल्ले पर पहुंचे तो सब खड़े हो चुके हों।

अगर इमाम साहब सामने से आएँ तो जैसे ही इमाम पर नज़र पड़े सब नमाज़ी खड़े हो जाएँ, मुसल्ले तक पहुंचने का इंतिज़ार न करें।

पहली सूरत में हैयाअस्सलाह पर खड़े होने को लिखा गया है, तो उसका मतलब ये है कि उसके बाद न बैठा रहे (मसलन कोई शख़्स तस्बीह पढ़ रहा है और ख़त्म होने से पहले तकबीर शुरू हो गई तो वह मुकब्बिर की हैयाअलस्सलाह पर पहुंचने तक अगर पूरी कर सके तो पूरी कर ले, उसके बाद न बैठा रहे) पस अगर शुरू इक़ामत ही के वक़्त खड़ा हो जाए तब भी मुज़ाइक़ा नहीं।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–181)

अस्ल ये है कि जिस वक़्त मुकब्बिर हैयाअलफ़लाह कहे उस वक़्त खड़ा होना चाहिए, लेकिन अहादीस में तो सफ़ें सीधी करने की नीज़ दरमियान में जगह न छोड़ने की बहुत ताकीद आई है और आ़म तौर पर लोग मसाइल से नाआशना हैं। इसलिए तकबीर शुरू होने से पहले ही

सफ़ें सीधी कर ली जाएँ, ताकि तकबीर भी सब सुकून से सुन सकें, और उस वक़्त किसी क़िस्म का शोर न हो।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–344)

इमाम के पीछे कैसे लोग खड़े हों?

इमाम के क़रीब अह्ले इल्म और अह्ले अक़्ल का खड़ा होना बेहतर है, लेकिन अगर इमाम के क़रीब दूसरे नमाज़ी आ गए हों, तो उनको हटाने की ज़रूरत नहीं है। क्योंकि नमाज़ हर तरह हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–357)

फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–357 के हाशिए पर है कि "इमाम के पीछे खड़े होने का हक़ तो क़ानूनन" भी उन्ही को है जो पहले आएँ। इसलिए कि इमाम को वस्त में रखने का हुक्म है और फिर अगर सफ़ पूरी हो जाए तो दूसरी सफ़ भी इमाम के सामने ही से शुरू होती है।

लेकिन अगर अह्ले इल्म को दूसरे लोग तरजीह दें और अपनी जगह इमाम के पीछे खड़ा करें तो ये फ़ेल भी (ऐसा करना) दुरुस्त बल्कि मतलूब है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–357, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबु जवाज़िल ईसार बिलकुर्ब जिल्द–1 सफ़्हा–532)

जब कोई शख़्स इमाम के पीछे खड़ा हो गया है तो किसी दूसरे नमाज़ी या इमाम को इसका हक़ नहीं कि उसकी जगह से उसको हटा दे, हाँ अगर वह ख़ुद हटने पर रज़ामंद हो जाए तो मुज़ाइक़ा नहीं।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–196, बहवाला

तहतावी सफ़्हा–304)

इमाम के पीछे मुअज़्ज़िन की जगह मुतअैयन करना

मस्जिद में किसी के लिए भी जगह मुतअैयन करना जाइज़ नहीं, मुअज़्ज़िन अगर इमाम से क़रीब रहना चाहता है तो दूसरे नमाज़ियों से पहले आ जाए, वरना जहाँ भी जगह मिले वहीं इक़ामत कह दे, इक़ामत के लिए सफ़े औवल या इमाम के पीछे (क़ुर्ब की) कोई क़ैद नहीं। (अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–95)

इमाम का तकबीर के वक़्त मुसल्ले पर होना

ये ज़रूरी नहीं कि जब इमाम मुसल्ले पर खड़ा हो तब तकबीर शुरू की जाए, बल्कि इमाम जब कि मस्जिद में मौजूद हो, तकबीर कहना दुरुस्त है। इमाम तकबीर सुन कर ख़ुद मुसल्ले पर आ जाएगा, जैसा कि दुर्रेमुख़्तार की इस इबारत से ज़ाहिर होता है:

"وَيَقُوْمُ الاِمَامُ وَالْمُؤتَمُّ حِيْنَ حَيَّ عَلَى الفَلَاح اِذَا كَانَ الاِمَامُ يَقْرُبُ المِحْرَابَ وَاِلَّا فَيَقُوْمُ كُلُّ صَفٍّ يَنْتَهِيْ اِلَيْهِ الاِمَامُ عَلَى الاَظْهَر الخ"

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–112 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–447)

तकबीर के बाद इमाम का देर तक रुक कर नीयत बाँधना

सवाल: एक शख़्स ने ज़ुहर की सुन्नतों की नीयत

बाँधी, सिर्फ़ एक रकअ़त पढ़ी थी कि तकबीर हो गई, जिस वक़्त तक शख़्से मज़कूर की चार रकअ़त पूरी हुई, इमाम साहब मुसल्ले पर नहीं गए। जब वह चारों रकअ़तें अदा कर चुका तब इमाम साहब मुसल्ले पर पहुंचे और पहली तकबीर से नमाज़ अदा की गई। नमाज़ हो गई या नहीं?

जवाबः इस सूरत में नमाज़ हो गई और तकबीर के एआ़दा की ज़रूरत नहीं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–317, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलअज़ान जिल्द–1 सफ़्हा–3)

इमाम ने बग़ैर तकबीर के जमाअ़त शुरू कर दी तो क्या हुक्म है

सवालः इमाम साहब ने मुसल्ले पर खड़े हो कर मुक़्तदियों को तकबीर के लिए कहा, तकबीर में किसी वजह से ताख़ीर हो गई, इमाम ने बक़द्रे तकबीर ताख़ीर कर के बवज्हे ज़ुअ़फ़े सिमाअ़ के न सुना और नीयत बाँध ली तो नमाज़ या सवाबे जमाअ़त में कुछ हरज वाक़ेअ़ होगा या नहीं?

जवाबः इस सूरत में नमाज़ हो गई और सवाबे जमाअ़त भी मिल गया, और इक़ामत जो कि सुन्नत है, मतरुक हो गई, लेकिन बवज्हे अदमे सिमाअ़ (न सुनने की वजह से) ऐसा हुआ इसलिए कुछ गुनाह नहीं हुआ।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–92, बहवाला आलमगीरी मिस्री जिल्द–1 सफ़्हा–50 बाबुलअज़ान)

इमाम के अमामा बाँधते वक्त इक़ामत ख़त्म हो गई तो क्या हुक्म है

सवालः इमाम मुसल्ले पर अमाम या रूमाल बाँध रहा था, मुअज़्ज़िन ने तकबीर ख़त्म कर दी, इमाम ने कहा फिर तकबीर कहो, तो क्या दोबारा तकबीर की ज़रूरत थी?

जवाबः दोबारा तकबीर कहने की इस सूरत में ज़रूरत न थी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–116, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलअज़ान जिल्द–1 सफ़्हा–371)

इमाम के क़दक़ामतिस्सलात पर हाथ बाँधने का हुक्म

सवालः अगर कोई इमाम पूरी तकबीर न होने दे, हमेशा क़दक़ामतिस्सलात पर नीयत बाँध ले तो कैसा है?

जवाबः बेहतर ये है कि तकबीर ख़त्म होने पर इमाम नीयत बाँधे और अगर क़दक़ामत पर नीयत बाँधे तो ये भी जाइज़ है, मगर पहली सूरते औला है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–113)

असह और मोतदिल मज़हब ये है कि जब तक तकबीर से फ़ारिग़ ने हो, उस वक़्त तक इमाम नमाज़ शुरू न करे, क्योंकि इसमें पूरी तकबीर का जवाब सब दे सकेंगे जो कि मुस्तहब व मसनून है।

हदीस में है कि जिस वक़्त मुकब्बिर क़दक़ामतिस्सलात

कहता था तो आँहज़रत (स.अ.व.) अक़ामहल्लाह व अदामहा पढ़ते थे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–213, बहवाला हदीस अबूदाऊद व मिश्कात)

इमाम किस तरह नीयत करे

इस तरह नीयत करें। (1) मैं ख़ालिस ख़ुदा के लिए नमाज़ पढ़ता हूँ। (2) फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ता हूँ (वाजिब वग़ैरा हों तो उसका ख़्याल करे) (3) जिस वक़्त की नमाज़ हो। (ज़ुहर या अस्र वग़ैरा) उसका तसव्वुर करे।

"وَكَفَى مُطْلَقُ نِيَّةِ الصَّلوٰةِ لِنَفْلٍ و سُنَّةٍ و تَرَاوِيْحَ وَلَا بُدَّ مِنَ التَّعَيُّنِ عِنْدَ النِّيَّةِ لِفَرْضٍ وَلَوْ قَضَاءً وَوَاجِبٍ دُوْنَ عَدَدِ رَكْعَاتِهِ وَيَنْوِى الْمُقْتَدِى الْمُتَابَعَةَ" (تنويرالابصار)

इमाम को इमामत की नीयत करना ज़रूरी नहीं है। चुनांचे तन्हा नमाज़ पढ़ने वाले के पीछे कोई नीयत बाँध रहा है तो उसको इमामत की नीयत कर लेनी चाहिए ताकि उसको इमामत का सवाब मिल जाए। हाँ! मुक़्तदी के लिए इक़्तिदा की नीयत करना ज़रूरी है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–167, बहवाला दुर्रेमुख़्तार मअ़ शामी जिल्द–1 सफ़्हा–394)

नमाज़ की नीयत किस ज़बान में ज़रूरी है

नीयत दिल के इरादे को कहते हैं, ज़बान से कहने की ज़रूरत नहीं। अगर कहे तो बेहतर है और ज़बान से

किसी ज़बान में उर्दू, फ़ारसी वग़ैरा में कह लेवे तो कुछ हरज नहीं। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–149, बहवाला आलमगीरी मिस्री जिल्द–1 सफ़्हा–61)

इमाम को मुक्तदी औरत की नीयत करना

अगर औरत मर्द के मुहाज़ी न खड़ी हो तो इमाम को उसकी इमामत की नीयत करना ज़रूरी नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–149, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुन फ़िन्नीयति जिल्द–1 सफ़्हा–394)

हनफ़ीया (रह.) के नज़दीक सेहते नमाज़ के लिए इमाम का इमामत की नीयत करना इस हाल में शर्त है जबकि वह औरतों की इमामत कर रहा हो। पस अगर औरतों का इमाम बनने की नीयत नहीं की तो औरतों की नमाज़ फ़ासिद होगी, हाँ इमाम की नमाज़ सहीह हो जाएगी।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–666)

हनफ़ीया कहते हैं कि इमामत की नीयत सिर्फ़ एक सूरत में लाज़िम आती है, जबकि कोई शख़्स औरतों की इमामत कर रहा हो ताकि मुहाज़ात यानी औरत के मर्द के बराबर खड़े हो जाने के मस्अला में गड़बड़ न हो।

(किताबुलफ़िक्ह अललमज़ाहि बिल अरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–346)

ज़बान से क़ल्बी नीयत के ख़िलाफ़ का हुक्म

नीयत सिर्फ़ इरादा से होती है, ज़बान से अलफ़ाज़

कहने की ज़रूरत नहीं, बल्कि ज़बान से क़ल्बी नीयत के ख़िलाफ़ भी हो जाए तो नमाज़ हो जाएगी। क़ल्ब की नीयत का अदना दर्जा ये है कि किसी के सवाल करने पर फ़ौरन बता सके कि क्या पढ़ना चाहता है। क़ल्बी नीयत में नफ़्ल, सुन्नत और तरावीह वग़ैरा किसी क़िस्म के तअैयुन की ज़रूरत नहीं, मुतलक़ नमाज़ की नीयत काफ़ी है। अलबत्ता फ़र्ज़ और वाजिब में सिर्फ़ इतनी तअ़यीन ज़रूरी है कि ज़ुहर के फ़र्ज़ हैं या अ़स्र के और वाजिब में ये कि वित्र है या नज़्र, और उनमें दिन और रकआ़त की तादाद की नीयत की ज़रूरत नहीं बल्कि उसमें भी क़ल्बी नीयत की ग़लती मुज़िर नहीं।

अगर नमाज़ से क़ब्ल ज़बान और दिल में इख़्तिलाफ़ पाया जाए तो क़ल्ब की नीयत का एतेबार है, ज़बान की ग़लती मोतबर नहीं और अगर नमाज़ शुरू करने के बाद दिल से नीयत बदले तो ये मोतबर नहीं।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–16,17, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–360)

तकबीरे तहरीमा के बाद नीयत करने से नमाज़ न होगी

सवालः ज़ैद ने तकबीरे तहरीमा कह कर हाथ नाफ़ पर बाँध कर फिर ज़बान से पूरी नीयत कर के तऔ़वुज़, तस्मिया, फ़ातिहा और क़िराअत कर के नमाज़ पूरी की तो नमाज़ हुई या नहीं?

जवाबः तकबीरे तहरीमा ख़त्म होने से पहले नीयत ज़रूरी है। इसलिए ज़ैद की नमाज़ नहीं हुई और अगर

तकबीरे तहरीमा ख़त्म होने से क़ब्ल दिल में नमाज़ की नीयत कर ली थी तो अगरचे क़ल्बी नीयत की वजह से नमाज़ की इब्तिदा सहीह हो गई मगर बाद में नीयत के अलफ़ाज़ कहने से नमाज़ फ़ासिद हो गई।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–13, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–448)

तहरीमा में उंगलियों की कैफ़ियत

तकबीरे तहरीमा के वक़्त उंगलियों को न खोलने की कोशिश करे और न आपस में मिलाने की, बल्कि अस्ल हालत पर रहने दे, अंगूठों को कानों की लौ से लगाए और हथेलियों को क़िब्ला रुख़ करे।

(अहसुनलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–19, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–450)

इमाम तकबीरे तहरीमा में उजलत न करे

रद्दुलमुहतार बाबुलइमामत जिल्द–1 सफ़्हा–531 की इबारत "وَيَصِفُ الْإِمَامُ الخ" से ये वाज़ेह होता है कि इमाम को ये ज़रूरी है कि वह मुक़्तदियों को बराबर खड़ा होने का और सफ़ सीधी करने का हुक्म करे। पस इमाम को चाहिए कि तकबीरे तहरीमा में ऐसी उजलत न करे कि सफ़ पूरी हो या न हो, और सफ़ सीधी हो या न हो, और सब नमाज़ी बराबर खड़े हों या न हों फ़ौरन नीयत बाँध ले, ऐसा हरगिज़ न करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–216)

यानी इमाम को चाहिए जिस वक़्त नमाज़ के लिए खड़ा हो पीछे मुक़्तदियों को चेक कर ले कि सब ठीक तरह खड़े हैं या नहीं, और सफ़ें सीधी भी हैं या नहीं और मुक़्तदियों के दरमियान ख़ला तो नहीं, यानी मोंढे से मोंढा मिला होना चाहिए इसकी हदीस में ताकीद आई है।

तकबीरे तहरीमा का तरीक़ा

सवालः तकबीरे तहरीमा कब कहे, हाथ बाँधने से पहले या हाथ बाँध कर?

(1) अगर इमाम कान तक हाथ उठाने के बाद जब नाफ़ तक ले जाए तो उस वक़्त तकबीरे तहरीमा कहे तो नमाज़ सहीह होगी या नहीं?

(2) अगर इमाम का हाथ नाफ़ तक पहुंचने पर तकबीर का एक लफ़्ज़ (अल्लाह) कहे और हाथ बाँधने के बाद दूसरा (अकबर) कहे, तो नमाज़ सहीह होगी या नहीं?

(3) तकबीरे तहरीमा कब शुरू करे और कब ख़त्म करे?

(4) रुकूअ़ व सुजूद का सहीह तरीक़ा क्या है?

(5) अगर इमाम नमाज़ में तकबीरात, ख़िलाफ़े सुन्नत कहे तो शरई हुक्म क्या है?

जवाबः तकबीरे तहरीमा या तकबीरे ऊला और रफ़एयदैन के बारे में तीन क़ौल हैं।

(1) पहले रफ़एयदैन करे यानी दोनों हाथ कानों तक

उठा कर तकबीर (अल्लाहुअकबर) शुरू करे और तकबीर ख़त्म होते ही हाथ बाँध ले।

(2) तकबीर और रफ़एयदैन दोनों एक साथ शुरू करे और एक साथ ख़त्म करे।

(3) पहले तकबीर शुरू कर के फ़ौरन हाथ उठा कर एक साथ ख़त्म करे।

(बहरुर्राइक़ जिल्द–1 सफ़्हा–305, बहवाला दुर्रेमुख़्तार मअ़ शामी जिल्द–1 सफ़्हा–465)

मज़कूरा तीनों सूरतों में से पहली और दूसरी सूरत अफ़ज़ल है और तीसरी सूरत भी जाइज़ है मगर मामूल बिहा नहीं है।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–84)

और जौहरा में है: असह ये है कि औवलन नमाज़ी दोनों हाथ उठाए जब दोनों हाथ कानों के मुहाज़ात में पहुंच कर ठहर जाएँ तब तकबीर शुरू करे।

(जौहरा जिल्द–1 सफ़्हा–49)

सूरते मसऊला में नमाज़ हो गई, लेकिन हाथ बाँधने तक तकबीर को मुअख़्ख़र करने की आदत ग़लत और मकरूह है। ये सना पढ़ने का महल है न कि तकबीर कहने का, तकबीर हाथ बाँधने तक ख़त्म हो जानी चाहिए।

हाथ बाँधने तक मुअख़्ख़र करने में ये भी ख़राबी है कि ऊँचा सुनने वाला और बहरा मुक़्तदी इमाम के रफ़एयदैन को देख कर तकबीरे तहरीमा कहेगा तो इमाम से पहले तकबीर कहने की बिना पर उसकी इक़्तिदा और नमाज़ सहीह न होगी, क्योंकि अगर तकबीर का पहला लफ़्ज़ (अकबर) इमाम के ख़त्म करने से पहले ख़त्म कर

दे तब भी इक़्तिदा सहीह न होगी। (दुर्रेमुख़्तार मअ़ शामी जिल्द–1 सफ़्हा–448) लिहाज़ा इमाम को ये आदत तर्क करनी चाहिए।

जवाब (2): रुकूअ़ व सुजूद की तकबीरात का मसनून तरीक़ा ये है कि रुकूअ़ के लिए झुकने के साथ तकबीर शुरू कर दे और रुकूअ़ में पहुंचते ही ख़त्म करे रुकूअ़ व सुजूद में पहुंच कर तकबीर कहना ख़िलाफ़े सुन्नत और मकरूह है और दो तरह की कराहियत लाज़िम आती है। एक कराहत तर्क महल की, क्योंकि ये तकबीरें, तकबीराते इंतिक़ाल कहलाती हैं, रुकूअ़ और सज्दा की तरफ़ मुन्तक़िल होने यानी रुकूअ़ के लिए झुकने और सज्दा में जाने के वक़्त उनको कहना चाहिए था। ये उनका महल था जिसको तर्क कर दिया।

दूसरी कराहित अदाए बेमहल की, यानी जिस वक़्त तकबीर कह रहा है सुब्हान रब्बीयलअज़ीम या सुब्हान रब्बीयलआला कहने का वक़्त था तकबीर का वक़्त नहीं था। उस वक़्त तकबीर बेमहल है।

(मुनीयतुलमुसल्ली सफ़्हा–88, 94 व कबीरी सफ़्हा–445)

मुख़्तसर ये कि इमाम का ये अमल ख़िलाफ़े सुन्नत है। उन्हें सुन्नत के मुताबिक़ अमल करना लाज़िम है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–233)

तकबीरे तहरीमा के बाद और वित्र में दुआए कुनूत से पहले, इसी तरह नमाज़े ईद की पहली रकअ़त में तीसरी तकबीर के वक़्त हाथ उठा कर बाँध लिए जाएँ। हाथ छोड़ कर फिर बाँधना कहीं से साबित नहीं।

इख़्तिलाफ़ इस बात में है कि सना और क़िराअत

करने की हालत में हाथ बाँधे या छोड़े रखे। इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के नज़दीक और इमाम अबूयूसुफ़ (रह.) के नज़दीक हाथ बाँधने का हुक्म है (उनके नज़दीक हाथ बाँधना क़िराअत के आदाब में से है) यानी जब नमाज़ शुरू करने का इरादा करे तो अपनी हथेलियाँ आस्तीन से निकाले फिर उनको कानों के मुक़ाबिल उठाए फिर तकबीर कहे बिला मद के, नीयत करते हुए फिर दाहने हाथ को बाएँ हाथ पर नाफ़ के नीचे रखे। तहरीमा के बाद बिला ताख़ीर के सना पढ़े।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–37, बहवाला नूरलईज़ह सफ़्हा–6 वलजौहरतुन्नैयरह जिल्द–1 सफ़्हा–50)

इमाम को तकबीरात किस तरह कहनी चाहियें

अक्सर व बेशतर इमाम को देखा जाता है कि नमाज़ पढ़ाते वक़्त तकबीराते इंतिक़ालिया, हरकते इंतिक़ालिया के साथ साथ नहीं कहते, बल्कि कभी तो मुन्तक़िल होने के बाद तकबीर कहते हैं और कभी दूसरे रुकन तक पहुंचने से पहले ही ख़त्म कर देते हैं। मसलन क़याम की हालत से मुन्तक़िल हो कर रुकूअ में जाते हैं तो बाज़ इमाम झुकने के बाद अल्लाहुअकबर कहते हैं, और बाज़ इमाम इस क़दर जल्द अल्लाहुअकबर कहते हैं कि रुकूअ में पूरे तौर पर पहुंचने से पहले ही अल्लाहुअकबर की आवाज़ ख़त्म हो जाती है। और इसी तरह सज्दा में जाते वक़्त और सज्दा से दूसरी रकअत के लिए खड़े होते वक़्त भी करते हैं।

वाज़ेह रहे कि इन दोनों सूरतों में तकबीर की सुन्नते कामिल अदा नहीं हुई, कामिल सुन्नत उस वक़्त ही अदा होती है जबकि एक रुक्न से दूसरे रुक्न की तरफ़ मुन्तक़िल होने के साथ साथ तकबीरात शुरू करे और ज्योंहि दूसरे रुक्न में पहुंचे, तकबीर की आवाज़ बंद हो जाए। और बाज़ इमाम अल्लाहुअकबर को इस तरह खींचते हैं कि दूसरे रुक्न में पहुंच जाने के बाद भी कुछ देर तक उनकी तकबीर की आवाज़ आती रहती है। इस दर्जा तकबीर को खींचना मकरूह है।

(मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–71 बहवाला कबीरी सफ़्हा–313)

बाज़ इमाम तकबीर कहने में बड़ी बे एहतियाती करते हैं और अल्लाहुअकबर कहने के बजाए अल्लाहुअकबार कहते हैं, यानी बा और रा के दरमियान अलिफ़ बढ़ा देते हैं। इसी तरह बाज़ इमाम अल्लाहुअकबर के शुरू में मद करते हैं और आल्लाहुअकबर कहते है। ये दोनों सूरतें बिल्कुल ग़लत हैं। इन दोनों सूरतों में नमाज़ फ़ासिद हो जाती है। और अगर तकबीरे तहरीमा में इस तरह कह दिया तो नमाज़ का शुरू करना ही सहीह न होगा।

(मसाएले सज्दए सह्व सफ़्हा–73)

अल्लामा शामी रहमतुल्ला अलैह ने हिलया वग़ैरा से नक़्ल फ़रमाया है कि तकबीर में इस्मे ज़ात "अल्लाह" और अकबर के अलिफ़ को खींच कर पढ़ना मुफ़्सिदे नमाज़ है, और लाम को इतना खींचना कि एक अलिफ़ मज़ीद पैदा हो जाए, मकरूह है, मुफ़्सिद नहीं, इसी तरह हा को खींचना मकरूह है। बा की मद के मुफ़्सिद होने में इख़्तिलाफ़

है और रा पर पेश खींच कर पढ़ना मुफ़सिद नहीं है।

मगर गल्बए जेह्ल की वजह से मुतअख़्ख़िरीन का ये फ़ैसला है कि एराब और मद की ग़लती मुफ़सिद नहीं, अलबत्ता अगर कोई तंबीह के बावजूद इसलाह की कोशिश नहीं करता तो उसकी नमाज़ नहीं होगी और ग़लत ख़्वाँ को इमाम बनाना बहरसूरत नाजाइज़ है, बजुज़ इस मजबूरी के कि कोई सहीह पढ़ने वाला मौजूद न हो।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–424)

तहरीमा में आम ग़लती

बाज़ मरतबा मुक़्तदी भी ऐसी ग़लती कर बैठते हैं कि जिससे उनकी नमाज़ फ़ासिद हो जाती है, मसलन इमाम के तकबीर तहरीमा अल्लाहुअकबर कहने से पहले मुक़्तदी अल्लाहुअकबर कह देते हैं, या इमाम के लफ़्ज़ अल्लाह ख़त्म होने से पहले ही लफ़्ज़ अल्लाह कह देते हैं। इन दोनों सूरतों में नमाज़ का शुरू करना ही सहीह नहीं होता। उन मुक़्तदियों को चाहिए कि वह फिर से दोबारा अल्लाहुअकबर कह कर इमाम के पीछे नीयत बाँधें।

(मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–74, बहवाला सग़ीरी सफ़्हा–143)

अक्सर मुक़्तदियों को देखा जाता है कि अगर इमाम रुकूअ़ में चला गया तो उसके साथ रुकूअ़ में शरीक होने के लिए सीधे खड़े हुए बग़ैर, अल्लाहुअकबर कहते हुए रुकूअ़ में चले जाते हैं, इस तौर पर कि उनकी अल्लाहुअकबर की आवाज़ रुकूअ़ में पहुंच कर ख़त्म होती है।

इस तरह नमाज़ में शरीक होना दुरुस्त नहीं, तकबीरे तहरीमा से फ़ारिग़ होने तक खड़ा होना फ़र्ज़ है, यानी सीधे खड़े होकर अल्लाहुअकबर की आवाज़ ख़त्म हो जाए उसके बाद रुकूअ़ के लिए झुकना चाहिए। अगर तकबीराते तहरीमा बहालते क़याम यानी क़याम की हालत में ख़त्म न हों तो उसका नमाज़ में शुमूल सहीह नहीं हुआ।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–391)

मसनून तरीक़ा ये है कि क़याम की हालत में तकबीरे तहरीमा कह कर फिर फ़ौरन दूसरी तकबीर कहता हुआ रुकूअ़ में चला जाए, तकबीरे तहरीमा के बाद हाथ न बाँधे रुकूअ़ में इमाम के साथ ज़रा सी शिरकत काफ़ी है। यहाँ तक कि अगर मुक़्तदी इस हालत में रुकूअ़ के लिए झुका कि इमाम रुकूअ़ से उठ रहा है मगर इमाम अभी सीधा नहीं होने पाया था कि उसके हाथ रुकूअ़ तक पहुंच गए, तो उसको ये रकअ़त मिल गई, इसलिए कि एक तस्बीह के बराबर (बक़दरे तस्बीहतिन वाहिदतिन) रुकूअ़ में ठहरना वाजिब है, उसके बाद बक़िया तस्बीहात छोड़ कर इमाम की इत्तिबा वाजिब है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–288)

तकबीर में जेह्र की मिक्दार

सवालः इमाम का बाज़ तकबीरात को इस तरह जेह्र (ज़ोर) से बोलना कि मस्जिद से बाहर सड़क तक सुनाई दे और बाज़ तकबीरात को इतनी आहिस्ता बोलना कि दूसरी, तीसरी सफ़ वाले भी न सुनें, कैसा है?

जवाबः इमाम को क़िराअत और तकबीरात के जेह्र में दरमियानी तरीक़ा को इख़्तियार करना चाहिए, और क़द्रे हाजत के मुवाफ़िक़ जेह्र करना चाहिए, और ये फ़र्क़ और तफ़ावुत तकबीरात के दरमियान, कि बाज़ को जेह्रे मुफ़रित से अदा करना और बाज़ को क़द्रे हाजत से भी कम कर देना मज़मूम और बेअस्ल है, शरीअ़त में उसकी कोई अस्ल नहीं है। सिर्फ़ सलाम में तो फ़ुक़हा ने ये लिखा है कि दूसरे सलाम को पहले सलाम से कुछ पस्त आवाज़ से कहे और उसके अलावा और किसी जगह जेह्र में तफ़ावुते दरजात नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–180, बहवाला रद्दुलमुहतार फ़स्लुन फ़िलक़िराअति जिल्द–1 सफ़्हा–497 व बाबु सिफ़तिस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–443)

इमाम के लिए ज़ोर से तकबीर कहना मसनून है। इसीलिए उसके तर्क से सज्दए सह्व तो नहीं अलबत्ता तर्के सुन्नत का गुनाह होगा। और जेह्र की हद ये है कि पूरी सफ़े औवल तक आवाज़ पहुंचे।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–366, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–499)

क़िराअत में जेह्र की मिक़्दार

सवालः इमाम, तरावीह वग़ैरा जेह्री नमाज़ों में क़िराअत किस क़दर ज़ोर से करे?

जवाबः अफ़ज़ल ये है कि इमाम जेह्री नमाज़ों में बिला तकल्लुफ़ इस क़दर ज़ोर से पढ़े कि मुक़्तदी क़िराअत

सुन सकें, इससे ज़्यादा तकल्लुफ़ कर के पढ़ना मकरूह और मना है। इरशादे रब्बानी है: "وَلَا تَجْهَرْ بِصَلَاتِكَ وَلَا تُخَافِتْ بِهَا وَابْتَغِ بَيْنَ ذَٰلِكَ سَبِيلًا" (बनी इसराईल पारा–15 रुकूअ़–12) और न तुम अपनी नमाज़ों में ज़्यादा ज़ोर से पढ़ो और न बिल्कुल आहिस्ता पढ़ो, उसके बीच दरमियानी राह इख़्तियार करो।

मुफ़स्सिरीन फ़रमाते हैं कि नमाज़ में दरमियानी आवाज़ से क़िराअत करनी चाहिए, इससे क़ल्ब पर असर होता है, न इस क़दर ज़ोर से पढे कि क़ारी और सामेअ़ दोनों को तकलीफ़ हो कि उससे हुज़ूरे क़ल्ब में ख़लल आ जाए।

(ख़ुलासतुत्तफ़सीर जिल्द–3 सफ़्हा–67 व तफ़सीर फ़तहुलमन्नान जिल्द–5 सफ़्हा–96)

फ़ुक़हाए किराम ज़ारे से पढ़ने में दो बातें ज़रूरी क़रार देते हैं। औवल ये कि पढ़ने वाला अपने ऊपर ग़ैर मामूली ज़ोर न डाले (ये मकरूह है) दूसरे ये कि दूसरों को तकलीफ़ ने हो। मसलन तहज्जुद के वक़्त कोई सो रहा है या कुछ लोग अपने काम में मसरूफ़ हैं। आप उनके पास खड़े होकर इतनी बुलंद आवाज़ से क़िराअत करने लगें कि उनके काम में ख़लल हो, तो ये भी मकरूह है। इन दोनों बातों के बाद तीसरी बात ये है कि जमाअ़त की कमी ज़्यादती का लिहाज़ करते हुए उसके बमोजिब क़िराअत करें। मसलन मुक़्तदियों की तीन सफ़ें हैं, आप इतनी बुलंद आवाज़ से पढ़ें कि तीसरी सफ़ तक आवाज़ पहुंचती रहे, इससे ज़्यादा ज़ोर से न पढ़ें कि बाहर तक आवाज़ पहुंचे।

फ़क़ीह अबूजाफ़र (रह.) का ये क़ौल है कि जितनी

बुलंद आवाज़ से पढ़े अच्छा है, बशर्तेकि पढ़ने वाले पर तअ़ब ने हो और किसी को तकलीफ़ न पहुंचे। मगर दूसरे फुक़हा का ये क़ौल है और राजेह यही है कि बक़द्रे ज़रूरत आवाज़ बुलंद करे, यानी सिर्फ़ इतनी आवाज़ बुलंद करे कि तीसरी सफ़ तक आवाज़ पहुंचे, अलबत्ता अगर सफ़ें ज़्यादा हों तो आवाज़ को इससे बुलंद भी कर सकते हैं बशर्तेकि अपने ऊपर ज़्यादा ज़ोर न पड़े।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–351, बहवाला तहतावी अला मराक़िलफ़लाह सफ़्हा–137 व दर्रेमुख़्तार फ़स्ल फ़ी वाजिबिस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–497 मुजम्मउल अनहर जिल्द–1 सफ़्हा–103 आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–72)

इमाम क़ौमा और जलसा इत्मीनान से करे

सवाल: हमारे इमाम साहब रुकूअ़ के बाद क़ौमा में सीधे खड़े हुए बग़ैर सज्दा में चले जाते हैं और समिअल्लाहुलिमनहमिदह के साथ ही अल्लाहुअकबर कहते हैं। दरमियान में ज़रा भी नहीं ठहरते, न साँस तोड़ते हैं। इसी तरह सज्दा के बाद जलसा की हालत में करते हैं और यही हालत सज्दा में जाने और सज्दा से उठने की तकबीरात की है, इन तकबीरात में वक़्फ़ा नहीं करते। उनको देखते हुए मुक़्तदी भी ऐसा ही करते हैं। शरअ़न क्या हुक्म है?

जवाब: इस तरह आदत कर लेना ग़लत है, नमाज़ मकरूह होती है और क़ाबिले इआ़दा हो जाती है। क़ौमा और जलसा को इत्मीनान से अदा करना ज़रूरी है।

दुर्रेमुख़्तार सफ़्हा–465, 466, 472 की इबारतों का हासिल ये है कि रुकूअ के बाद सीधा खड़ा हो। क्योंकि ये क़ौमा सुन्नत है और उसको वाजिब और फ़र्ज़ भी कहा गया है फिर ज़मीन की तरफ़ झुकते हुए "अल्लाहुअकबर" कहे और दोनों घुटने ज़मीन पर रखे। इबारत में लफ़्ज़ "सुम्मा" आया है जिसका मतलब यही है कि वक्फ़ा के साथ ठहर ठहर कर सज्दा में जाते हुए तकबीर कहते हुए झुकना शुरू करे ये तकबीर उस वक़्त ख़त्म हो जब झुकना ख़त्म हो, और पेशानी ज़मीन पर रखी जाए। फिर दोनों सज्दों के दरमियान इत्मीनान से बैठे, यानी इतनी देर बैठे कि सुब्हानल्लाह कहा जा सके। आँहज़रत (स.अ.व.) से क़ौमा और जलसा का तरीक़ा हज़रत आइशा (रज़ि.) ब्यान फ़रमाती हैं कि जब रुकूअ़ से अपना सरे मुबारक उठाते तो इत्मीनान से सीधे खड़े होते, फिर सज्दा में जाते, इसी तरह सज्दा के बाद सरे मुबारक को उठा कर बराबर सीधे बैठ जाते, तब दूसरा सज्दा फ़रमाते।

(मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–75)

इसी तरह हज़रत अबूहमीद साअ़दी (रज़ि.) आँहज़रत (स.अ.व.) के क़ौमा का तरीक़ा ब्यान फ़रमाते हैं कि जब आँहज़रत (स.अ.व.) रुकूअ़ से अपना सरे मुबारक उठाते तो बराबर सीधे खड़े हो जाते यहाँ तक कि कमर मुबारक का जोड़ अपनी जगह ठहर जाता।

(मिश्कात जिल्द–1 सफ़्हा–75)

आँहज़रत (स.अ.व.) की नमाज़ के मुताबिक़ अपनी नमाज़ होनी ज़रूरी है। आप (स.अ.व.) का इरशाद है– "मुझे जिस तरह नमाज़ पढ़ते देख रहे हो उसी तरह तुम

नमाज़ पढ़ो।"

अगर हम ख़ुद ही आँहज़रत (स.अ.व.) की नमाज़ के मुताबिक़ अदा करने की कोशिश न करें और ख़िलाफ़े सुन्नत नमाज़ पढ़ें तो नमाज़ मक़बूल न होगी और क़ाबिले इआ़दा होगी। हदीस शरीफ़ में है कि: "आँहज़रत (स.अ.व.) मस्जिद में एक तरफ़ तशरीफ़ फ़रमा थे। एक शख़्स आया और उसने नमाज़ पढ़ी फिर आप के पास आया सलाम किया, आप ने फ़रमाया वअलैकुमुस्सलाम वापस जाओ नमाज़ पढ़ो तुम ने नमाज़ नहीं पढ़ी। वह वापस हुआ नमाज़ पढ़ी फिर आया, आप ने फिर यही फ़रमायास कि जाओ नमाज़ पढ़ो, तुम ने नमाज़ नहीं पढ़ी, दो या तीन मरतबा यही हुआ। तीसरी या चौथी मरतबा में उसने अर्ज़ किया या रसूलुल्लाह (स.अ.व.) मैं तो इससे बेहतर नमाज़ नहीं पढ़ सकता। आप मुझ को नमाज़ पढ़नी सिखा दीजिए। आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि जब तुम नमाज़ के लिए उठो तो पहले अच्छी तरह वुज़ू करो, फिर क़िबला रुख़ खड़े हो जाओ, फिर अल्लाहुअकबर कहो, फिर कुरआ़न जो तुम को याद है जितना आसानी से पढ़ सकते हो पढ़ो, फिर झुको और फिर इत्मीनान से रुकूअ़ करो फिर रुकूअ़ से उठो यहाँ तक कि इत्मीनान से सीधे खड़े हो जाओ। फिर सज्दा में जाओ और इत्मीनान से सज्दा करो, फिर सज्दा से उठो और इत्मीनान के साथ ठहर ठहर कर रुकूअ़ और हर एक रुक्न को अदा करो।

(मिश्कात शरीफ़ बाबु सिफ़तिस्सलात सफ़्हा–76)

फ़िक़्ह और हदीस की तस्रीहात को देखिए, उनमें बार बार इत्मीनान की हिदायत की गई है।

आपके इमाम साहब अगर इत्मीनान के साथ ठहर ठहर कर रुकूअ़, सज्दा, क़ौमा व जसला नहीं करते, समिअल्लाहुलिमनहमिदह और अल्लाहुअकबर लगातार कहते रहते हैं तो हदीस और फ़िक़्ह की तस्रीहात के ख़िलाफ़ करते हैं, जो सरासर बे अदबी और मकरूह है। मिश्कात सफ़्हा–83 पर है: "बदतर और सब से बुरा चोर वह है जो अपनी नमाज़ में चोरी करता है। सहाबा ने अर्ज़ किया या रसूलुल्लाह (स.अ.व.) नमाज़ में किस तरह चोरी करता है? आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि नमाज़ में चोरी ये है कि रुकूअ़ व सुजूद को ठीक तौर पर अदा नहीं करता। फिर आप (स.अ.व.) ने इरशाद फ़रमाया– अल्लाह तआ़ला उस शख़्स की नमाज़ की तरफ़ नहीं देखता जो रुकूअ़ व सुजूद में अपनी पीठ को साबित नहीं रखता।"

आप (स.अ.व.) ने एक शख़्स को नमाज़ पढ़ते हुए देखा कि रुकूअ़ व सुजूद पूरा अदा नहीं कर रहा था तो फ़रमाया: "तू अल्लाह से नहीं डरता कि अगर तूं इसी आदत पर मर गया तो दीने मुहम्मदी पर तेरी मौत न होगी।"

आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया: "तुम में से किसी की नमाज़ पूरी नहीं होती जब तक रुकूअ़ के बाद सीधा खड़ा न हो, और अपनी पीठ को साबित न रखे, और उसका हर एक अज़्व अपनी अपनी जगह पर क़रार न पकड़े।

इसी तरह आँहज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया जो शख़्स दोनों सज्दों के दरमियान बैठने के वक़्त अपनी पीठ को दुरुस्त नहीं करता और साबित नहीं रखता उसकी नमाज़ पूरी नहीं होती।

आप (स.अ.व.) एक नमाज़ी के पास से गुज़रे, देखा कि अरकान और क़ौमा व जलसा बख़ूबी अदा नहीं करता तो फ़रमाया कि अगर तू इसी आदत पर मर गया तो क़यामत के दिन मेरी उम्मत में न उठेगा।

मन्कूल है कि मोमिन बंदा जब नमाज़ को अच्छी तरह अदा करता है और उसके रुकूअ़ व सुजूद को बख़ूबी बजा लाता है तो उसकी नमाज़ बश्शाश और नूरानी होती है और फ़रिश्ते उस नमाज़ को आसमान पर ले जाते हैं, नमाज़ अपने नमाज़ी के लिए दुआ करती है और कहती है कि अल्लाह तआ़ला तेरी हिफ़ाज़त करे, जिस तरह तूने मेरी हिफ़ाज़त की है। और अगर नमाज़ को अच्छी तरह अदा नहीं करता और उसके रुकूअ़ व सुजूद और क़ौमा व जलसा को बजा नहीं लाता तो वह नमाज़ सियाह रहती है और फ़रिश्तों को उससे कराहत होती है और उसको आसमान की तरफ़ नहीं ले जाते। वह नमाज़ उस नमाज़ी के लिए बद दुआ करती है और कहती है कि अल्लाह तआ़ला तुझ को ज़ाए करे जिस तरह तूने मुझे ज़ाए किया।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–45)

इमाम का सिर्फ़ हुस्ने आवाज़ के लिए खाँसना

सवालः अगर फ़र्ज़ नमाज़ में इमाम साहब बिला उज़्र खिकारें जो महज़ हुस्ने आवाज़ के लिए हो, जिसकी तादाद तीन मरतबा तक पहुंच गई हो तो उस खिकारने की वजह से नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी या नहीं?

जवाबः दुर्रेमुख़्तार की इबारत में है, हुस्ने सौत (अच्छी आवाज़) करने के लिए खिकारने से नमाज़ फ़ासिद नहीं होती, अगरचे तीन बार या कम व बेश हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–65, बहवाला दुर्रेमुख़्तार बाबु मायुफ़्सिदुस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–478)

बग़ैर सना के क़िराअत करने का हुक्म

सवालः अगर कोई इमाम तकबीरे तहरीमा के बाद फ़ौरन बग़ैर सना पढ़े सूरए फ़ातिहा शुरू कर दे तो क्या हुक्म है?

जवाबः सना (सुब्हानका, अल्लाहुम्मा) न पढ़ने की आदत बना लेना तो मज़मूम हरकत होगी, बाक़ी उससे नमाज़ में कोई कराहत नहीं आएगी। इसलिए कि क़िराअते सना (सना का पढ़ना) महज़ मुस्तहब है, और तर्के मुस्तहब से नमाज़ में क़बाहत नहीं आती।

(मुकम्मल व मुदल्लल मसाइले तरावीह सफ़्हा–70)

क्या इमाम मुक़्तदियों की सना का इंतिज़ार करे

सवालः इमाम सना (सुब्हानका, अल्लाहुम्मा) पढ़ कर क़िराअत शुरू कर दे, या मुक़्तदियों की सना पढ़ने का इंतिज़ार करे?

जवाबः इंतिज़ार न करे (क़िराअत शुरू कर दे।)

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–164, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुसिफ़तिस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–471)

नमाज़ में बिस्मिल्लाह का हुक्म

सवालः इमाम पर हर रकअ़त में बिस्मिल्लाह का पढ़ना अलहम्द और सूरत के साथ वाजिब है या नहीं? और इमाम व मुन्फ़रिद के लिए मुस्तहब सूरत, हनफ़ीया के मज़हब के मुताबिक़ क्या है?

जवाबः रद्दुलमुहतार बाबुसिफ़तिस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–457 से मालूम होता है कि इमाम को अलहम्दु से पहले बिस्मिल्लाह का पढ़ना सुन्नत है और बाज़ वुजूब के क़ाएल हैं। और सूरत से पहले अगरचे मसनून नहीं है लेकिन मकरूह भी नहीं है, बल्कि मुस्तहब और बेहतर है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–184)

क़िराअत में तरतीब का लिहाज़

सूरतों को तरतीब से पढ़ना वाजिब है। पस पहली रकअ़त में "तब्बत यदा" और दूसरी में "इज़ा–जाआ" पढ़ना दुरुस्त नहीं है और फ़राइज़ में एक छोटी सूरत का फ़ासिला करना मसलन पहली रकअ़त में "इज़ा–जाआ" और दूसरी रकअ़त में "कुलहुवल्लाह" पढ़ना मकरूह है, और नवाफ़िल में ऐसा करना दुरुस्त है, और एक रकअ़त में मसलन सूरए मुज़्ज़म्मिल पढ़ कर कुलहुवल्लाह उसके साथ मिलाना मकरूह है। इसी तरह दूसरी रकअ़त में मुऔवज़तैन यानी एक रकअ़त में दो सूरतें पढ़ना भी अच्छा नहीं है, अगरचे नमाज़ सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–223, बहवाला रद्दुलमुहतार फ़स्लुन फ़िलक़िराअति जिल्द–1 सफ़्हा–510)

निस्फ़ आयत से क़िराअत की इब्तिदा करना कैसा है

इस तरह नमाज़ तो हो जाती है लेकिन ऐसा न करना चाहिए, कि ये अम्र ग़ैर मशरूअ़ और ख़िलाफ़े क़वाइद है, जब सूरत के बाज़ हिस्से के पढ़ने को बाज़ फ़ुक़हा ने मकरूह लिखा है तो आयत अधोरी पढ़ना कब मुनासिब होगा? (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–240)

इमाम ने जेहरी नमाज़ में सिर्रन पढ़ा

सवालः अगर जेहरी नमाज़ में इमाम दो तीन आयतें आहिस्ता पढ़ गया, लुक़्मा देने के बाद, या अज़ ख़ूद उसको याद आ गया अब वह सब को जेहर से पढ़े या जहाँ से याद आया वहीं से आवाज़ से शुरू कर दे? और सज्दए सह्व करना होगा या नहीं?

जवाबः जहाँ से याद आया वहीं से जेहर शुरू कर दे। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–172)

जेहरी नमाज़ में तीन आयात की मिक़्दार सह्वन सिर्रन पढ़ने से सज्दए सह्व लाज़िम होगा। इसी तरह सिर्री नमाज़ में जेहरन पढ़ने का हुक्म है। सूरए फ़ातिहा अगर सिर्रन पढ़ी है तो जेहरी नमाज़ में उसको जेहरन पढ़े फिर सज्दए सह्व करे। अगर उसको जेहरन नहीं पढ़ा बल्कि सिर्फ़ सूरत को जेहरन पढ़ कर सज्दए सह्व

कर लिया तब भी नमाज़ दुरुस्त हो जाएगी।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–150)

इमाम को लुक़्मा देने की तफ़सील

इमाम अगर इतनी मिक़्दार क़िराअत के बाद अटका है कि जिसके बाद रुकूअ़ कर देना मुनासिब था, तब तो इमाम को रुकूअ़ कर देना चाहिए। अगर इतनी मिक़्दार से पहले ही अटक गया तो उसको चाहिए कि दूसरी सूरत जो याद हो पढ़ दे, वहीं अटका न रहे, इमाम को उसी अटकी हुई जगह को बार बार पढ़ना मकरूह है और मुक़्तदी को चाहिए कि लुक़्मा देने में जल्दी ने करे बल्कि तवक़्क़ुफ़ करे कि शायद इमाम रुकूअ़ कर दे या दूसरी सूरत पढ़ दे या ख़ुद ही अटकी हुई जगह को निकाल कर सहीह पढ़ ले, जल्दी लुक़्मा देना मुक़्तदी के हक़ में मकरूह है।

जब इमाम न रुकूअ़ करे और न दूसरी सूरत पढ़े, न ख़ुद निकाल पाए तो लुक़्मा दे दे, ख़्वाह तीन आयत पढ़ चुका हो या उससे कम, नमाज़ किसी की भी फ़ासिद न होगी, इमाम की न मुक़्तदी की।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–185, बहवाला तहतावी सफ़्हा–183)

इमाम का सूरतों को ख़िलाफ़े तरतीब पढ़ना

सवाल: इमाम साहब ने पहली रकअ़त में सूरए

काफ़िरून पढ़ी और दूसरी रकअ़त में सूरए कौसर या सूरए कुरैश पढ़ी तो इस तरह कुरआन की तरतीब के ख़िलाफ़ पढ़ने से नमाज़ दुरुस्त होगी या नहीं?

जवाबः तरतीबे सूरत वाजिबाते तिलावत में से है वाजिबाते नमाज़ से नहीं। लिहाज़ा इस तरह पढ़ने से सज्दए सह्व नहीं, हाँ अमदन इस तरह पढ़ना मकरूह है, निसयानन (भूल कर) पढ़े तो मकरूह भी नहीं।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–246, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–510)

मुक़्तदी के लुक़्मा देने से इमाम को आयते सज्दा पढ़ना

इमाम साहब सज्दा की आयत भूल गए और मुक़्तदी ने पढ़ कर लुक़्मा दिया और इमाम ने वह आयत पढ़ कर सज्दा किया तो ये एक सज्दा काफ़ी है, इस सूरत में दो सज्दे वाजिब नहीं।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–49)

वाजिब क़िराअत की मिक़्दार

सवालः कुरआन मजीद की छोटी सी तीन आयतें जो एक रकअ़त में काफ़ी हो सकती हैं, कौन सी हैं, आयत गोल टुकड़े की मानी जाती है या जीम, स़ाद, ज़ाल, त़ो वग़ैरा पर मानी जाती है। एक बड़ी आयत के मुक़ाबिले में छोटी तीन आयतें काफ़ी हो सकती हैं या नहीं?

जवाबः वाजिबाते नमाज़ में से ये है कि सूरए फ़ातिहा

के बाद तीन आयात छोटी या एक आयत बड़ी जो छोटी तीन आयतों के बराबर हो पढ़े।

छोटी सूरत जिसमें तीन आयतें हैं "اِنَّا اَعْطَيْنٰكَ الْكَوْثَر" है। ये सूरत या इसके मानिन्द कोई दूसरी सूरत अलहम्दु के बाद पढ़ने से वाजिब अदा हो जाता है, और आयत वही समझी जाती है जिस पर गोल निशान इस सूरत से हो○और बड़ी आयत की मिसाल आयतलकुर्सी या आयत मुदायना बग़ैरा है, और छोटी आयत की मिसाल "ثُمَّ نَظَرَ○ ثُمَّ عَبَسَ وَبَسَرَ○ ثُمَّ اَدْبَرَ وَاسْتَكْبَرَ○" है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–245, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुसिफ़तिस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–427)

(नमाज़ में क़िराअत) एक आयत की मिक़्दार फ़र्ज़ है, अलहम्दु और कोई सूरत या तीन आयात या एक आयते तवीला वाजिब है। जुहर में मुफ़स्सलात का पढ़ना सुन्नत है यानी फ़ज्र व जुहर में सूरए हुजरात से आख़िर बुरूज तक कोई सूरत और अस्र और इशा में उसके बाद से लमयकुन तक और मग़रिब में उसके बाद से ख़त्म तक, उसके अलावा भी कभी कभी मख़सूस सूरतों का पढ़ना साबित है, लेकिन मुक़्तदियों के हाल और वक़्त की रिआयत लाज़िम है।

(फ़तावा महमूदिया सफ़्हा–158 बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–360)

नमाज़ में मुख़्तलिफ़ सूरतों के रुकूअ पढ़ना

सवाल: कोई इमाम अगर इस तरह क़िराअत किया

करे मसलन उसको हर पारा का एक एक रुकूअ़ याद है और हर नमाज़ में एक रुकूअ़ पढ़ता है। इसी तरह बित्तरतीब तमाम ख़त्म कर लेता है, फिर बादे ख़त्म इब्तिदा से शुरू कर देता है। इस तरह जाइज़ है या नहीं?

जवाबः इस तरह पढ़ने से नमाज़ हो जाती है, लेकिन अफ़ज़ल ये है कि हर एक रकअ़त में पूरी सूरत पढ़े। इस तरीक़े से कि जिस तरह फ़ुक़हा ने लिखा है कि सुब्ह और ज़ुहर की नमाज़ में तिवाले मुफ़स्सल और अस्र व इशा में औसाते मुफ़स्सल और मग़रिब में क़िसारे मुफ़स्सल में से कोई सूरत पढ़े। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–246, बहवाला आलमगीरी मिस्री जिल्द–1 सफ़्हा–72)

नमाज़ की क़िराअत में आप (स.अ.व.) का मामूल

मुख़्तलिफ़ औक़ात की नमाज़ की क़िराअत में रसूलुल्लाह (स.अ.व.) का मामूल ये था: ज़ुहर की नमाज़ में ततवील, अस्र में तख़्फ़ीफ़, मग़रिब में क़िसारे मुफ़स्स्ल, इशा में औसाते मुफ़स्सल और फ़ज्र की नमाज़ में तिवाले मुफ़स्सल।

"मुफ़स्सल" क़ुरआन शरीफ़ की आख़िरी मंज़िल की सूरतों को कहा जाता है यानी सूरए हुजरात से आख़िरे क़ुरआन तक, फिर उसके भी तीन हिस्से किए गए हैं। हुजरात से लेकर सूरए बुरूज तक की सूरतों को "तिवाले मुफ़स्सल" कहा जाता है और बुरूज से लेकर सूरए लम यकुन तक की सूरतों को "औसाते मुफ़स्सल" और लम यकुन से लेकर आख़िर तक की सूरतों को "क़िसारे मुफ़स्सल" कहा जाता है। (मआ़रिफ़ुलहदीस जिल्द–3 सफ़्हा–257)

इमाम का ख़िलाफ़े सुन्नत क़िराअत करना

सवालः फ़ज्र और ज़ुहर में सूरए हुजरात से सूरए बुरूज तक और अस्र व इशा में सूरए वत्तारिक़ से लमयकुन तक और मग़रिब में सूरए ज़िलज़ाल से सूरए नास तक और वित्रों में सब्हिस्मे रब्बिक, सूरए क़द्र, सूरए अलकाफ़िरून, सूरए इख़लास इन सूरतों का इस तरह पढ़ना सुन्नत है या मुस्तहब?

अगर कोई इमाम मुन्दरजा बाला सूरतों के अलावा और कोई रुकूअ़ या तीन चार आयतें कहीं से पढ़े तो वह इमाम तरिके सुन्नत है या नहीं? और उन सूरतों के न पढ़ने से नमाज़ के सवाब में कुछ कमी होती है या नहीं?

जवाबः हाँ इस तरतीब से सूरतें नमाज़ों में पढ़ना सुन्नत है, मगर सुन्नते मुअक्कदा नहीं। उसके बजाए दूसरे रुकूअ़ पढ़ लेने में कोई कराहत नहीं है, हाँ ख़िलाफ़े औला है। (किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–307)

क़िरअात के आख़ीर लफ़्ज़ को रुकूअ़ की तकबीर के साथ मिलाना

सवालः इमाम साहब का सूरए फ़ातिहा के बाद सूरत या आयत के आख़िरी लफ़्ज़ पर वक़्फ़ न करना बल्कि अल्लाहुअकबर के साथ वस्ल कर के रुकूअ़ में जाना मसलन "وَاللّٰهُ الْمُسْتَعَانُ عَلٰى مَاتَصِفُوْنَ اَللّٰهُ اَكْبَرُ" सुन्नत के मुवाफ़िक़ है या नहीं?

जवाबः अगर आख़िरी लफ़्ज़ सना पर ख़त्म हो तो उसको रुकूअ़ की तकबीर के साथ मिला कर पढ़ना औला है। अगर ऐसा न हो तो वक़्फ़ कर के तकबीर कहना औला है। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–126, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–331)

समिअल्लाहोलिमन हमिदह की सहीह अदाएगी

सवालः एक इमाम साहब "سَمِعَ اللّٰهُ لِمَنْ حَمِدَهٗ" को इस तरह पढ़ते हैं कि "هُـوَلِيَــمَـنْ" सुनने में आता है। आया ये सहीह है या ग़लत?

जवाबः इस तरह पढ़ना बएतेबार क़िराअत के ग़लत है, सहीह नहीं है। क़िराअत के क़ाएदा में ये है कि ज़म्मा और कसरा (पेश व ज़ेर) में सिर्फ़ वाव और या की बू आ जाए न ये कि सरीह वाव और या यानी "هُـوَلِيَــمَـنْ" पढ़ा जाए, ये बिल्कुल ग़लत है। चाहिए कि वह इमाम "سَـمِـعَ اللّٰهُ لِمَنْ حَمِدَهٗ" पढ़ें और ऐसी क़िराअत से मआफ़ रखें।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–88)

इमाम को मुतनब्बेह करने का तरीक़ा

सवालः अगर इमाम से सहवन क़ाअ़दए अख़ीरा तर्क हो गया और इमाम क़रीब क़याम के पहुंच गया तो मुक़्तदी को सुब्हानल्लाह कहते हुए खड़ा होना औला है, या बैठ कर सुब्हानल्लाह कहे, औला क्या है?

जवाबः बैठे हुए कहना औला मालूम होता है। जुज़ईया

कोई नज़र से नहीं गुज़रा और दुरुस्त दोनो तरह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–419)

इमाम का दूसरी रकअ़त में क़िराअत लम्बी करना

सवालः इमाम साहब ने सुब्ह की नमाज़ में औवल रकअ़त से दूसरी रकअ़त में क़िराअत को क़सदन दो चार आयत तूल दे दिया। इस सूरत में नमाज़ बिला कराहत सहीह होगी या नहीं?

जवाबः इस सूरत में नमाज़ सहीह है बिला कराहत, शामी में है कि बड़ी सूरतों में तीन आयत की ज़्यादती का एतेबार नहीं है, अलबत्ता छोटी सूरतों में दूसरी रकअ़त में तीन आयात की ज़्यादती मकरूहे तंज़ीही है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–248, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–507)

दूसरी रकअ़त को तूल देने में किस चीज़ का एतेबार है

सवालः नमाज़ में औवल रकअ़त से दूसरी रकअ़त में ज़्यादा क़िराअत मकरूह है। ये आयतों के हिसाब से है या हुरूफ़ के हिसाब से या बहिसाब कलिमात के?

जवाबः अगर आयतें बराबर या क़रीब बराबर के हैं तो अददे आयात का एतेबार है कि दूसरी रकअ़त की क़िराअत तीन आयात से ज़्यादा न हो। और अगर आयात मुतफ़ावित हों तूल व क़स्र में तो हुरूफ़ व कलिमात का एतेबार है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–255, बहवाला रद्दुलमुहतार फ़स्ल फ़िलक़िराअति जिल्द–1 सफ़्हा–510)

तीन आयतों की मिक़दार की ज़्यादती से कराहते तंज़ीही होगी। (तहतावी सफ़्हा–193) मगर ये उन छोटी सूरतों में है जिनकी आयात छोटी बड़ी होने में क़रीब क़रीब हैं, वरना बड़ी सूरतों में जिनकी आयात में बड़े छोटे होने का नुमायाँ फ़र्क़ हो, हुरूफ़ की गिनती का एतेबार होगा, जिसका हासिल ये है कि अगर दूसरी रकअ़त में जो सूरत पढ़ी गई है उसके ज़्यादती वाले हुरूफ़ पहली रकअ़त की सूरत के निस्फ़ के बराबर या ज़ाएद हैं तो कराहत होगी वरना नहीं। जो सूरतें आप (स.अ.व.) से साबित हैं वह कराहत में दाख़िल नहीं।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–165, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–364)

हर रकअ़त में एक ही सूरत पढ़ना

तरीक़े सुन्नत ये है कि एक सूरत को बार बार पहली और दूसरी रकअ़त में न पढ़ें, बल्कि मुख़्तलिफ़ सूरतें हर रकअ़त में तरतीब के लिहाज़ से (तरतीब के साथ) पढ़ें मसलन पहली रकअ़त में "قُلْ يَا أَيُّهَا الْكَافِرُونَ" और दूसरी रकअ़त में "قُلْ هُوَ اللّٰهُ أَحَدٌ" पढ़नी चाहिए। इसी तरह कभी कोई सूरत और कभी कोई सूरत पढ़नी चाहिए। ये नहीं कि पहली रकअ़त में "قُلْ هُوَ اللّٰهُ أَحَدٌ" और दूसरी रकअ़त में भी "قُلْ هُوَ اللّٰهُ أَحَدٌ" पढ़ी जाए। ये तरीक़ा ग़ैर मुक़ल्लिदों का है कि हर एक रकअ़त में सूरह इख़लास ही को

मुकर्रर पढ़ा जाए। अलबत्ता जिस शख़्स को कोई और सूरत याद न हो तो मजबूरी है। पस जो लोग हनफ़ी हैं, सुन्नत तरीक़े के मुवाफ़िक़ क़िराअत करें। हर एक रकअ़त में सूरए फ़ातिहा के बाद मुख़्तलिफ़ सूरतें तरतीब के मुवाफ़िक़ पढ़ें। आँहज़रत (स.अ.व.) ने हमेशा मुख़्तलिफ़ सूरतें नमाज़ में पढ़ी हैं। ऐसा नहीं किया कि सिर्फ़ सूरए इख़्लास को हर रकअ़त में पढ़ा हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–243, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–508)

क़िराअते मसनूना

सवालः नमाज़ की किताबों में जो लिखा है कि मसलन मग़रिब की नमाज़ में लम यकुनिल्लज़ीन से सूरए नास तक की क़िराअत मसनून है। इसका मतलब ये है कि कुरआन हकीम से उस वक़्त की नमाज़ में उतनी ही क़िराअत की जाए जितनी उन सूरतों में की जाती है, या उन्ही सूरतों के पढ़ने में ज़्यादा सवाब है?

जवाबः मसनून यही है कि उन सूरतों को पढ़ा जाए, कभी कभी उन सूरतों के अलावा दूसरी सूरतों का पढ़ना भी साबित है। मगर आम तौर पर उन्ही सूरतों को पढ़ना चाहिए। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–171, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–362)

हर रकअ़त में पूरी सूरत पढ़ना

सवालः एक इमाम साहब ने सुब्ह की नमाज़ की

पहली रकअ़त में सूरए यासीन का आख़िरी रुकूअ़ पढ़ कर उसके बाद वाली दूसरी सूरत वस्सफ़्फ़ाति का पहला रुकूअ़ पूरा पढ़ा। ऐसा करने से नमाज़ होती है या नहीं?

जवाबः इस तरह नमाज़ पढ़ने से नमाज़ फ़ासिद नहीं होती, बल्कि दुरुस्त होती है, लेकिन एक रकअ़त में पूरी सूरत पढ़ना अफ़ज़ल है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–200, बहवाला फ़तावा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–78)

इमाम के लिए तहमीद अफ़ज़ल है

सवालः इमाम "سَمِعَ اللّٰهُ لِمَنْ حَمِدَهٗ" के बाद "رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ" भी कहे, या सिर्फ़ मुक़्तदी कहें?

जवाबः इमाम की तहमीद से मुतअल्लिक़ दोनों क़ौल हैं, कहना अफ़ज़ल है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–312, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–445)

इमाम के लिए आमीन कहना कैसा है

सवालः इमाम सूरए फ़ातिहा के बाद आमीन कहे या नहीं?

जवाबः इमाम और मुक़्तदी दोनों के लिए आमीन कहना सुन्नत है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–312, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–456)

रमूज़े औक़ाफ़ पर ठहरने और न ठहरने की बहस

सवालः "اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۙ اَلرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ" "مِنْ"

شَرِّ الْوَسْوَاسِ الْخَنَّاسِ لا اَلَّذِیْ یُوَسْوِسُ" عَلٰی کُلِّ شَیْءٍ قَدِیْر" لا نِ الَّذِیْ خَلَقَ الْمَوْتَ وَالْحَیٰوةَ" الآیۃ۔ आयते "ला" पर अगर साँस ख़त्म या बंद हो जाने की वजह से वक़्फ़ करे और अख़ीर लफ़्ज़ को न दुहरा कर आगे बढ़ाता चले तो नमाज़ में क्या कुछ ख़लल वाक़ेअ़ होगा? नीज़ तीसरी मिसाल में अगर वक़्फ़ कर लिया हो तो आगे "اَلَّذِیْ" कह कर पढ़ा जाए या "نِ الَّذِیْ" कह कर?

जवाब: आयत ला पर बज़रूरत वक़्फ़ कर देने में कुछ हरज नहीं है और लफ़्ज़े माक़ब्ल को दुहराने की ज़रूरत नहीं है और नमाज़ में कुछ ख़लल नहीं होगा।

और तीसरी मिसाल में अल्लज़ी और निल्लज़ी पढ़ना दोनों तरह दुरुस्त है। मगर वक़्फ़ की हालत में अल्लज़ी पढ़ना चाहिए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–227)

अस्ल ये है कि नस्तईन पर वक़्फ़ करना और न करना दोनों तरह जाइज़ है। इसी तरह कुल होवल्लाहो अहद पर आयत करना न करना दोनों तरह साबित है, पस अगर आयत की जाएगी तो इहदिना और अल्लाहुस्समद पढ़ा जाएगा और अगर आयत न की जाए और वक़्फ़ न किया जाए तो नुहदिना और निल्लाहुस्समद पढ़ा जाएगा, मअना में कुछ फ़र्क़ नहीं होता, और क़राअत दोनों तरह करते हैं लेकिन ज़्यादा तर नस्तईन पर और अहद पर आयत करना और इहदिनस्सिरातल मुस्तक़ीम और अल्लाहुस्समद अलाहिदा पढ़ना साबित है। लिहाज़ा इमाम को कुछ ज़रूरत नहीं कि वह नुहदिना और निल्लाहुस्समद पढ़े, बल्कि जैसे अक्सर क़ुर्रा पढ़ते है उस तरह पढ़े। लेकिन अगर इत्तिफ़ाक़न इमाम ने इस तरह पढ़ दिया तो

उस पर एतेराज़ न किया जाए उसको ग़लत न कहा जाए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–246)

अगर इमाम तजवीद की रिआयत न करे

सवालः इमाम तजवीद जानने के बावजूद क़िराअत तजवीद से न करे मसलन आयत की जगह न ठहरा, या बग़ैर आयत के साँस लिया, वक़्फ़ा सकता पर साँस लेते हुए ठहरा, या वक़्फ़ और वक़्फ़े लाज़िम और वक़्फ़ुन्नबी (स.अ.व.) का ख़्याल नहीं रखा। या मद की जगह क़स्र किया या नून का इज़्हार की जगह इख़्फ़ा किया तो नमाज़ जाइज़ होगी या नहीं?

जवाबः नमाज़ जाइज़ होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–231)

इमाम का बाज़ लफ़्ज़ों को दो मरतबा क़िराअत करना

सवालः कुरआन शरीफ़ में बाज़ जगह छोटे हुरूफ़ लिखे होते हैं मसलन "بصطة ۚ هُمُ الْمُصيطرون، عَلَيْهِمْ بمصيطر" उनमें से कौन सा हर्फ़ दो मरतबा पढ़ा जाएगा, हमारे एलाक़े में उन लफ़्ज़ों को दो मरतबा पढ़ते हैं, सहीह क्या है?

जवाबः लफ़्ज़ "بصطة اور هم المصيطرون اور عليهم بمصيطر" के ऊपर सीन लिखने से मक़्सूद ये है कि ये लफ़्ज़ सीन से पढ़ा गया है और साद से भी। यानी तिलावत करने वाला ख़्वाह सीन से पढ़े ख़्वाह साद से नमाज़ सहीह है। और ये मतलब नहीं कि ऐसे कलिमात को दो दफ़ा पढ़े,

बिल्क जिस क़ारी का इत्तिबा करे उसी के मवाफ़िक़ पढ़े।
(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–234, बहवाला जलालैन शरीफ़ सूरए ग़ाशिया सफ़्हा–498)

तंगिये वक़्त के बाइस फ़ज्र में छोटी सूरत पढ़ना

सवालः सुब्ह की नमाज़ में वक़्त तंग था। इसलिए इमाम साहब ने औवल रकअ़त में सूरए काफ़िरून और दूसरी रकअ़त में सूरए इख़लास पढ़ी। बाद में एक साहब ने एतेराज़ किया कि नमाज़ मकरूहे तहरीमी हो गई। बड़ी सूरत पढ़नी चाहिए थी। सहीह क्या है?

जवाबः वह नमाज़ बिला कराहत सहीह हो गई। ये कहना कि ये नमाज़ मकरूहे तहरीमी हुई ग़लत है। एक मरतबा आँहज़रत (स.अ.व.) ने सुब्ह की नमाज़ में कुल अऊज़ोबि रब्बिलफ़लक़ और कुल अऊज़ोबि रब्बिंन्नास पढ़ी है। पस मालूम हुआ कि जब वक़्त थोड़ा हो या सफ़र वग़ैरा में जल्दी हो तो छोटी सूरतों का फ़ज्र की नमाज़ में पढ़ना दुरुस्त है।
(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–237, बहवाला रद्दुलमुहतार फ़स्ल फ़िलक़िराअति जिल्द–1 सफ़्हा–503)

पहली रकअ़त में मुज़्ज़म्मिल और दूसरी में अलिफ़ लाम मीम का रुकूअ़ पढ़ना

सवालः इमाम साहब ने मग़रिब की नमाज़ में औवल रकअ़त में अलहम्दु के बाद पहला रुकूअ़ सूरए मुज़्ज़म्मिल

का पढ़ा और दूसरी रकअ़त में पहला रुकूअ़ अलिफ़ लाम मीम का पढ़ा, और सजदए सह्व भी नहीं किया, नमाज़ सहीह हुई या नहीं?

जवाबः इस सूरत में नमाज़ सहीह हो गई और सज्दए सह्व भी लाज़िम नहीं हुआ, मगर आइंदा इस तरह कुरआन तरतीब के ख़िलाफ़ न पढ़ना चाहिए कि इस तरह पढ़ना फ़राइज़ में मकरूह है।

छोटी सूरत का फ़ासिला करना

सवालः इमाम ने पहली रकअ़त में इज़ा–जाआ और दूसरी में कुल होवल्लाह पढ़ी तो नमाज़ हुई या नहीं?

जवाबः फ़रज़ों में क़स्दन इस तरह पढ़ना कि एक छोटी सूरत का फ़ासिला किया जाए जैसा कि सूरते मसऊला में है, मकरूह है, और नमाज़ हो जाती है, और अगर सह्व हो गया तो कुछ कराहत नहीं है। और नवाफ़िल में मुतलक़ कराहत नहीं है

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–240, बहवाला रद्दुलमुहतार फ़स्ल फ़िलक़िराअति जिल्द–1 सफ़्हा–498)

छोटी सूरत की मिक़्दार

सवालः वह छोटी सूरतें कौन सी हैं जिनको पहली रकअ़त और दूसरी रकअ़त की क़िराअत के दरमियान छोड़ने से नमाज़ मकरूह होती है?

जवाबः वह सूरतें क़िसारे मुफ़स्सल की लमयकुन से

आख़िर कुरआन शरीफ़ तक हैं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–244, बहवाला रद्दुलमुहतार फ़स्ल फ़िलक़िराअति जिल्द–1 सफ़्हा–504)

एक रकअ़त में दो सूरतें पढ़ना

सवालः इशा या सुब्ह की नमाज़ में इमाम एक रकअ़त में दो सूरतें पढ़े तो कुछ कराहत तो नमाज़ में नहीं आती है?

जवाबः एक रकअ़त में दो सूरतें पढ़ना ख़िलाफ़े औला है। नमाज़ हो जाती है और ख़िलाफ़े औला से मुराद कराहते तंज़ीही है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–255, बहवाला रद्दुलमुहतार फ़स्ल फ़िलक़िराअति जिल्द–1 सफ़्हा–510)

एक सूरत को दो रकअ़त में पढ़ना

सवालः एक सूरत का रुकूअ़ पढ़ना पहली रकअ़त में और उस सूरत या दूसरी सूरत का रुकूअ़ पढ़ना दूसरी रकअ़त में या दूसरी पूरी सूरत का पढ़ना दूसरी रकअ़त में, या एक सूरत को दो रकअ़त में पढ़ना जाइज़ है या ख़िलाफ़े औला?

जवाबः जवाबे औवल ये है कि ये सब ख़िलाफ़े इस्तिहबाब है। हनफ़ीया के नज़दीक मसनून और मुस्तहब ये है कि पूरी सूरत एक रकअ़त में मवाफ़िक़े तरतीबे फुक़हा के पढ़े जो मारूफ़ है और कुतुबे फ़िक़्ह में मज़कूर है।

पस जुज़्वे सूरत का पढ़ना ख़िलाफ़े अफ़ज़ल व ख़िलाफ़े मुस्तहब है, जिसका हासिल कराहते तंज़ीही है न कि कराहते तहरीमी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–253, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–505)

आयत का शुरू छोड़ कर पढ़ना

सवालः इमाम साहब ने सूरए फ़ातिहा के बाद सूरए फ़तहना के आख़िरी रुकूअ़ की आख़िरी आयत को "मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह" छोड़ कर "वल्लज़ीना" से पढ़ा, नमाज़ हुई या नहीं?

जवाबः नमाज़ हो गई, मगर शुरू आयत का छोड़ना अच्छा नहीं हुआ। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–263, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–510)

ज़ाल्लीन को दाल्लीन पढ़ना

दाल, ज़ो, ज़ाद के हुरुफ़ जुदागाना और उनके मख़ारिज अलग होने में तो शक नहीं है, और इसमें भी शक नहीं है कि क़स्दन किसी हर्फ़ को किसी दूसरे मख़रज से अदा करना सख़्त बेअदबी है, और बसा औक़ात बाइसे फ़सादे नमाज़ है, मगर जो लोग माज़ूर हैं और उनसे ये लफ़्ज़ मख़रज से अदा नहीं होता लेकिन हत्तलवुस्अ़ कोशिश करते रहते हैं उनकी नमाज़ भी दुरुस्त है।

और "दाले" पुर ज़ाहिर है कि ख़ुद कोई हर्फ़ नहीं है

बल्कि "ज़ाद" ही है, अपने मख़रज से पूरे तौर पर अदा नहीं हुआ। तो जो शख़्स दाले ख़ालिस या ज़ोए ख़ालिस अमदन पढ़े उसके पीछे नमाज़ न पढ़ें। मगर जो शख़्स दाले पुर की अवाज़ में पढ़ता है आप उसके पीछ नमाज़ पढ़ लिया करें। जो शख़्स बावजूद कुदरत के ज़ाद को ज़ाद के मख़रज से अदा न करे वह गुनहगार भी है और अगर दूसरा लफ़्ज़ बदल जाने से माना बदल गए तो नमाज़ भी न होगी, और अगर कोशिश व सई के बावजूद ज़ाद अपने मख़रज से अदा नहीं होता तो वह माज़ूर है उसकी नमाज़ हो जाती है।

और जो शख़्स ख़ुद सहीह पढ़ने पर क़ादिर है तो ऐसे माज़ूर के पीछे नमाज़ पढ़ सकता है। मगर जो शख़्स क़स्दन ख़ालिस "दाल" या "ज़ो" पढ़े तो उसके पीछे नमाज़ न होगी। (फ़तावा रशीदिया कामिल सफ़्हा–274, 284)

ज़ाद के बारे में मौलाना मुफ़्ती शफ़ीअ़ साहब (रह.) का फ़तवा

अवाम की नमाज़ तो बिला किसी तफ़सील व तनक़ीह के बहरहाल हो जाती है ख़्वाह ज़ो पढ़ें या दाल या ज़ा वग़ैरा, क्योंकि वह क़ादिर भी नहीं और समझते भी यही हैं कि हम ने असली हर्फ़ अदा किया है और कुर्राए मुजव्विदीन और उलमाए किराम की नमाज़ में तफ़सील मज़कूर है कि अगर ग़लती, क़स्दन या बेपरवाही से हो तो नमाज़ फ़ासिद है और अगर सबक़ते लिसानी या अदमे तमीज़ की वजह से हो तो जाइज़ है।

(जवाहिरुलफ़ेक़ा जिल्द–1 सफ़्हा–337)

तंबीह: लेकिन जवाज़ और अदमे फ़साद से ये साबित नहीं होता है कि बेफ़िक्र हो कर हमेशा ग़लत पढ़ते रहना जाइज़ हो गया और पढ़ने वाला गुनहगार भी न रहेगा, बल्कि अपनी कुदरत और गुंजाइश के मुवाफ़िक़ सहीह पढ़ने की मश्क़ करना और कोशिश करते रहना ज़रूरी है वरना गुनहगार होगा, अगरचे नमाज़ फ़ासिद न होगी जैसा कि आलमगीरी मिस्री बाब चहारुम जिल्द–1 सफ़्हा–74 में तसरीह़ मौजूद है।

अहक़र मुहम्मद शफ़ीअ़ देवबंदी ग़ुफ़िरलहू, ख़ादिम दारुलइफ़्ता, दारुलउलूम देवबंद 20 जमादिल औव्वल 1351 हिजरी)

मुफ़्सिदे नमाज़ ग़लती

ग़लत पढ़ने से जो लफ़्ज़ पैदा हुआ है उसके मुतअ़ल्लिक़ इमामे आज़म (रह.) इमामे मुहम्मद (रह.) ये बहस नहीं करते कि वह लफ़्ज़ कुरआने पाक में है या नहीं। उनके नज़दीक ज़ाबता ये है कि पढ़ने के अन्दर किसी कलिमा में ज़्यादती या कमी की वजह से बशर्तेकि माना बिल्कुल बदल जाएँ नमाज़ फ़ासिद हो जाती है वरना नहीं, जैसे "فَمَا لَهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ" में ला छोड़ दिया। "وَعَمِلَ صَالِحاً فَلَهُمْ اَجْرُهُمْ" या की जगह "وَعَمِلَ صَالِحاً وَكُفْراً فَلَهُمْ اَجْرُهُمْ" पढ़ा तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। और जिन हरूफ़ में इम्तियाज़ मुश्किल से होता है वह अगर एक दूसरे की जगह पढ़े जाएँ तो नमाज़ फ़ासिद नहीं होती जैसे सीन,

साद और ज़ाद, ज़ो और ज़ाल वग़ैरा। और जिन में इम्तियाज़ आसान है वह अगर एक दूसरे की जगह पढ़े जाएँ और माना बिल्कुल बदल जाएँ तो नमाज़ फ़ासिद हो जाती है। जैसे "صالحات" की "طالحات" पढ़ा गया तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, और अगर अलफ़ाज़ की तबदीली से माना बिल्कुल बदल जाएँ तो नमाज़ में फ़साद यक़ीनी है वरना नहीं। जैसे "अलीमुन" की जगह "ख़बीरुन" व "हफ़ीज़ुन" वग़ैरा पढ़ा गया तो नमाज़ दुरुस्त है, और "وَعْداً عَلَيْنَا اِنَّا كُنَّا فاعلين" की जगह "غافلين" पढ़ने से नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

और अगर दो जुमलों के अलफ़ाज़ बदल जाएँ और माना भी बदल जाएँ तो नमाज़ फ़ासिद है, जैसे "اِنَّ الْاَبْرَ" "لَفِىْ نعيمٍ وَاِنَّ الْفُجَّارَ لَفِىْ جَحيم" में "جحيم" की जगह "نعيم" और "نعيم" की जगह "جحيم" पढ़ने से नमाज़ फ़ासिद हो जाती है, और अगर माना न बदले, जैसे "لَهُمْ فيها زَفِير" "وَ شَهِيْقٌ" को "شَهِيْقٌ وَ زَفيرٌ" पढ़ा तो नमाज़ दुरुस्त है।

(फ़ज़ाएल अैयाम व शुहूर सफ़्हा–147, अशरफ़ुलईज़ाह शरह नूरुलईज़ाह सफ़्हा–132, इमदादुमुफ़्तीयीन सफ़्हा–285)

आयत का कोई हिस्सा छूट जाए और माना न बदले हों तो नमाज़ जाइज़ है

सवालः इमाम साहब नमाज़ में सूरए जुमा पढ़ रहे थे। दरमियान में आयत "بِئْسَ مَثَلُ الْقَوْمِ الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيَاتِ اللّٰه" सह्वन छूट गई, नमाज़ हुई या नहीं और सज्दए सह्व होगा या नहीं?

जवाबः इस सूरत में नमाज़ में कोई नक़्स नहीं आया और सज्दए सह्व वाजिब नहीं हुआ, क्योंकि सज्दए सह्व वाजिब के तर्क करने से लाज़िम आता है और यहाँ बक़द्रे वाजिब क़िराअत अदा हो गई और दरमियाने क़िराअत के छूट जाने से कुछ हरज नहीं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–77, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब ज़ल्लतुलक़ारी जिल्द–1 सफ़्हा–591)

तीन आयत के बाद मुफ़्सिदे नमाज़ ग़लती

सवालः अगर इमाम तीन आयत से ज़्यादा पढ़ कर फ़ाहिश ग़लती करे तो नमाज़ फ़ासिद होगी या नहीं?

जवाबः मुफ़्सिदे नमाज़ ग़लती, नमाज़ में किसी वक़्त भी हो नमाज़ फ़ासिद हो जाती है। अलबत्ता उस ग़लती को फिर लौटा कर सहीह कर ले और सहीह पढ़ ले तो नमाज़ हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–75, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब ज़ल्लतुलक़ारी जिल्द–1 सफ़्हा–590)

नमाज़ में किसी लिखी हुई चीज़ पर निगाह पड़ना

नमाज़ पढ़ने वाला किसी लिखी हुई चीज़ को देख ले और उसको समझ ले तो इस सूरत में उसकी नमाज़ फ़ासिद नहीं होती, क्योंकि ये नमाज़ पढ़ने वाले का फ़ेल नहीं है बिल्क गै़र इख़्तियारी तौर पर उसकी समझ में आ जाता है। इसलिए कि आम तौर से उस पर निगाह पड़

जाती है और देखने वाला उसको समझ जाता है।

इसलिए उलमा फरमाते हैं कि नमाज़ी के सामने ऐसी चीज़ को न रखा जाए, क्योंकि शुबहात से बचना ज़रूरी है और सहीह मज़हब के बमोजिब नमाज़ दुरुस्त हो जाएगी।

(अशरफुलईज़ाह, शरह नूरुलईज़ाह सफ़्हा–137)

हनफ़ी इमाम का कुनूत के लिए रिआयत करना

सवालः हनफ़ी इमाम, शाफ़ई मुक़्तदियों की रिआयत से नमाज़े फ़ज्र की दूसरी रकअत के क़ौमा में इस क़दर तवक़्क़ुफ़ करे कि शाफ़ई कुनूत से फ़ारिग़ हो लें तो कैसा है? उसकी नमाज़ होगी या नहीं? ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ पढ़नी चाहिए या नहीं? अगर नमाज़ पढ़ी जाए तो मकरूह होगी या नहीं? और किन उमूर में शाफ़ई मुक़्तदी की रिआयत हनफ़ी इमाम के लिए जाइज़ है, शाफ़ई मुक़्तदी की रिआयत से हनफ़ी इमाम सलाम से पहले सज्दए सह्व कर सकता है या नहीं?

जवाबः दुर्रेमुख़्तार में है कि इमाम को रिआयत दूसरे मज़हब वाले मुक़्तदियों की मसलन शाफ़ई मज़हब वाले मुक़्तदियों की मुस्तहब है, लेकिन बशर्तेकि अपने मज़हब के मकरूह का इरतिकाब लाज़िम न आता हो। और शामी ने फ़रमाया कि मकरूहे तंज़ीही भी उसमें शामिल है। यानी अगर अपने मज़हब के मकरूहे तंज़ीही का इरतिकाब लाज़िम आता हो तो रिआयत, मुक़्तदियाने शाफ़ई मज़हब की न करे। पस बिनाअन अलैहि इमाम हनफ़ी नमाज़े फ़ज्र में रुकूअ से उठ कर क़ौमा में बरिआयते मुक़्तदी

शाफ़ई इस क़दर तवक़्क़ुफ़ न करे कि वह दुआए कुनूत पढ़ लेवे कि ये तवक़्क़ुफ़ मकरूह है।

और शामी में उसकी मिसाल दी है कि रुकूअ़ के बाद ज़्यादा ठहरने को छोड़ना वाजिब है (यानी कम ठहरना चाहिए) इस तवक़्क़ुफ़ में तर्के वाजिब होगा जो कि मकरूहे तहरीमी है। लिहाज़ा ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ मकरूह होगी। इसी तरह क़ब्ले सलाम सज्दए सह्व करना हनफ़ी को बरिआयत मुक़्तदी न चाहिए कि ये भी मकरूहे तंज़ीही है। जैसा कि शामी जिल्द–1 सफ़्हा–595 पर है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–410, बहवाला रद्दुलमुहतार किताबुत्तहारत जिल्द–1 सफ़्हा–136)

इमाम का कुनूते नाज़िला पढ़ना

हनफ़ियों के नज़दीक बवक़्ते नुज़ूले हादसा, सिर्फ़ सुब्ह की नमाज़ में रुकूअ़ के बाद दूसरी रकअ़त में बग़ैर हाथ उठाए दुआए कुनूत पढ़ना जाइज़ है और बाक़ी नमाज़ियों में जाइज़ नहीं, और बिला नुज़ूले हादसा के किसी नमाज़ में किसी वक़्त जाइज़ नहीं।

हाथ लटकाए रहे क्योंकि इस मौक़ा पर हाथ का बाँधना नहीं आया है। और उठाना भी हनफ़ीया के क़वाएद से चस्पाँ नहीं है। इसलिए अहवत और बेहतर ये मालूम होता है कि हाथ छोड़े रखें और मुक़्तदी आहिस्ता आमीन कहें।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–189 व 192

बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलवित्र व नवाफ़िल जिल्द–1 सफ़्हा–628)

जबकि कुफ़्फ़ार की तरफ़ से आम मुसलमानों पर किसी क़िस्म का ज़ुल्म व तशद्दुद होता हो कि मुसलमान आम तौर पर परेशान हो रहे हों, उस वक़्त अगर कोई इमाम नमाज़े फ़र्ज़े फ़ज्र में दुआए कुनूत नाज़िला रुकूअ़ के बाद दूसरी रकअ़त में, कभी कभी पढ़ ले तो गुंजाईश है, इस्तिहबाब भी साबित होता है, मगर ये पढ़ना इत्तिफ़ाक़िया ही हो सकता है ये नहीं कि उसका मामूल ही कर लिया जाए। ऐसे ही अगर कोई तन्हा रात में नवाफ़िल में पढ़ ले तो उसकी भी गुंजाईश हो सकती है और मुक़्तदी इमाम के सकतात यानी वक़्फ़ों पर आमीन कहते रहें।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–138, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–451)

दुआए कुनूते नाज़िला

''اَللّٰهُمَّ اهْدِنَا فِيْمَنْ هَدَيْتَ وَعَافِنَا فِيْمَنْ عَافَيْتَ وَتَوَلَّنَا فِيْمَنْ تَوَلَّيْتَ وَبَارِکْ لَنَا فِيْمَا اَعْطَيْتَ وَقِنَا شَرَّ مَا قَضَيْتَ اِنَّکَ تَقْضِیْ وَلَا يُقْضٰی عَلَيْکَ وَاِنَّه‘ لَا يَذِلُّ مَنْ وَّالَيْتَ وَلَا يَعِزُّ مَنْ عَادَيْتَ تَبَارَکْتَ رَبَّنَا وَتَعَالَيْتَ وَنَسْتَغْفِرُکَ وَنَتُوْبُ اِلَيْکَ وَصَلَّی اللّٰهُ عَلَی النَّبِیِّ الْکَرِيْمِ. اَللّٰهُمَّ اغْفِرْلَنَا وَلِلْمُوْمِنِيْنَ وَالْمُوْمِنٰتِ وَالْمُسْلِمِيْنَ وَالْمُسْلِمٰتِ وَاَلِّفْ بَيْنَ قُلُوْبِهِمْ وَاَصْلِحْ ذَاتَ بَيْنِهِمْ وَانْصُرْنَا عَلٰی عَدُوِّکَ وَعَدُوِّهِمْ. اَللّٰهُمَّ الْعَنِ الْکَفَرَةَ الَّذِيْنَ يَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِکَ وَيُکَذِّبُوْنَ رُسُلَکَ وَيُقَاتِلُوْنَ اَوْلِيَاءَکَ. اَللّٰهُمَّ خَالِفْ بَيْنَ کَلِمَتِهِمْ وَزَلْزِلْ اَقْدَامَهُمْ وَاَنْزِلْ بِهِمْ بَاْسَکَ الَّذِیْ لَا تَرُدُّه‘ عَنِ الْقَوْمِ الْمُجْرِمِيْنَ. (کفايت المفتی جلد–۳، صفحه–۳۹۷)''

इमाम का सुतरा मुक़्तदियों के लिए काफ़ी है

सुतरा उस चीज़ को कहते हैं जो नमाज़ी आड़ करने के लिए अपने सामने लगाए या खड़ा करे, ख़्वाह वह लकड़ी हो या दीवार वग़ैरा हो, और सुतरा खड़ा करने से मक़्सद ये होता है कि उसके ज़रीएं सज्दा की जगह मुमैयज़ हो जाए और जिस शख़्स को नमाज़ी के आगे से गुज़रना हो वह नमाज़ी के सामने से गुजरने पर गुनहगार न हो।

सुतरा की ज़रूरत वहाँ पेश आती है जहाँ नमाज़ खुली और बेआड़ जगह पर पढ़ी जाए। अगर मस्जिद में नमाज़ पढ़नी हो या ऐसे मक़ाम में जहाँ लोगों का नमाज़ी के सामने से गुज़र न हो तो उसकी कुछ ज़रूरत नहीं।

सुतरा की लम्बाई एक हाथ से कम न होनी चाहिए और उसकी मोटाई कम से कम एक उंगली के बराबर होनी चाहिए। और बाजमाअ़त की सूरत में इमाम का सुतरा तमाम मुक़्तदियों की तरफ़ से काफ़ी है। यानी अगर इमाम के आगे सुतरा है तो मुक़्तदियों के सामने से गुज़रने में कुछ गुनाह नहीं, ख़्वाह उनके आगे कोई आड़ हो या न हो लेकिन सुतरा के वरे से गुज़रना जाइज़ नहीं।

हाँ अगर जमाअ़त में शरीक होने के लिए कोई आने वाला पहली सफ़ में ख़ाली जगह देखे तो उसको जाइज़ है कि दूसरी सफ़ के आगे से गुज़र कर पहली सफ़ में ख़ाली जगह पहुंच कर जमाअ़त में शरीक हो जाए।

इस सूरत में कुसूर दूसरी सफ़ वालों का माना जाएगा कि उन्होंने आगे बढ़ कर पहली सफ़ में ख़ाली जगह को

पुर क्यों नहीं किया।

(मज़ाहिरे हक़ जदीद जिल्द–1 सफ़्हा–645)

एक तरफ़ सलाम फेरने पर समाने से गुज़र जाना

सवाल: ज़ैद ने नमाज़ का एक तरफ़ सलाम फेरा था कि बकर आगे से निकल गया, तो बकर गुनहगार होगा या नहीं? एक आलिमे दीन कहते हैं कि दोनों तरफ़ सलाम फेरना वाजिब है। लिहाज़ा बकर गुनहगार होगा। तो क्या उनका कहना सहीह है?

जवाब: इस सूरत में बकर गुनहगार नहीं होगा। क्यों कि नमाज़ पहले सलाम से ख़त्म हो जाती है। बल्कि लफ़्ज़ अस्सलाम यानी अलैकुम कहने से भी पहले ही नमाज़ पूरी हो जाती है। दोनों सलाम वाजिब हैं मगर सलामे सानी ख़ारिजे सलात में वाजिब है इसलिए अगर कोई पहले अस्सलाम कहने के बाद और अलैकुम कहने से क़ब्ल इक़्तिदा करे तो सहीह नहीं।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–406, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–436)

कितने फ़ासिले से गुज़रना चाहिए

सवाल: नमाज़ी के आगे से तीन सफ़ छोड़ कर या चार सफ़ छोड़ कर निकलना जाइज़ होगा या नहीं?

जवाब: अगर इतनी छोटी मस्जिद या कमरा या सेहन में नमाज़ पढ़ रहा हो कि उसका कुल रक़्बा चालीस हाथ

(3,36 मुरब्बअ़ मीटर) से कम है तो नमाज़ी के सामने से गुज़रना मुतलक़न जाइज़ नहीं, ख़्वाह क़रीब से गुज़रे या दूर से, बहरहाल गुनाह है, अलबत्ता अगर खुली फ़ज़ा में या 8.36 मुरब्बअ़ मीटर या उससे ब्रड़ी मस्जिद या कमरा में या बड़े सेहन में नमाज़ पढ़ रहा है तो सज्दा की जगह पर नज़र जमाने से आगे जहाँ तक तबअ़न नज़र पहुंचती हो वहाँ तक गुज़रना जाइज़ नहीं, इससे हट कर गुज़रना जाइज़ है।

बंदा ने उसका अंदाज़ा लगाया तो सज्दा की जगह से एक सफ़ के क़रीब हुआ, लिहाज़ा नमाज़ी के मौजए क़याम (खड़े होने की जगह) से दो सफ़ की मिक़्दार तक़रीबन आठ फ़िट (2.44 मीटर) छोड़ कर गुज़रना जाइज़ है। मगर आम इबारते फुकहा का मुतबादिर मफ़हूम में है कि चालीस मुरब्बअ़ हाथ (नौवे मुरब्बअ़ फ़िट या 8,36 मुरब्बअ़ मीटर) मुराद है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–410, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–593)

बड़ी मस्जिद या बड़ा मकान या मैदान हो तो इतने आगे से गुज़रना जाइज़ है कि अगर नमाज़ी अपनी नज़र सज्दा की जगह पर रखे तो गुज़रने वाला उसे नज़र न आए। (किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–447)

पस अगर कोई शख़्स बाहर फ़र्श पर नमाज़ पढ़ता हो तो अन्दर के दर्जा में आगे को गुज़र सकता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–101, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब मा युफ़सिदुस्सलात व मा यकरहु फ़ीहा जिल्द–1 सफ़्हा–593)

सुतरा की मुख़्तलिफ़ सूरतें

सवालः अगर नमाज़ी अपने सामने दस्ती बैग या कोई कपड़ा वग़ैरा रख ले तो उसके सामने से गुजर जाना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः सुतरा कम अज़ कम एक हाथ ऊँचा होना चाहिए, इससे कम ऊँचाई के सुतरा में इख़्तिलाफ़ है। राजेह क़ौल ये है कि बक़द्रे ज़िराअ़ (एक हाथ) सुतरा मुयस्सर न हो तो उससे कम भी काफ़ी है और ज़रूरत के वक़्त सुतरा की कई सूरतें हैं, मसलनः

(1) कोई ऐसी चीज़ जो एक ज़िराअ़ से कम बुलंद हो।

(2) छड़ी वग़ैरा लिटा लेना, अगर खड़ी न हो सके।

(3) सामने ख़त खींच लेना।

छड़ी और ख़त तूलन यानी क़िबला रुख़ होना ज़्यादा बेहतर है, अगरचे अरज़न भी जाइज़ है।

(4) जा नमाज़ या कपड़ा बिछा कर उस पर नमाज़ पढ़ना।

(5) अगर दो आदमी गुज़रना चाहें तो एक नमाज़ी के सामने उसकी तरफ़ पुश्त कर के खड़ा हो जाए दूसरा गुज़र जाए, फिर वह इसी तरह नमाज़ी के सामने हो जाए और पहला गुज़र जाए।

(6) एक सहीह क़ौल ये भी है कि चालीस हाथ (60 मुरब्बअ़ फ़िट या 25,60 मुरब्बअ़ मीटर)।

या इससे बड़ी मस्जिद और सेहरा में सज्दा की जगह

से हट कर गुज़र जाना बग़ैर सुतरा के जाइज़ है।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–411, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–593)

सोते शख़्स की तरफ़ रुख़ कर के नमाज़ पढ़ना

सवालः कोई शख़्स सो रहा हो, उसके सामने खड़े हो कर नमाज़ पढ़ना बग़ैर सुतरा के जाइज़ है या नहीं? अगर वैसे ही लेटा हो या न हो तो क्या हुक्म है?

जवाबः दोनों सूरतों में जाइज़ है, बशर्तेकि लेटने वाले का रुख़ नमाज़ी की तरफ़ न हो, बल्कि चित या क़िब्ला रुख़ लेटा हो। अलबत्ता अगर लेटने वाले पर कोई कपड़ा पड़ा हो तो बहरसूरत जाइज़ है।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–435)

बारिश की वजह से नमाज़ तोड़ना

सवालः मस्जिद के सेहन में नमाज़ बा जमाअ़त अदा कर रहे थे। बारिश ज़ोर से शुरू हो गई तो क्या नमाज़ तोड़ कर अन्दर मस्जिद में अदा करना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः बारिश की वजह से नमाज़ तोड़ना जाइज़ नहीं, अलबत्ता बारिश से किसी को मरज़ का ख़तरा हो या भीगने से 3.5 माशा (3,24 ग्राम) चांदी की क़ीमत के बराबर माली नुक़सान हो रहा हो तो ऐसा शख़्स नमाज़ तोड़ सकता है।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–438)

इमाम साहब का अंधेरे में नमाज़ पढ़ाना

सवालः फ़र्ज़ नमाज़ के वक़्त इमाम साहब रौशनी बुझा कर नमाज़ बा जमाअ़त अदा करते हैं, बल्कि तरावीह भी पढ़ते हैं। दरयाफ़्त करने पर फ़रमाया कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने अक्सर अंधेरे में नमाज़ अदा फ़रमाई है, सहीह मस्अ़ला क्या है?

जवाबः ये मस्अला शरई नहीं है। बत्ती बुझा कर अंधेरे में नमाज़ पढ़ने की कोई ताकीद नहीं। बवक़्ते ज़रूरत, बक़द्रे ज़रूरत रौशनी करना और उसमें नमाज़ पढ़ना बिला कराहत दुरुस्त और साबित है। बिला ज़रूरत और ज़रूरत से ज़ाएद रौशनी करना इसराफ़ में दाख़िल और मम्नूअ़ है। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–208)

नमाज़ में किसी को ख़लीफ़ा बनाना

फ़ुक़हा की इस्तिलाह में इस्तिख़लाफ़ ये है कि इमाम या मुक़्तदियों में से कोई शख़्स किसी नेक आदमी को इमाम का नाइब बना दे, ताकि इमाम के बजाए वह आदमी नमाज़ की तकमील करे। ये सूरत किसी सबब के पेश आने से पैदा होती है। मसलन कोई इमाम जमाअ़त के साथ एक या दो रकअ़त या उससे कम ज़्यादा पढ़े, फिर नमाज़ के दौरान कोई ऐसा अम्र पेश आए जो मुक़्तदियों के साथ नमाज़ को पूरा करने से मानेअ़ हो। जैसे कोई

नागहानी मरज़ या हदस (वुजू टूटना) लाहिक़ हो जाए। या ऐसा ही कोई और अम्र, मानेअ़ नमाज़ पेश आ जाए तो ऐसी सूरत में ये रवा है कि इमाम अपने पीछे नमाज़ पढ़ने वालों में से या मौजूदा अशख़ास में से किसी को इमाम के तौर पर आगे कर दे, ताकि वह बाक़ी मांदा नमाज़ मुक़्तदियों के साथ पूरी करे।

अगर इमाम ऐसा न करे तो मुक़्तदी अपने में से किसी का इंतिख़ाब कर के उस इमाम का क़ाएम मक़ाम बना लें। लेकिन इस अमल के लिए न बोलना चाहिए न क़िब्ला की जानिब से रुख़ फेरना चाहिए।

मुमकिन है ये कहा जाए कि आख़िर ऐसा करने (इमाम बनाने) की क्या ज़रूरत है? क्या आसान तरीक़ा मालूम नहीं है कि ऐसी कोई रुकावट पेश आए जो इमाम को नमाज़ के जारी रखने में मानेअ़ हो, तो वह उस नमाज़ को तोड़ दे और किसी नेक आदमी को इमाम बना कर जमाअ़त से नमाज़ अदा कर ली जाए।

उसका जवाब ये है कि शरीअ़ते इस्लामिया की नज़र में नमाज़ एक निहायत क़ाबिले एहतेराम अमल है। लिहाज़ा जब कोई इंसान नमाज़ में मशगूल हो गया और ख़ुजूअ़ व ख़ुशूअ़ के साथ अपने रब के हुजूर मसरूफ़े दुआ हुआ हो तो उसे चाहिए कि जब तक नमाज़ से फ़ारिग़ न हो, ऐसे मौक़फ़ की पासदारी करे, चुनांचे इस दौरान कोई अमल भूल जाए तो लाज़िम होता है कि उसे पूरा करे। और सज्दए सह्व से उसकी तलाफ़ी करे। इसी तरह अगर कोई बात पेश आए जो नमाज़ या जमाअ़त को बातिल कर दे तो वह नमाज़ से हट कर किसी और को पूरा

करने के लिए अपना नाइब बना दे।

इन तमाम उमूर से ग़रज़ ये है कि एक बार शुरू हो जाए तो उसे पूरे तौर पर अदा किया जाए, क्योंकि शरीअ़ते इस्लामिया की निगाह में उसका पूरा करना ज़रूरी है। जिससे किसी हाल में ग़फ़लत न करनी चाहिए।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–711, 712)

ख़लीफ़ा बनाने के असबाब

ख़लीफ़ा बनाने के असबाब क्या हो सकते हैं? इस बारे में इमामे आज़म फ़रमाते हैं कि ख़लीफ़ा बनाने का सबब ये हो सकता है कि इमाम को बे इख़्तियारी की हालत में कोई हदस लाहिक़ हो जाए मसलन नमाज़ के दौरान हवा (रीह) ख़ारिज हो जाए या कहीं ख़ून या और कोई नजासत जो इंसान के बदन से ख़ारिज होती है, बह निकले (तो इमाम ख़लीफ़ा बना सकता है) लेकिन अगर नजासत लग जाए जो नमाज़ जारी रखने से मानेअ़ हो, या ये कि इमाम का सत्र खुल जाए या ऐसी ही कोई बात पेश आ जाए तो इन हालात में इमाम की नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी और उसके साथ मुक़्तदियों की भी नमाज़ जाती रहेगी।

इस सूरत में किसी को नाइब बनाना सहीह न होगा, इसी तरह अगर इमाम क़हक़हा मार कर हंस दे या जुनून या बेहोशी वग़ैरा की हालत तारी हो जाए, जिसकी तफ़सील ख़लीफ़ा बनाने के शराइत में आएगी, तब भी वह किसी को ख़लीफ़ा नहीं बना सकता।

किसी को ख़लीफ़ा बनाना उस वक़्त जाइज़ है जब इमाम मिक़्दारे फ़र्ज़ क़िराअत करने से आजिज़ हो, नीज़ अगर इमाम को खुद किसी मज़र्रत का या माल का ज़ाए होने का अंदेशा पेश आ जाए तो उसे जाइज़ नहीं है कि किसी को ख़लीफ़ा बनाए, बल्कि चाहिए कि वह नमाज़ को ताड़ दे और मुक़्तदी जिस तरह भी बन पड़े वह नमाज़ अज़ सरे नौ पढ़ें।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–712)

नमाज़ में ख़लीफ़ा बनाने के मसाइल

हनफ़ीया के नज़दीक (इमाम का) किसी को अपना ख़लीफ़ा बना देना अफ़ज़ल है। अगर इमाम ने किसी को अपना ख़लीफ़ा (नाइब) न बनाया और न मुक़्तदियों ने बनाया, और न मुक़्तदियों में से कोई खुद ही बग़ैर ख़लीफ़ा बनाए आगे खड़ा हुआ तो नमाज़ बातिल हो जाएगी। पस अगर वक़्त में गुंजाइश हो तो उस नमाज़ को दोबारा पढ़ना चाहिए। अगर वक़्त तंग हो तो ख़लीफ़ा बनाना वाजिब होगा। इस मस्अला में हनफ़ीया के नज़दीक जुमा और दूसरी नमाज़ों में कोई फ़र्क़ नहीं है।

अगर इमाम ने किसी को अपना ख़लीफ़ा बनाया और मुक़्तदियों ने किसी और को अपना इमाम बना लिया तो इमाम के बनाए हुए ख़लीफ़ा के अलावा किसी और के पीछे नमाज़ सहीह न होगी।

अगर मुक़्तदियों में से कोई शख़्स ख़लीफ़ बनाए बग़ैर खुद ही आगे आ गया और पूरी नमाज़ पढ़ा दी तो नमाज़

दुरुस्त हो जाएगी। लेकिन अगर इमाम या मुक़्तदियों में से किसी ने ख़लीफ़ा न बनाया और कोई ख़ुद ही बग़ैर ख़लीफ़ा बनाए आगे आ गया मगर लोगों ने अलग अलग नमाज़ पढ़ ली तो सब की नमाज़ बातिल हो जाएगी।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–713)

इमाम का वुज़ू टूट जाए तो क्या हुक्म है

सवालः अगर इमाम का वुज़ू टूट जाए और वह नमाज़ में किसी को अपना ख़लीफ़ा बनाना चाहे तो उसकी क्या सुरत् है?

जवाबः इस्तिख़लाफ़ (ख़लीफ़ा बनाने) के सहीह होने की तीन शर्तें हैं:

(1) ख़लीफ़ा मुतअैयन हो जाने के बाद बक़िया शराइत सिर्फ़ इमाम के लिए हैं। ख़लीफ़ा और मुक़्तदियों की नमाज़ के लिए नहीं। अगर उसके बाद इमाम ने कोई फ़ेल मुनाफ़ी किया तो ख़लीफ़ा और मुक्तदियों की नमाज़ सहीह हो जाएगी।

(2) अगर चालीस हाथ (60 मुरब्बअ़ फ़िट = 25.60 मुरब्बअ़ मीटर) से छोटी मस्जिद या उससे छोटे सेहन में जमाअ़त हो तो इमाम के उससे बाहर निकलने से पहले ख़लीफ़ा मुतअैयन हो, और अगर खुली फ़ज़ा या मज़कूरा रक़्बा के बराबर या उससे बड़े कमरे या बड़े सेहन में हो तो जिहते क़िब्ला में सुतरा से और सूतरा न हो तो मौज़ए सुजूद से तजावुज़ करने से क़ब्ल और बक़िया तीन अतराफ़ में सफ़ूफ़ से तजावुज़ करने से क़ब्ल ख़लीफ़ा मुतअैयन

हो जाए।

(3) ख़लीफ़ा में इमामत की सलाहियत हो यानी औरत या नाबिग़ न हो।

ख़लीफ़ा के लिए ये शर्त नहीं कि उसको इमाम ही मुतऐयन करे, बल्कि मुक़्तदियों ने किसी को आगे कर दिया या कोई शख़्स अज़ ख़ुद ख़लीफ़ा बन गया तो भी जाइज़ है।

बेहतर ये है कि इमाम ख़ुद ख़लीफ़ा बनाए, मस्बूक़ भी ख़लीफ़ा बन सकता है। अगर ख़लीफ़ा को बक़िया रकआत का इल्म न हो तो इमाम उंगलियों के इशारा से बता दे, क़िराअत बाक़ी हो तो मुंह पर हाथ रख कर इशारा करे, सूरए फ़ातिहा बाक़ी हो तो जहाँ छोड़ी उससे आगे एक दो कलिमात बुलंद आवाज़ से पढ़ दे, रुकूअ़ के लिए घुटनों पर, सुजूद के लिए पेशानी पर, सजदए तिलावत के लिए पेशानी और ज़बान पर, सजदए सह्व के लिए सीना पर हाथ रख कर ख़लीफ़ा को समझाए। फिर वुज़ू से फ़रागत तक अगर जमाअ़त ख़त्म न हुई हो तो ख़लीफ़ा की इक़्तिदा करे, वरना तन्हा नमाज़ पूरी करे।

इक़्तिदा करने की सूरत में छूटे हुए अरकान पहले अदा कर के इमाम के साथ शामिल हो। अगर पानी मस्जिद के अन्दर ही है तो ख़लीफ़ा बनाने की ज़रूरत नहीं, इमाम वुज़ू कर के वापस अपने मक़ाम पर आकर इमामत करे, उस वक़्त तक मुक़्तदी इंतिज़ार करें। मगर इस सूरत में भी ख़लीफ़ा बनाना जाइज़ है।

अगर इमाम ख़लीफ़ा के एक रुक्न अदा करने से क़ब्ल वुज़ू कर के आ गया तो ख़लीफ़ा पीछे हट जाए

और अस्ल इमाम ही इमामत करे, बशर्तेकि इमाम मस्जिद से न निकला हो। अगर पानी मस्जिद से बाहर हो तो अफ़ज़ल ये है कि किसी को ख़लीफ़ा बना कर ख़ुद अज़ सरे नौ नमाज़ पढ़े। अलबत्ता अगर वक़्त तंग हो तो ख़लीफ़ा बनाना वाजिब है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–310)

ख़लीफ़ा बनाने की शराइत और उसका तरीक़ा

पहली शर्त ये है कि इमाम जिस मस्जिद में नमाज़ पढ़ रहा हो, अपना ख़लीफ़ा बनाने से पहले वहाँ से बाहर न जाए, अगर इमाम बाहर चला गया तो ख़लीफ़ा बनाना न इमाम के लिए दुरुस्त होगा और न लोगों के लिए, क्योंकि उसके मस्जिद से निकलते ही सब की नमाज़ बातिल हो जाएगी।

दूसरी शर्त ये है कि जिसको ख़लीफ़ा बनाया जाए वह इमामत का अह्ल हो। लिहाज़ा अगर किसी अनपढ़ या नाबालिग़ को ख़लीफ़ा बनाया गया तो सब की नमाज़ बातिल हो जाएगी।

ख़लीफ़ा बनाने का तरीक़ा ये है कि इमाम अपनी नाक पर हाथ रख कर झुके झुके पीछे हट जाए। ऐसा ज़ाहिर हो कि उसकी नक्सीर अपने आप फूट गई है। ये अमल अगरचे ख़िलाफ़े वाक़ेअ़ हो लेकिन उसकी मसलिहत ज़ाहिर है कि इस तरह नमाज़ का नज़्म और उसके उमूमी आदाब मलहूज़ रहेंगे।

तीसरी शर्त ये है कि मौजूदा नमाज़ को जारी रखने

की शर्तें पूरी हों। अगर ये शर्तें न पाई गईं तो नमाज़ बातिल हो जाएगी और उसके लिए ख़लीफ़ा बनाना भी दुरुस्त न होगा। वह शर्तें ग्यारह हैं:

(1) औवल ये कि वह हदस बे इख़तियारी का हो।

(2) दूसरे ये कि वह हदस इमाम के बदन से ही तअ़ल्लुक़ रखता हो, अगर बाहर से नजास्त लग गई जो मानेअ़ नमाज़ न हो तो उस नमाज़ को जारी नहीं रखा जा सकता।

(3) तीसरे ये कि वह हदस गुस्ल वाजिब करने वाला न हो मसलन किसी (शह्वत अंगेज़) ख़्याल से इंज़ाल का होना।

(4) चौथे ये कि हदस अनोखा न हो मसलन क़हक़हा मार कर हंसना या बेहोशी या जुनून का तारी होना।

(5) पाँचवीं ये कि हदस के बाद इमाम ने कोई रुक्न अदा न किया हो या चला न हो।

(6) छटे ये कि मुनाफ़ी नमाज़ कोई हरकत क़सदन हदस के बाद न की हो मसलन बेइख़्तियारी में जो हदस हो गया उसके बाद क़सदन कलाम करने लगा।

(7) सातवीं ये कि ग़ैर ज़रूरी अमल न किया हो मसलन ये कि पानी के क़रीब होते हुए पानी के लिए दूर जगह चला जाए।

(8) आठवीं ये कि बग़ैर किसी मजबूरी या हुजूम वग़ैरा के इतनी ताख़ीर ख़लीफ़ा बनाने में कर दे कि जितनी देर में कोई रुक्ने नमाज़ अदा किया जा सके।

(9) नौवीं ये कि नमाज़ पढ़ते में इन्किशाफ़ न हुआ हो कि वह नमाज़ से पहले हदस की हालत में था।

(10) दसवीं ये कि इमाम साहबे तरतीब हो और उसे फ़ौत शुदा नमाज़ याद न आ गई हो।

(11) ग्यारहवीं ये कि बाक़ी मांदा नमाज़ उस जगह के अलावा किसी और जगह अदा न की जाए।

लिहाज़ा अगर इमाम या मुक़्तदी को हदस लाहिक़ हुआ और वुज़ू करने चला गया तो वुज़ू के बाद वापस आकर इमाम के साथ नमाज़ पढ़ना वाजिब है, लेकिन तन्हा नमाज़ पढ़ने वाले को इख़्तियार है कि वुज़ू के बाद ख़्वाह उसी जगह आकर नमाज़ पूरी करे या किसी और जगह पर।

(किताबुलफ़िक़्ह अलल मज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–719)

शराइते सेहते बिना

सवालः अगर नमाज़े मग़रिब या कोई दूसरी नमाज़ पढ़ रहा हो। तीन रकअ़तें या दो रकअ़तें पढ़ चुका हो, उसका वुज़ू टूट जाए और वह दोबारा वुज़ू करने लगा तो वह पूरी नमाज़ पढ़ेगा या दो रकअ़तें या एक रकअ़त जो रह गई थी वह पढ़ेगा? किन सूरतों में बिना जाइज़ है? तफ़सील से ब्यान फ़रमाएँ?

जवाबः जवाज़े बिन के लिए तेरह शराइत हैं:

(1) हदस में या उसके सबब में किसी इंसान का कोई दख़ल न हो। अगर अमदन वुज़ू तोड़ा या किसी ने ज़ख़्म कर के ख़ून निकाल दिया तो बिना नहीं कर सकता, इसलिए कि पहली सूरत में नफ़्से हदस और दूसरी में

सबबे हदस यानी ज़ख़्म इंसान की तरफ़ से है, खाँसने से ख़ुरूजे रीह बिना से मानेअ़ है, और छींकने से ख़ुरूजे रीह का मानेअ़ होना मुख़्तलफ़ फ़ीह है।

(2) हदस नमाज़ी के बदन से हो, अगर ख़ारिज से कोई नजासत उस पर गिर गई हो तो बिना दुरुस्त नहीं।

(3) हदस मूजिबे ग़ुस्ल न हो। अगर नमाज़ में नींद आ गई और एहतेलाम हो गया तो बिना सहीह नहीं।

(4) हदस नादिरुलवुजूद न हो मसलन क़हक़हा या बेहोशी।

(5) हदस के साथ कोई रुक्न अदा न करना, अगर सज्दा की हालत में हदस हुआ यानी वुज़ू टूटा और सज्दा पूरा करने की नीयत से सर उठाया, या वुज़ू के लिए जाते हुए क़िराअत में मशग़ूल रहा तो बिना नहीं कर सकता।

(6) चलने की हालत में कोई रुक्न अदा न करना, मसलन वुज़ू के बाद लौटते हुए क़िराअत करना, हाँ आते जाते तस्बीह पढ़ना मना नहीं।

(7) नमाज़ के मुनाफ़ी कोई काम न करना, मसलन क़ुदरती हदस के बाद अमदन हदस या कलाम वग़ैरा या कुवें से पानी खींचना।

(8) बे ज़रूरत काम न करना मसलन वुज़ू के लिए क़रीब जगह छोड़ कर दो सफ़ से ज़्यादा दूर जाना, हाँ क़रीब मक़ाम पर इज़्दिहाम व हुजूम के बाइस या भूले से दूर जाने में कोई हरज नहीं।

(9) बिला ज़रूरत तीन बार "سبحان ربی الاعلی" के बक़द्रे ताख़ीर न करना, जबकि नकसीर फूट जाने या

किसी अज़्व से ख़ून बंद न होने की वजह से ताख़ीर मुज़िर नहीं। वुज़ू की सुन्नतें भी अदा करे, अगर वुज़ू के सिर्फ़ चार फ़राइज़ पर इकतिफ़ा किया तो बिना जाइज़ नहीं।

(10) हदसे साबिक़ का ज़ाहिर न होना, मसलन मोज़ा पर मसह की मुद्दत ख़त्म होना, तयम्मुम करने वाले का पानी देखना, ख़ुरूजे वक़्ते मुस्तहाज़ा।

(11) साहबे तरतीब को क़ज़ा नमाज़ याद न आना, अलबत्ता अगर याद आने पर क़ज़ा न पढ़ी बल्कि वक़्ती की बिना कर ली, फिर मज़ीद चार यानी कुल छः फ़र्ज़ नमाज़ें उसके ज़िम्मा क़ज़ा हो गईं, तो बिनां वाली नमाज़ सहीह हो जाएगी।

(12) अगर मुक़्तदी को हदस हो या इमाम को हो और उसने कोई ख़लीफ़ा बना दिया हो, और वुज़ू सें फ़रागत तक जमाअत ख़त्म न हुई हो और मक़ामे वुज़ू ऐसी जगह हो कि वहाँ से इक़्तिदा सहीह न हो, तो ये शर्त है कि ये इमाम या मुक़्तदी ऐसी जगह पर आकर बिना करे जहाँ से इक़्तिदा सहीह हो। अगर मक़ामे वुज़ू पर इक़्तिदा कर सकता हो, या वुज़ू से क़ब्ल जमाअत ख़त्म हो चुकी हो, या मुनफ़रिद को हदस हुआ हो तो इन तीन सूरतों में इख़तियार है कि मक़ामे वुज़ू ही में बिना करे या साबिक़ मक़ाम पर लौट कर आए, मक़ाम वुज़ू ही में बिना अफ़ज़ल है।

(13) इमाम को हदस हुआ तो उसका ऐसे शख़्स को ख़लीफ़ा न बनाना जो इमामत की सलाहियत न रखता हो। ये भी मुनाफ़ीए नमाज़ है, जिसका ब्यान न० 7 में

गुज़र चुका। मगर बवज्हे ख़िफ़ा उसको मुस्तक़िल ज़िक्र किया गया है। दरहक़ीक़त शराइत बारह ही हैं।

शराइते मज़कूरा के साथ बिना अगरचे जाइज़ है मगर अज़ सरे नौ पढ़ना अफ़ज़ल है। अलबत्ता अगर वक़्त तंग हो तो बिना अफ़ज़ल है, बल्कि ज़्यादा तंग हो तो वाजिब है। इस्तीनाफ़ के लिए ज़रूरी है कि पहली नमाज़ को सलाम फेर कर या किसी फ़ेले मुनाफ़ी से ख़त्म करे फिर नई नमाज़ शुरू करे, बग़ैर सलाम या फ़ेले मुनाफ़ी इस्तीनाफ़ सहीह नहीं।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–435)

इमाम को अगर ख़लीफ़ा बनाना दुश्वार हो तो क्या हुक्म है?

सवालः फ़िक़्ह की किताबों में इमाम बनाना जाइज़ लिखा है मगर चूंकि ये मस्अला बहुत कम पेश आता है, लोग उससे इस लिए नावाक़िफ़ हैं और इमाम को ख़लीफ़ा बनाना दुश्वार होता है। ऐसी हालत में क्या करना चाहिए?

जवाबः फ़िक़्ह की किताबों में हदस लाहिक़ होने की सूरत में ख़लीफ़ा बनाने को जाइज़ लिखा है, ज़रूरी नहीं है। और ये भी लिखा है कि इस्तीनाफ़ अफ़ज़ल है।

पस जब इस क़िस्म का हाल है जो कि आप ने लिखा है तो ऐसी हालत में इस्तीनाफ़ ही करना मुनासिब है ताकि लोग ग़लती में न पड़ें। पस पहले नमाज़ को क़तअ़ कर दे और कोई अमल मुनाफ़ीए नमाज़ करे और फिर वुज़ू करने के बाद अज़ सरे नौ शुरू करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–401, बहवाला रद्दुलमुहतार ज़िल्द–1 सफ़्हा–562)

इमाम का बहालते सज्दा वुज़ू टूट जाना

सवालः अगर सज्दा की हालत में इमाम साहब का वुज़ू टूट जाए तो ख़लीफ़ा किस तरह मुसल्ले पर आए?

जवाबः इस सूरत में ख़लीफ़ा मुसल्ले पर आकर उसी सज्दा से शुरू करे और इमाम जिसको हदस सज्दा में हुआ है अपनी पेशानी पर हाथ रख ले, ताकि ख़लीफ़ा समझ जाए कि इमाम को सज्दा में हदस हुआ है। उस सज्दा को फिर करना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–403, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–562 बाबुलइस्तिख़लाफ़)

सूरत पढ़ते हुए वुज़ू टूट जाने का हुक्म

सवालः इमाम कोई सूरत पढ़ रहा था कि उसका वुज़ू टूट गया। अब जो मुक़्तदी उसका ख़लीफ़ा बना है, उसको वह सूरत याद नहीं जो इमाम पढ़ रहा था तो अब वह क्या करे?

जवाबः वह कोई और सूरत पढ़ कर रुकूअ़ कर दे। ये ज़रूरी नहीं है कि उसी सूरत को पढ़े बल्कि अगर वह इमाम वाजिब क़िराअत के बक़द्र पढ़ चुका है तो ये ख़लीफ़ा उसकी जगह जाकर फ़ौरन रुकूअ़ में जा सकता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–403, बहवाला

अलबहरुर्राइक़ जिल्द–1 सफ़्हा–391)

मस्बूक़ ख़लीफ़ा नमाज़ कैसे पूरी करे

सवालः इमाम जुहर की नमाज़ पढ़ा रहा है, मुक़्तदी का वुजू टूट गया। जब वह वुजू कर के आया तो इमाम एक रकअ़त पढ़ चुका, जब वह आदमी आकर शामिल हो गया तो इमाम साहब का वुजू टूट गया, वह उसी आदमी को अपना ख़लीफ़ा बना कर वुजू करने चला गया। अगर ख़लीफ़ा मुक़्तदियों की नमाज़ पूरी करे तो अपनी तीन रकअ़तें होती हैं और अगर अपनी पूरी करे तो मुक़्तदियों की पाँच रकअ़तें होती हैं। क्या करना चाहिए?

जवाबः जिस मुक़्तदी का वुजू टूट गया और बह वुजू करने गया और उसकी एक रकअ़त फ़ौत हो गई तो वह लाहिक़ है, उसको ये हुक्म है कि वह पहले अपनी फ़ौत शुदा रकअ़त पढ़े फिर इमाम के साथ शरीक हो। पस अगर उसने ऐसा किया तो उसकी नमाज़ इमाम के बराबर होगी। और अगर उसने अपनी फ़ौत शुदा रकअ़त पहले अदा न की और इमाम के साथ शरीक हो गया और फिर इमाम का वुजू टूट गया, इमाम ने उस लाहिक़ को इमाम बना दिया तो उसको चाहिए कि जिस वक़्त इमाम की चौथी रकअ़त पूरी हो जाए तो ये शख़्स किसी मुदरिक को ख़लीफ़ा बना दे जो औवल से इमाम के साथ शरीक हुआ था, वह सलाम फेर देगा। वह शख़्स अपनी रकअ़त फ़ौत शुदा उठ कर पूरी करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–376, बहवाला

रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–558)

मस्बूक़ की इमामत का हुक्म

सवालः मस्बूक़ की इमामत दुरुस्त है या नहीं? मसलन ज़ैद नमाज़ पढ़ रहा था, बकर दूसरी या तीसरी रकअ़त में शरीक हुआ, जब ज़ैद नमाज़ से फ़ारिग़ हुआ तो बकर बाक़ी रकअ़त नमाज़ की पूरी करने के लिए खड़ा हुआ। ख़ालिद आ कर उसके पीछ नमाज़ पढ़ने लगा, ख़ालिद की नमाज़ दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः मस्बूक़ की इक़्तिदा दुरुस्त नहीं है। वह बहालते इन्फ़िरादी इमाम के फ़ारिग़ होने के बाद इमाम नहीं हो सकता।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–376, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–558)

अमले कसीर व क़लील की तारीफ़

सवालः अमले कसीर जो मुफ़सिदे सलात (नमाज़ फ़ासिद करने वाला) है। उसकी क्या तारीफ़ है? अगर मिसाल से वाज़ेह फ़रमाएँ तो समझने में सहूलत होगी।

जवाबः अमले कसीर की तारीफ़ में पाँच क़ौल हैं।

(1) ऐसा अमल कि उसके फ़ाइल (करने वाले) दूर से देख कर ज़न्ने ग़ालिब हो कि ये शख़्स नमाज़ में नहीं है, जिस अमल से नमाज़ में न होने का ज़न्ने ग़ालिब न हो बल्कि शुब्हा हो वह क़लील है।

(2) जो काम आदतन दो हाथों से किया जाता हो जैसे कमर बंद बाँधना और अमामा बाँधना वह कसीर है, ख़्वाह वह एक ही हाथ से करे। और जो अमल आदतन एक हाथ से किया जाता है वह दोनों हाथों से भी करे तो वह क़लील है, जैसे इज़ार बंद खोलना, और टोपी सर से उतारना।

(3) हरकाते मुतवालिया हों यानी उनके दरमियान बक़द्रे रुक्न वक़्फ़ा न हो तो अमले कसीर है वरना क़लील।

(4) ऐसा अमल कसीर है जो फ़ाइल को ऐसा मक़्सूद हो कि उसको आदतन मुस्तक़िल मजलिस में करता हो, जैसे नमाज़ की हालत में बच्चा ने औरत का दूध पी लिया।

(5) नमाज़ी की राए पर मौक़ूफ़ है वह जिस अमल को कसीर समझे वह कसीर है।

पहले तीन अक़वाल ज़्यादा मशहूर हैं और दरहक़ीक़त तीनों का हासिल एक ही है इसलिए कि दूसरे और तीसरे क़ौल में मज़कूर अमल के फ़ाइल को देखने से ग़ैर नमाज़ में होने का ज़न्ने ग़ालिब होता है।

फ़ाएदा: बाज़ इबारात में "ثَلَاثُ حَرَكَاتٍ مُتَوَالِيَةٍ" के बजाए "ثَلَاثُ حَرَكَاتٍ فِي رُكْنٍ" है, और उसमें रुक्न से, मिक़्दारे रुक्न मुराद है, यानी जितने वक़्त तीन बार "سبحان ربی الاعلی" कहा जा सके, ज़ाहिर है कि इतने वक़्त तीन हरकतें वाक़ेअ़ हों तो वह पै दर पै ही कहलाएँगी।

यूँ भी कहा जा सकता है कि एक रुक्न के साथ पै दर पै होने की भी शर्त है, पस किसी तवील रुक्न में

तीन हरकतों के इस तरह पेश आने से कि उनके दरमियान बक़द्रे रुक्न वक़्फ़ा हो, उससे नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी। पहले क़ौल के मुताबिक़ जो दरहक़ीक़त सब से ज़्यादा सहीह और अस्ल की हैसियत रखता है, तीन पै दर पै हरकतों से नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, इसलिए कि तीन हरकतें अगर पै दर पै न हों तो उनके देखने वाले को उसके बारे में ये गुमान नहीं होता कि वह नमाज़ की हालत में नहीं है, ख़्वाह वह तीनों हरकतें एक ही रुक्न में हों, ख़ास कर जब कि रुक्न तवील हो और हरकतों के दरमियान वक़्फ़ा भी ज़्यादा हो।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–419)

सज्दा में दोनों पाँव उठ जाने का हुक्म

सवालः नमाज़ में सज्दा की हालत में अगर दोनों पाँव ज़मीन से उठ जाएँ तो नमाज़ फ़ासिद होगी या नहीं? नीज़ अगर नमाज़ फ़ासिद होने का हुक्म है तो किस बिना पर।

जवाबः दोनों पाँव में से किसी एक का कोई जुज़ एक तस्बीह पढ़ने के बराबर ज़मीन पर रखना वाजिब है और एक क़ौल के मुताबिक़ फ़र्ज़ है। तीसरा क़ौल सुन्नत का भी है, पहला क़ौल राजेह है, पस अगर पूरे सज्दा में एक तस्बीह पढ़ने के बक़द्र दोनों पाँव में से किसी का कोई जुज़ ज़मीन पर रख लिया तो वाजिब अदा हो जाएगा।

अगर इतनी मिक़्दार भी नहीं रखा तो वाजिब के छूट जानें की वजह से नमाज़ वाजिबुल इआदा होगी।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–398)

नमाज़ में सत्र खुल जाने का हुक्म

सवालः ऐसी सदरी पहन कर नमाज़ होगी या नहीं जिससे कि रुकूअ़ व सुजूद में जाते वक़्त नाफ़ से नीचे का हिस्सा खुल जाए जिसको ढकना फ़र्ज़ है और नमाज़ वाजिबुल इआ़दा है या नहीं? सत्र की कितनी मिक़्दार खुल जाए तो नमाज़ नहीं होगी?

जवाबः अगर इस सदरी (शर्ट वग़ैरा) में सत्र खुलने का इल्म होने के बावजूद नमाज़ पढ़ी, या ग़फ़लत की वजह से सत्र का एहतिमाम नहीं किया तो नमाज़ नहीं हुई, ख़्वाह बहुत थोड़ी मिक़्दार में और थोड़ी सी देर ही के लिए सत्र खुला हो, और अगर ग़ैर इख़्तियारी तौर पर सत्र खुल गाय तो उसमें ये तफ़सील है कि अगर तीन बार "سبحان ربی الاعلی" कहने की मिक़्दार तक चौथाई अज़्व खुला रहा तो नमाज़ नहीं होगी। इससे कम मिक़्दार हो या वक़्त उससे कम हो तो नमाज़ हो जाएगी, जो अज़्व खुला हो उसका चौथाई हिस्सा मोतबर है और एक अज़्व मुतअ़द्दद जगह से खुला हो और सब का मजमूआ़ चौथाई के बक़द्र हो गया तो मुफ़सिद होगा, और अगर मुतअ़द्दद आज़ा खुल जाएँ तो सब का मजमूआ़ उनमें से छोटे अज़्व के चौथाई के बराबर होना मुफ़सिद है।

नाफ़ की मुहाज़ात से लेकर पेडू तक चारों तरफ़ एक ही अज़्व शुमार होता है। पेडू की इब्तिदा नाफ़ से नीचे मुदौवर ख़त से होती है।

नमाज़ में टख़ने ढाँकना कैसा है

सवालः नमाज़ में अगर टख़ने ढके हुए हों तो नमाज़ में क्या असर पड़ता है?

जवाबः मर्द के लिए नमाज़ और ग़ैर नमाज़ दोनों हालतों में टख़ने ढाँकना नाजाइज़ और गुनाह है। हदीस में उस पर जहन्नम की वईद आई है। नमाज़ के अन्दर गुनाह का इरतिकाब और भी ज़्यादा बुरा है। नमाज़ में टख़ने ढाँकने से अगरचे नमाज़ हो जाएगी, मगर मुतकब्बिरीन का शिआ़र होने की वजह से मकरूह है। आप (स.अ.व.) ने टख़ने न ढाँकने, दाढ़ी कटाने और गाने बजाने को उन बदआमालियों की फ़ेहरिस्त में शुमार फ़रमाया है जिनकी वजह से क़ौमे लूत पर अज़ाब आया है।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–404, बहवाला तहतावी अललमराक़ी सफ़्हा–189)

इमाम का सज्दा में जाते हुए घुटनों पर हाथ रखना

सवालः रुकूअ़ के बाद सज्दा में जाते वक़्त हाथ घुटनों पर रखना सुन्नत है या मुस्तहब?

जवाबः उठते वक़्त घुटनों पर हाथ रखना मुस्तहब है, सज्दा की तरफ़ जाने की हालत में घुटनों पर हाथ रखना साबित नहीं। अदमे सुबूत के अलावा इसमें दो क़बाहतें हैं:

(1) अवाम उसको मसनून या मुस्तहब समझने लगे हैं।

(2) क़ौमा से सज्दा की तरफ़ जाने का मसनून तरीक़ा ये है कि घुटने ज़मीन पर टेकने से क़ब्ल कमर और सीना न झुके। उस वक़्त घुटनों पर हाथ रखने की आदत का ये असर देखा गया है कि घुटने ज़मीन पर लगने से क़ब्ल ही ऊपर का धड़ झुक जाता है। लिहाज़ा ये आदत तर्के सुन्नत का बाइस होने की वजह से क़ाबिले एहतेराज़ है।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–51)

सुन्नत तरीक़ा ये है कि पहले दोनों घुटने एक साथ ज़मीन पर रखे। इसी तरह दोनों हाथ एक साथ रखे और उठते वक़्त भी बरअक्स ऐसा ही करे।

अलबत्ता अगर उज़्र की वजह से घुटने पहले रखना मुश्किल हो, तो इस सूरत में दायाँ हाथ पहले रखे, फिर दोनों घुटने एक साथ रखे।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–32, बहवाला रद्दुलमुहतार सफ़्हा–465)

इमाम का सज्दा से उठ कर कुरता दुरुस्त करना

सवालः एक इमाम साहब जब भी सज्दा से उठ कर खड़े होते हैं तो एक हाथ से और कभी दोनों हाथों से पीछे की जानिब कुरता पकड़ कर दुरुस्त करते हैं, क्या ये दुरुस्त है?

जवाबः कुरता दुरुस्त करने की ज़रूरत उमूमन दो वजह से पेश आती है। एक ये कि कुरता कमर बंद के ऊपर अटक जाता है जो बाज़ मुक़्तदियों के ज़ेहन को

बटाने वाला और ख़ुशूअ़ में मुख़िल होता है।

दूसरी वजह ये होती है कि बाज़ लोगों की सुरीन (कूल्हे) के अन्दर कुरता अटक जाता है। किसी ऐसी ज़रूरत की वजह से कुरते को खींच कर दुरुस्त करने में कोई हरज नहीं। अलबत्ता उसके लिए एक हाथ काफ़ी है, दूसरा हाथ इस्तेमाल करना मकरूहे है और बिला ज़रूरत एक हाथ का भी इस्तेमाल करना मकरूहे तहरीमी है।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–437, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–599)

नमाज़ में चादर कंधे से गिर जाने का हुक्म

कंधे पर डाल लेना चाहिए। कपड़े का लटकना नमाज़ में तशवीश का बाइस है और तशवीश को दूर करने के लिए एक या दो बार हिलाना जाइज़ है, नीज़ नमाज़ में कपड़ा लटके रहने की मुमानअ़त है, और ये अमल मकरूह है, सदल में दाख़िल होने की वजह से मकरूह है।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–436)

नमाज़ में तहबंद दुरुस्त करना

सवाल: नमाज़ में तह बंद खुल जाने का अंदेशा हो तो क्या उसको दोनों हाथों से बाँध सकते हैं? या तहबंद को कस सकते हैं?

जवाब: पहले एक हाथ से एक जानिब कस लें, फिर

तीन बार "سبحان ربي الاعلى" कहने की मिक़्दार तक तवक़्क़ुफ़ करने के बाद दूसरी जानिब दूसरे हाथ से दुरुस्त कर लें।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–437)

सज्दा में जाते वक़्त कपड़ा समेटना

सवालः बाज़ लोगा नमाज़ में जाते वक़्त (आदतन सज्दा में जाते वक़्त पाजामा) या तहबंद को उठा लेते हैं क्या ये मकरूहे तहरीमी है या तंज़ीही?

जवाबः मकरूहे तहरीमी है।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–407, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–598)

क़याम में दोनों क़दम के दरमियान फ़ासिला की मिक़्दार

फुक़हा ने लिखा है कि चार अंगुश्त का फ़ासिला पैरों में क़याम की हालत में रखना चाहिए। अगर कुछ कम व बेश हो गया तो नमाज़ सहीह है, कुछ कराहत नहीं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–153, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब सिफ़तुस्सलात बहसुलक़याम जिल्द–1 सफ़्हा–414)

रुकूअ़ से उठ कर सीधा खड़ा होना चाहिए

सवालः बाज़ अइम्मा रुकूअ़ कर के सीधे खड़े नहीं

होते, सज्दा में चले जाते हैं, नमाज़ हो जाती है या नहीं?

जवाब: अगर रुकूअ़ से उठ कर सीधे खड़े न हों तो इसमें तर्के वाजिब होता है। वह नमाज़ क़ाबिले इआ़दा है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़हा–155, रद्दुलमुहतार बाब वाजिबातुस्सलात जिल्द–1 सफ़हा–432)

सज्दा से चार अंगुल उठ कर दूसरा सज्दा करना

बक़ौल बाज़ मुहक़्क़िक़ीन इसमें तर्के वाजिब है और ऐसी नमाज़ का इअ़दा वाजिब है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़हा–155, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब वाजिबातुस्सलात जिल्द–1 सफ़हा–432)

सज्दा में रान और पिंडुली का फ़ासिला

सवाल: सज्दा में रान और पिंडुली को कितना कुशादा किया जाए। क्या ज़विया क़ाइमा बनाना चाहिए?

जवाब: दुर्रेमुख़्तार में है कि अपने बाज़ू को बिला तकल्लुफ़ ज़ाहिर करे और रान को पेट से दूर रखे।

पस मालूम हुआ कि सज्दा में सुन्नत इसी क़द्र है और ज़ाविया क़ाइमा बनाना ज़रूरी नहीं है और ये भी जब है कि जमाअ़त में न हो, तन्हा हो या इमाम हो वरना ऐसा फ़ेल न करे जिससे दूसरे मुक़्तदियों को तकलीफ़ व ईज़ा हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़हा–164, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–270)

सज्दा से उठते हुए बिला उज़्र ज़मीन का सहारा लेना

सवाल: दूसरी रकअत में क़ाअदा के बाद जब खड़ा हो तो हाथ बदस्तूर रानों पर रख कर खड़ा हो या ज़मीन पर सहारा देकर खड़ा हो?

जवाब: हाथ घुटनों और रानों पर रख कर खड़ा होना बेहतर है और अगर ब ज़रूरत ज़मीन पर रख कर खड़ा हो तो ये भी दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–190, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब सिफ़तुस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–472)

फ़तावा रहीमिया जिल्द–6 सफ़्हा–362 पर इस तरह है:

इमाम साहब उज़्र की वजह से सज्दा में जाते वक़्त पहले हाथ रखते हैं तो ये मकरूह नहीं है, बिला उज़्र पहले हाथ रखना मकरूह है।

(बहवाला तहतावी सफ़्हा–154)

तशह्हुद में अंगुश्त से इशारा करना सुन्नत है

सवाल: सरहद के उलमा तशह्हुद में अंगुश्त उठाने को मना करते हैं कि ये फ़ेल नमाज़ में न किया जाए, सहीह क्या है?

जवाब: हनफ़ीया के नज़दीक सहीह ये है कि तशह्हुद में इशारा शहादत की उंगली से सुन्नत है। दुर्रेमुख़्तार में मुतअद्दिद कुतुब के हवाला से शहादत की उंगली से इशारा करने को सहीह बातया है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–194, बहवाला दुर्रेमुख़्तार बाब सिफ़तुस्सलात सफ़्हा–474)

दाएँ हाथ की उंगली न उठा सकता हो तो क्या करे?

अगर दाहने हाथ में उज़्र है और उंगली नहीं उठा सकता तो वह अंगुश्त न उठाए, बाएँ हाथ की उंगली उठाने का हुक्म नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–192, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब सिफ़तुस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–474)

इशारा के वक़्त उंगलियों के हल्क़ा का हुक्म

तशह्हुद में शहादत की उंगली से इशारा की ये सूरत है कि इबहाम और उसता का हल्क़ा कर के बिन्सिर और ख़िन्सिर को बंद करे, कुतुबे फ़िक़्हे अहनाफ़ में इसको लिखा है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–191, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–475)

तशह्हुद में उंगली उठा कर किस लफ़्ज़ पर गिराए

शरहे मनीया में इमाम हुलवाई से नक़्ल किया है कि "लाइलाहा" पर उंगली को उठाए और "इल्लल्लाह" पर रख दे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–189, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब सिफ़तुस्सलात मतलब फ़ी

अक़्दिलअसाबेअ़ जिल्द–1 सफ़्हा–475)

उंगलियों का हल्क़ा तशह्हुद में कब तक बाक़ी रखे

लाइलाहा इल्लल्लाह कहने के वक़्त जब उंगलियों को बंद या उनका हल्क़ा कर लिया है तो फिर उस को फ़ारिग़ होने तक वैसा ही रखना चाहिए।

शामी जिल्द औवल में मुतअ़द्दद इबारतें हैं जिनमें अक़्दे असाबेअ़ को इशारा के बाद खोलने का ज़िक्र नहीं है जो इस बात की सरीह दलील है कि हल्क़ा बना कर उंगलियों का खोलना मुनासिब नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–202, बहवाला रद्दुलमुहतार सफ़्हा–450)

नमाज़ों में रसूलुल्लाह की क़िराअत

''عَنْ جَابِرِ بن سَمُرَةَ قَال كَانَ النَّبِيُّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيهِ وَسَلَّم يَقْرَأُ فِي الفَجْرِ بِقٓ والقرانِ المَجِيْد و نَحْوها و كانت صلوٰته بَعْدُ تَخْفِيْفاً''

तरजुमाः हजरत जाबिर बिन समरा (रज़ि.) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) फ़ज्र की नमाज़ में सूरए क़ाफ़ और उस जैसी दूसरी सूरतें पढ़ा करते थे और बाद में आप की नमाज़ हलकी होती थी।

(सहीह मुस्लिम शरीफ़)

तशरीहः शारिहीन ने आख़िरी ख़त कशीदा फ़िक़्रा के दो मतलब ब्यान किए हैं। एक ये कि फ़ज्र के बाद की आपकी नमाज़ें यानी जुहर, अस्र, मग़रिब, इशा ये सब

बनिस्बत फ़ज्र के हल्की होती थीं और उनमें ब निस्बत फ़ज्र के आप क़िराअत कम फ़रमाते थे। दूसरा मतलब उस फ़िक़रा का ये ब्यान क्या गया है कि इब्तिदाई दौर में जब सहाबए किराम की तादाद कम थी और आप (स.अ.व.) के पीछे जमाअ़त में साबिक़ीने औवलीन ही सब होते थे, आप की नमाज़ें उमूमन तवील होती थीं। और बाद के दौर में जब साथ में नमाज़ पढ़ने वालों की तादाद ज़्यादा हो गई थी और उनमें दोम सोम दर्जा वाले अह्ले ईमान भी होते थे तो आप (स.अ.व.) नमाज़ें निस्बतन हल्की पढ़ने लगे, क्योंकि जमाअ़त में नमाज़ियों की तादाद ज़्यादा होने की सूरत में इसका इमकान ज़्यादा होता था कि कुछ लोग मरीज़ या मकज़ोर या कम हिम्मत या ज़्यादा बूढ़े हों जिनके लिए तवील नमाज़ बाइसे ज़हमत हो जाए।

(मआ़रिफ़ुल हदीस जिल्द–3 सफ़्हा–245)

फ़ज्र की नमाज़ में रसूलुल्लाह (स.अ.व.) की क़िराअत से मुतअ़ल्लिक़ जो हदीसें दर्ज की गईं और कुतुबे हदीस में उनके अलावा जो रिवायात इस सिलसिले में मिलती हैं उन सब को पेशे नज़र रखने से ऐसा मालूम होता है कि आँहज़रत (स.अ.व.) की क़िराअत फ़ज्र की नमाज़ में बनिस्बत दूसरी नमाज़ों के अक्सर व बेशतर किसी क़द्र तवील होती थीं, लेकिन कभी कभी (ग़ालिबन किसी ख़ास दाइया से) आप फ़ज्र नमाज़ भी ''قُلْ يَـا اَيُّهَا الكـافِرون اور قل هُـوَالـلّٰه احد اور قـل اعـوذبـرب الفلق اور قـل اعـوذ بِرَبِّ الناس'' जैसी छोटी सूरतों से पढ़ा देते थे।

इसी तरह इन हदीसों से ये भी मालूम हुआ कि आप (स.अ.व.) का आम मामूल नमाज़ की रकअ़तों में मुस्तक़िल

सूरतें पढ़ने का था, लेकिन कभी कभी ऐसा भी होता था कि किसी सूरत में से कुछ आयात पढ़ देते थे। इसी तरह कभी ऐसा भी हुआ है कि आप (स.अ.व.) ने दोनों रकअ़तों में एक ही सूरत की क़िराअत फ़रमाई है।

जुमा की फ़ज्र में सूरत "آلم تنزيل السجده" और सूरए अलदह्र पढ़ने की हिकमत हज़रत शाह वली उल्लाह (रह.) ने ये ब्यान फ़रमाई है कि उन दोनों सूरतों में क़यामत और जज़ा सज़ा का ब्यान बहुत मुअस्सिर अंदाज़ में किया गया है, और क़यामत जैसा कि अहादीसे सहीहा में बताया गया है जुमा ही के दिन क़ाइम होने वाली है। इसलिए ग़ालिबन आप उसकी तज़कीर और याद दिहानी के लिए जुमा की फ़ज्र में ये दोनों सूरतें पढ़ना पसंद फ़रमाते थे। والله اعلم

(मआ़रिफुल हदीस जिल्द–3 सफ़्हा–249)

क़िराअते फ़ज्र की मिक़दार

सवालः इमाम साहब सूरए मुल्क, सूरए यासीन हिफ़्ज़ होने के बावजूद फ़ज्र की नमाज़ में वज़्ज़ुहा वल्लैल (2) अलम नशरह (3) वत्तीन (4) सूरए जुमा का आख़िरी रुकूअ़ पढ़ते हैं, जिसकी वजह से बाज़ नमाज़ियों की सुन्नतें फ़ौत हो जाने का ख़ौफ़ रहता है, तो उसके लिए शरई हुक्म क्या है?

जवाबः सुब्ह की नमाज़ में इमाम को इतनी मुख़्तसर क़िराअत की आदत बना लेना ख़िलाफ़े सुन्नत और मकरूह है। कोई ख़ास उज़्र न हो तो इमाम और ऐसे ही मुनफ़रिद

(तन्हा पढ़ने वाला) सुब्ह की नमाज़ में तिवाले मुफ़स्सल यानी सूरए हुजरात से लेकर सूरए बुरूज तक की सूरतों में से एक एक सूरत एक एक रकअ़त में पढ़े। ये मसनून और मुस्तहब है या किसी और जगह से दरमियानी दर्जा की कम से कम चालीस आयतें पढ़े ये कम से कम है। और मुतवस्सित दर्जा ये है कि पच्चास आयतों से साठ तक और उससे बेहतर ये है कि सौ आयतों तक पढ़े।

इस सिलसिले में इमाम और मुक़्तदियों की हिम्मत और शौक़ का लिहाज़ रखना चाहिए। अलबत्ता वक़्त की तंगी या किसी और ज़रूरत और उज़्र की बिना पर क़िराअत मुख़्तसर करनी पड़े तो मुज़ाएक़ा नहीं है, जाइज़ है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–155, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–504, व कबीरी सफ़्हा–303)

जुमा के दिन फ़ज्र में सूरए सज्दा पढ़ना

सवालः ज़ैद कहता है कि जुमा के दिन फ़ज्र की नमाज़ में पहली रकअ़त में सूरए सज्दा और दूसरी रकअ़त में सूरए दहर पढ़ना मुस्तहब है, क्या ये सहीह है?

जवाबः फ़ज्र की नमाज़ में जुमा के दिन पहली रकअ़त में सूरए सज्दा और दूसरी में सूरए दह्र पढ़ाना फ़ी नफ़्सिही मुस्तहब है, लेकिन उस पर मुदावमत (पाबंदी) मकरूह है, ताकि अवाम उसको वाजिब न समझने लगें।

आज कल अइम्मए मसाजिद ने इस मुस्तहब अम्र को बिलकुल ही तर्क कर रखा है। ये गफ़लत है, और इसकी इसलाह लाज़िम है।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–81)

अहादीस में बेशक ऐसा आया है, लेकिन हनफ़ीया उसको बाज़ औक़ात पर महमूल करते हैं और उसकी मुस्तक़िल तौर पर पाबंदी पसंद नहीं करते, क्योंकि वह तऐयुने सूरत को किसी भी नमाज़ के लिए मना करते हैं, लिहाज़ा कभी कभी ऐसा कर ले तो हरज नहीं दवाम उस पर न करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–217)

सूरतों की तअयीन करना

रसूलुल्लाह (स.अ.व.) नमाज़े जुमा की दोनों रकअ़तों में अलत्तरतीब अक्सर व बेशतर सूरए जुमा और सूरए मुनाफ़िक़ून या सूरए आला व सूरए ग़ाशिया पढ़ा करते थे और ईदैन की नमाज़ में भी या तो यही दोनों आख़िरी सूरतें सूरए आला व गाशिया पढ़ा करते थे या सूरएः

"قٓ وَالقراٰن المجید اور اقتربتِ الساعة"

नमाज़े पंजगाना और जुमा व ईदैन की नमाज़ों में क़िराअत से मुतअ़ल्लिक़ जो हदीसें लिखी गई हैं उससे दो बातें समझ में आती हैं।

(1) आप (स.अ.व.) का अक्सर मामूल ये था कि फ़ज्र में क़िराअत तवील फ़रमाते थे और ज़्यादा तर तिवाले मुफ़स्सल पढ़ते थे। जुहर में भी किसी क़द्र तवील क़िराअत फ़रमाते थे, अस्र मुख़्तसर और हल्की पढ़ते थे और इसी तरह मग़रिब भी, इशा में औसाते मुफ़स्सल पढ़ना पसंद फ़रमाते थे, लेकिन कभी कभी उसके ख़िलाफ़ भी होता

था।

(2) किसी नमाज़ में हमेशा किसी ख़ास सूरत के पढ़ने का न आप (स.अ.व.) ने हुक्म दिया और न अमलन ऐसा किया, हाँ बाज़ नमाज़ों में अक्सर व बेशतर बाज़ ख़ास सूरतें पढ़ना आप (स.अ.व.) से साबित है।

(मआ़रिफुलहदीस जिल्द–3 सफ़्हा–261)

हज़रत शाह वलीउल्लाह (रह.) की राए

हज़रत शाह वलीउल्लाह (रह.) अपनी किताब हुज्जतुल्लाहिल बालिग़ा में तहरीर फ़रमाते हैं कि:

> "रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने बाज़ नमाज़ों में कुछ मसालेह और फ़वाइद के पेशे नज़र बाज़ ख़ास सूरतें पढ़नी पसंद फ़रमाईं। लेकिन क़तई तौर पर न उनकी तअ़यीन की न दूसरों को ताकीद की कि वह ऐसा ही करें। पस इस बारे में अगर कोई आप (स.अ.व.) की इत्तिबा करे (और इन नमाज़ों में वही सूरतें अक्सर व बेशतर पढ़े) तो अच्छा है। और जो ऐसा न करे तो उसके लिए भी कोई मुज़ाएक़ा और हरज नहीं है।"
>
> (मआ़रिफुल हदीस सफ़्हा–361)

नबी करीम (स.अ.व.) जुमा व ईदैन के आलावा दूसरी तमाम नमाज़ों में सूरतें मुऐयन कर के नहीं पढ़ा करते थे। फ़र्ज़ नमाज़ों में छोटी बड़ी सूरतों में से कोई ऐसी सूरत नहीं है जो आप (स.अ.व.) ने न पढ़ी हो।

और नवाफ़िल में एक रकअ़त में दो सूरतें भी आप (स.अ.व.) पढ़ते थे, लेकिन फ़र्ज़ नमाज़ों में नहीं, मामूलन आप (स.अ.व.) की पहली रकअ़त दूसरी रकअ़त से बड़ी हुवा करती थी।

नमाज़ में "सलामु अलैकुम" कहने का हुक्म

सवालः अगर इमाम अस्सलामु अलैकुम कहने के बजाए सिर्फ़ सलामु अलैकुम बग़ैर अलिफ़ लाम मीम के कहे तो क्या हुक्म है?

जवाबः ये ख़िलाफ़े सुन्नत है, इससे नमाज़ में कराहत आएगी। ये उस वक़्त है जबकि इमाम तलफ़्फ़ुज़ ही में सलामु अलैकुम कहे। कभी ऐसा भी होता है कि अलिफ़ लोगों के सुनने में नहीं आता। इमाम तो अस्सलामु अलैकुम कहता है, लोग सलामु अलैकुम सुनते हैं तो ये मकरूह नहीं है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–439)

(बग़ैर अलिफ़ लाम के) सलामु अलैकुम ख़िलाफ़े सुन्नत होने की वजह से मकरूह है। इमाम को समझाया जाए कि तसहीह कर ले।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–445, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–491)

सलाम में सिर्फ़ मुंह फेरने का हुक्म

सवालः नमाज़ से ख़ुरूज के लिए सलाम फेरते वक़्त

क़िब्ला से फ़क़त मुंह ही फ़ैरे या सीना भी?

जवाबः सिर्फ़ मुंह फेरना दोनों तरफ़ सलाम के साथ काफ़ी है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–207, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब आदाबुस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–446)

सलाम में चेहरा कितना घुमाया जाए?

"عن سَعْدِ ابْنِ اَبِیْ وَقَّاص قَالَ كُنتُ اَریٰ رَسُوْلَ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّم يُسَلِّمُ عَنْ يَمِيْنِهٖ وعَنْ يَسَارِه حتّىٰ اَریٰ بَيَاض خَدِّهٖ "(رواہ مسلم)

हज़रत सअ़द बिन अबी वक़्क़ास से रिवायत है कि मैंने रसूलुल्लाह (स.अ.व.) को ख़ुद देखा था कि आप (स.अ.व.) सलाम फेरते वक़्त दाएँ और बाएँ जानिब रुख़ फ़रमाते थे और चेहरा मुबारक दाहनी जानिब और बाईं जानिब इतना फेरते थे कि हम रुख़सारे मुबारक की सफ़ेदी देख लेते थे।

(मआ़रिफुलहदीस जिल्द–3 सफ़्हा–309)

इमाम से पहले सलाम फेरना

सवालः एक मुक़्तदी ने इमाम से पहले सलाम फ़ेर लिया तो क्या मुक़्तदीए मज़कूर की नमाज़ हुई या नहीं?

जवाबः नमाज़ हो गई। मगर ऐसा करना मकरूहे तहरीमी है। अलबत्ता अगर किसी सख़्त मजबूरी से सलाम फेरा जो नमाज़ में बाइसे तशवीश बन रही हो तो नमाज़ का लौटाना वाजिब नहीं।

यहाँ सवाल पैदा होता है कि इमाम की मुताबअ़त जान बूझ कर छोड़ने की वजह से ये नमाज़ लौटानी पड़ेगी या नहीं? इससे मुतअ़ल्लिक़ कोई सरीह हुक्म नहीं मिला। अलबत्ता मुक़्तदी के सहवन वाजिब के छूटने पर सज्दए सह्व के अदमे वुजूब से मालूम होता है कि बसूरते अमद नमाज़ का इआ़दा वाजिब नहीं।

दूसरा जवाबः इत्तिबाए इमाम वाजिब है। इसलिए इमाम से बिला उज़्र, जान बूझ कर पहल करना मकरूहे तहरीमी है, अलबत्ता रीह निकलने के ख़ौफ़ वग़ैरा की बिना पर पहल करने में कराहत नहीं।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–294, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–490)

सलाम में इमाम से पहले साँस टूट जाने का हुक्म

सवालः मुक़्तदी का साँस सलाम फेरते वक़्त अस्सलामु अलैकुम कहने में इमाम से पहले टूट जाए तो मुक़्तदी की नमाज़ होती है या नहीं?

जवाबः मुक़्तदी की नमाज़ में इस सूरत में कुछ ख़लल नहीं आया।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–163, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब सिफ़तुस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–490)

सलाम में लफ़्ज़ अल्लाह को खींचने का हुक्म

सवालः क्या मुक़्तदी इमाम के लफ़्ज़ अस्सलामु कहने

के साथ ही फ़ौरन सलाम फेर दे या कुछ देर के बाद? अक्सर अइम्मए मसाजिद, सलाम में लफ़्ज़ "अल्लाह" को बहुत ज़्यादा खींचते हैं, क्या मुक़्तदी भी इस तरह करे? या वह दोनों तरफ़ इमाम से पहले सलाम के कलिमात ख़त्म कर सकता है?

जवाबः सलामे औवल में लफ़्ज़ अस्सलामु कहने से नमाज़ ख़त्म हो जाती है, इसलिए औवल मीम, इमाम से पहले कहना मकरूह है। उसके बाद कोई वजहे कराहत मालूम नहीं होती।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–312)

नमाज़े फ़ज्र व अस्र के बाद इमाम का रुख़ बदलना

सवालः फ़ज्र और अस्र की नमाज़ के बाद इमाम दाईं जानिब मुड़ कर बैठे या मुक़्तदियों की तरफ़ मुतवज्जेह हो कर? एक मौलवी साहब फ़रमाते हैं कि दाईं जानिब रुख़ कर के बैठना मुस्तहब है, और मुक़्तदियों की तरफ़ रुख़ कर के बैठना ख़िलाफ़े इस्तेहबाब है, सहीह क्या है?

ख़ुलासए जवाबः हज़राते फ़ुक़हा (रहि.) तआ़ाता फ़रमाते हैं कि फ़राइज़ से फ़ारिग़ होने के बाद इमाम का उसी हैअत पर क़ाइम रहना बिदअ़त है। इसलिए इमाम अपनी हैअत तब्दील कर ले जिसकी मुख़्तलिफ़ सूरतें हैं। यानी या तो मुसल्ले से उठ कर चला जाए, या दाएँ या बाएँ या मुक़्तदियों की तरफ़ मुड़ कर बैठे।

अगर नमाज़ के बाद सुन्नतें हों तो उनको अदा करने के लिए मुसल्ले से आगे पीछे या दाईं या बाईं तरफ़ हट

कर पढ़े। इमाम के इसी हैअत पर क़िब्ला की तरफ़ रहने में आने वालों को जमाअ़त बाक़ी रहने का इश्तिबाह हो सकता है। ख़तरा है कि कोई इक़्तिदा कर ले, और उसकी नमाज़ सहीह न हो। इसलिए इमाम का हैअत न बदलना मकरूह है।

इमाम को फ़ज्र और अस्र की नमाज़ के बाद मुक़्तदियों की तरफ़ मुतवज्जेह हो कर बैठना चाहिए। अलबत्ता अगर इमाम के सामने पहली सफ़ में कोई मस्बूक़ हो तो उसके सामने बैठना मकरूह है। लिहाज़ा इस सूरत में दाएँ बाएँ होकर बैठे। अगर पहली सफ़ के पीछे वाली किसी सफ़ में मस्बूक़ हो तो उसका सामना करने के जवाज़ में इख़्तिलाफ़ है। अल्लामा शामी ने जवाज़ को तरजीह दी है। (अहसनुल फ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–369, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–332)

नमाज़ के बाद इमाम किस तरफ़ मुंह कर के बैठे

सवालः जिन नमाज़ों के बाद सुन्नते मुअक्कदा नहीं हैं। उन नमाज़ों के बाद इमाम किस तरफ़ मुतवज्जेह हो, दाहिनी जानिब या बाईं तरफ़ या मुक़्तदियों की तरफ़, कौन सा क़ौल सहीह है?

जवाबः तीनों तरह दुरुस्त है। किसी एक का इल्तिज़ाम दुरुस्त नहीं, दाहिनी जानिब मुतवज्जेह होना कि क़िब्ला बाईं जानिब हो औला है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–134, बहवाला मराक़िलफ़लाह सफ़्हा–271 मिस्री)

दुआ के वक़्त इमाम का दाहिनी तरफ़ और बाईं तरफ़ फिरना दोनों का ज़िक्र हदीस में आया है और दोनों बातों की शरअ़न इजाज़त है। हज़रत अब्दुल्लाह इब्न मसऊद फ़रमाते हैं कि कोई शख़्स अपनी नमाज़ में शैतान का हिस्सा न करे कि ये समझे कि दाहिनी तरफ़ ही फिरना ज़रूरी है। मैंने बारहा रसूलुल्लाह (स.अ.व.) को देखा है कि बाईं तरफ़ को फिरे।

लेकिन ये भी हदीस से साबित है कि ज़्यादा तर रसूलुल्लाह (स.अ.व.) दाहिनी तरफ़ फिरते थे।

(मिशकात सफ़्हा–87, बाबुद्दुआ)

पस मामूल ये रखना चाहिए कि अक्सर दाहिनी तरफ़ को फिरे और कभी कभी बाईं तरफ़ को फिर जाया करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–89, बहवाला गुनिया जिल्द–1 सफ़्हा–33)

दूसरी नमाज़ों में मुक़्तदियों की तरफ़ रुख़ करना

सवालः हमारे यहाँ पर ज़ुहर, मग़रिब, इशा के फ़र्ज़ों के बाद मुक़्तदियों की तरफ़ रुख़ कर के दुआ करते हैं, ये फ़ेल कैसा है?

जवाबः ख़िलाफ़े सुन्नत है।

(अहसनुल फ़तवा जिल्द–3 सफ़्हा–315)

फ़र्ज़ के बाद आयतुलकुर्सी पढ़ने का हुक्म

सवालः इमाम को फ़र्ज़ के बाद कितनी देर तक

आयतुलकुर्सी पढ़ते रहना चाहिए। इमाम साहब अगर देर तक बैठे पढ़ते रहें तो क्या मुक़्तदी को उनकी पैरवी लाज़िम है, या दुआ कर के सुन्नत में मशगूल हो जाए?

जवाबः फ़र्ज़ के बाद सुन्नत से पहले आयतुलकुर्सी व तस्बीहात वग़ैरा औराद मुख़्तसर तौर पर पूरा कर के सुन्नत पढ़े तो कुछ हरज नहीं है, और वक़्त की कुछ मिक़्दार मुऐयन नहीं है, लेकिन ज़्यादा ताख़ीर न करे, और अगर ज़्यादा औराद पढ़ने हों तो सुन्नत के बाद पूरा कर ले। ये बेहतर है, और इमाम अगर देर तक बैठा पढ़ता रहे तो मुक़्तदियों को उसकी इत्तिबाअ लाज़िम नहीं है। उनको इख़तियार है कि वह ख़्वाह फ़ौरन या कुछ पढ़ कर सुन्नतें पढ़ें।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–166, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब सिफ़तुस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–494)

दुआ इतनी मांगी जाए कि मुक़्तदियों पर शाक़ न हो और उनको ततवील नागवार न हो।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–286)

बाद नमाज़े पंजगाना दुआ

नमाज़े पंजगाना के बाद हाथ उठा कर दुआ मांगना सुन्नते नबवी (स.अ.व.) है। हिस्ने हसीन में दुआ में हाथ उठाने और बाद दुआ के मुंह पर हाथ फेरने की मरफ़ूअ अहादीस मौजूद हैं, उनको देख लिया जाए। नमाज़ों के बाद दुआ का मसनून होना भी उसमें मज़कूर है। तर्के दुआ नमाज़ के बाद ख़िलाफ़े सुन्नत है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–199, बहवाला मिशकात शरीफ़ किताबुद्दअ़वात सफ़्हा–195 व हिस्ने हसीन सफ़्हा–30)

हज़रत अरबाज़ इब्न सारिया (रज़ि.) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमाया जो बंदा फ़र्ज़ नमाज़ पढ़े और उसके बाद दिल से दुआ करे तो उसकी दुआ क़बूल होगी। (मआ़रिफुल हदीस जिल्द–5 सफ़्हा–138)

नमाज़े फ़ज्र व अस्र में तवील दुआ

जिन फ़राइज़ के बाद सुन्नतें नहीं हैं। जैसे फ़ज्र व अस्र, उनमें दुआ लम्बी करे, और जिन फ़राईज़ के बाद सुनन हैं उनके बाद इमाम, मुक़्तदी मुख़्तसर दुआ माँग कर सुन्नतें अदा करें, ख़्वाह फ़स्ल बिल औराद कर के बाद में सुन्नतें पढ़ें, और फिर इजतिमाअन दुआ की ज़रूरत नहीं है। क्योंकि दुआ इजतिमाअन एक ही बार है। फिर दो बारह सुन्नतों के बाद मुक़्तदियों को इमाम की दुआ का इंतिज़ार करना और उसका इल्तिज़ाम करना ज़रूरी नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–197, बहवाला आलमगीरी मिस्री जिल्द–1 सफ़्हा–72)

नोटः नफ़्ल और सुन्नत का घरों में पढ़ना अफ़ज़ल है। बाज़ जगह का ये दुस्तूर ग़लत है कि अक्सर नमाज़ी जुमा की सुन्नतें पढ़ कर ठहरे रहते हैं। इमाम सुन्नतों के बाद दुआ कराता है। रद्दुलमुहतार बाबुल वित्र वन्नवाफ़िल सफ़्हा–638 से मालूम होता है कि नमाज़ियों को सुन्नत

के लिए रोकना इज्तिमाअन दुआ करने का दुस्तूर अह्दे नबवी में नहीं था। और न अब उसका इल्तिज़ाम दुरुस्त है इसलिए कि हदीस के ख़िलाफ़ है।

नमाज़ के बाद दुआ आहिस्ता मांगे या ज़ोर से

आहिस्ता दुआ करना अफ़ज़ल है। नमाज़ियों को हरज न होता हो तो कभी कभी ज़रा आवाज़ से दुआ कर ले तो जाइज़ है। हमेशा ज़ोर से दुआ करने की आदत बनाना मकरूह है। रिवायात से जेह्र (ज़ोर से) दुआ मांगना साबित नहीं है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–183)

दुआ आहिस्ता मांगना अफ़ज़ल है। अगर दुआ की तालीम मक़्सूद हो तो बुलंद आवाज़ में भी मुज़ाएक़ा नहीं। मगर इतनी बुलंद आवाज़ से जिससे दूसरे नमाज़ियों की नमाज़ में ख़लल न हो। नमाज़ सलाम पर ख़त्म हो जाती है। उसके बाद दुआ नमाज़ का जुज़ नहीं है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–173)

अलफ़ाज़े दुआ में अदमे तख़सीस

इमाम दुआ के अलफ़ाज़ को अपने साथ मख़सूस न करे, अगर वह दुआ ज़ोर से कर रहा है। जैसे कि ऐ अल्लाह मुझ पर और नबी करीम (स.अ.व.) पर रहम फ़रमा, और मेरे साथियों में से किसी पर रहम न करना।

इस क़िस्म की दुआ करना ख़्यानत है, अहादीस में जो मुनफ़रदन अलफ़ाज़ आए हैं वह इसमें दाख़िल नहीं

हैं। क्योंकि नमाज़ में जो इमाम से फ़ाएदा पहुंचता है। उसमें मुक़्तदियों को भी हिस्सा मिलता है, इमाम मुक़्तदियों का नुमाइंदा होता है। और अगर आहिस्ता दुआ कर रहे हैं तो इमाम को इजाज़त है कि अपने लिए ख़ास दुआ करे (औरों के लिए बद दुआ न करे) क्यों कि मुक़्तदी भी अपने लिए दुआ कर रहे हैं। इस तरह नफ़्से दुआ में सब शरीक हो जाएँगे।

(मआरिफ़े मदनीया जिल्द–6 सफ़्हा–100)

इमामा की दुआ पर आमीन कहना

सवालः नमाज़ के बाद जो दुआ इमाम के साथ मांगते हैं उसमें आमीन कहना चाहिए या जो मर्ज़ी हो दुआ मांगे?

जवाबः जो दुआ चाहे माँगे, ये ज़रूरी नहीं है कि इमाम की दुआ पर आमीन कहे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–201, बहवाला रद्दुलमुहतार बाब सिफ़तुस्सलात जिल्द–1 सफ़्हा–489)

दुआ में मुक़्तदी की शिरकत

सवालः मुक़्तदी को इमाम के सलाम के बाद दुआ में इक़्तिदा व शिकरत ज़रूरी है या मुस्तहब?

जवाबः मुस्तहब है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–190, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–495 व गुनिया सफ़्हा–330)

अगर मुक़्तदी को कुछ ज़रूरत है और कोई ज़रूरी काम है तो सलाम के बाद फ़ौरन चले जाने में कुछ गुनाह नहीं है और इस पर कुछ तअ़न न करना चाहिए। और अगर दुआ के ख़त्म तक इंतिज़ार करे और इमाम साहब के साथ दुआ में शरीक हो तो ये अच्छा है और इसमें ज़्यादा सवाब है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–103)

दुआ के वक़्त निगाह कहाँ रखी जाए

दुआ मांगने के वक़्त आसमान की तरफ़ नज़र उठाना और तकना, दुआ की वह नापसंदीदा सूरत है जिससे आँहज़रत (स.अ.व.) ने मना फ़रमाया है। इसलिए कि ये सूरत अल्लाह के अदब व एहतेराम और दुआ मांगने वाले के लिए मुनासिब नहीं है। हो सकता है कि ये हरकत बेअदबी या गुस्ताख़ी बन कर दुआ को क़बूलियत से महरूम कर दे। इसलिए इससे बचना चाहिए।

(हिस्ने हसीन सफ़्हा–27)

दुआ में जल्दी बाज़ी से एहतेराज़

हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि.) से रिवायत है कि नबी करीम (स.अ.व.) ने इरशाद फ़रमाया कि: "जब अल्लाह से मांगो और दुआ करो तो इस यक़ीन के साथ करो के वह ज़रूर क़बूल फ़रमाएगा। और जान लो और याद रखो अल्लाह उसकी दुआ क़बूल न करेगा जिसका दिल दुआ

के वक़्त अल्लाह से ग़ाफ़िल और बेपरवाह हो।"

आप (स.अ.व.) ने फ़रमायाः "हमारी दुआऐं उस वक़्त तक क़ाबिले क़बूल होती हैं जब तक जल्द बाज़ी से काम न लिया जाए (और जल्द बाज़ी ये है) कि बंदा ये कहने लगे कि मैंने दुआ की थी मगर क़बूल ही नहीं हुई।"

(मआरिफ़ुल हदीस जिल्द–5 सफ़्हा–123, 125)

दुआ के ख़त्म पर कलिमा पढ़ना

सवालः हमारे यहाँ दस्तूर है कि दुआ ख़त्म करने के बाद जब मुंह पर हाथ फेरते हैं तो उस वक़्त कलिमा तैयबा "لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ مُحَمَّدٌ رَّسُوْلُ اللّٰه صلی اللّٰه علیه وسلم" पढ़ते हैं, क्या शरीअ़त में इसका सुबूत है?

जवाबः दुआ के आख़िर में दुरूद शरीफ़ पढ़ना और आमीन के सिवा और कुछ पढ़ना साबित नहीं। लिहाज़ा मुंह पर हाथ फेरते वक़्त कलिमए तैयबा पढ़ने का दस्तूर बिदअ़त है।

जैसा कि खाने से फ़ारिग़ होने के बाद या तिलावत के बाद कोई शख़्स दुआए मासूरा के बजाए उसके बाद कलिमए तैयबा पढ़े तो हर शख़्स उसे दीन में ज़्यादती और बिदअ़त समझेगा।

(अहसनुल फ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–374)

नमाज़ के बाद इमाम से मुसाफ़्हा करना कैसा है

मुसाफ़्हा व मुआनक़ा अपने तरीक़ा पर मसनून है, सलाम,

मुसाफ़हा, मुआनका दाख़िले इबादात हैं। इबादत को साहबे शरीअत के हुक्म के मुताबिक़ अदा किया जाए तब ही इबादत में शुमार होगी और सवाब के हक़दार होंगे वरना ये बिदअत हो जाएगी और बजाए सवाब के अज़ाब होगा। मजमउलबहरैन के मुसन्निफ़ ने अपनी शरह में ब्यान किया है कि एक शख़्स ने ईद के दिन नमाज़ से पहले ईदगाह में नफ़्ल पढ़ने का इरादा किया तो हज़रत अली (रज़ि.) ने उसको मना किया, उस शख़्स ने कहा ऐ अमीरुलमुमिनीन में ख़ूब जानता हूँ कि अल्लाह तआला नमाज़ पढ़ने पर अज़ाब नहीं देगा। हज़रत अली (रज़ि.) ने फ़रमाया मैं भी ख़ूब जानता हूँ कि अल्लाह तआला किसी काम पर सवाब नहीं देता, ता वक़्तेकि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने उसको न किया हो या उसको करने की तरग़ीब न दी हो। पस तेरी ये नमाज़ अबस है और फ़ेले अबस हराम है। पस अंदेशा है कि ख़ुदा तआला तुझ को इस पर अज़ाब दे। इसलिए कि तूने उसके पैग़म्बर (स.अ.व.) के ख़िलाफ़ किया।

(मजालिसुलअबरार जिल्द–8 सफ़्हा–129)

देखिए! अज़ान इबादत है, दीन का शिआर और इस्लामी अलामत है और जुमा के लिए दो अज़ानें और इक़ामत पाबंदी के साथ होती है, मगर ईद के लिए न अज़ान है न इक़ामत।

अगर ईदगाह में अज़ान या तकबीर पढ़ी जाए तो हर शख़्स जानता है वह बिदअत होगी। इसी तरह मुसाफ़हा व मुआनक़ा का हुक्म है। ईद वग़ैरा नमाज़ों के बाद उसका इल्तिज़ाम बिदअत है।

शामी में मनकूल है, किसी भी नमाज़ के बाद मुसाफ़्हा का रिवाज मकरूह है जिसकी दलील ये है कि सहाबए किराम (रज़ि.) नमाज़ के बाद मुसाफ़्हा नहीं करते थे, कराहत की एक वजह ये भी है कि ये रवाफ़िज़ का तरीक़ा है।

इब्ने हजर शाफ़ई फ़रमाते हैं कि लोग पंजगाना नमाज़ के बाद मुसाफ़्हा करते हैं वह बिदअ़ते मकरूह है। शरीअ़त में उसकी कोई असलीयत नहीं है।

इब्नुलहाज (रह.) मक्की किताबुलमदख़ल में तहरीर फ़रामाते हैं कि इमाम के लिए ज़रूरी है कि लोगों ने नमाज़े फ़ज्र और जुमा और अस्र की नमाज़ के बाद मुसाफ़्हा का जो नया तरीक़ा ईजाद किया है, बल्कि बाज़ ने पाँचों नमाज़ के बाद भी मुसाफ़्हा का तरीक़ा ईजाद किया है उससे मना करे कि ये बिदअ़त है, शरीअत में मुसाफ़्हा किसी मुस्लिम से मुलाक़ात के वक़्त है, न कि नमाज़ों के बाद, लिहाज़ा शरीअ़त ने जो अमल मुक़र्रर किया है उसी जगह उसको बजा लाए और सुन्नत के ख़िलाफ़ करने वालों को रोके।

शारेहे मिशकात शरीफ़ फ़रमाते हैं बेशक शरई मुसाफ़्हा का वक़्त शुरू मुलाक़ात का वक़्त है। लोग बिला मुसाफ़्हा मिलते हैं, इल्मी बातें करते हैं फिर जब नमाज़ पढ़ लेते हैं, उस वक़्त मुसाफ़्हा करते हैं, ये कहाँ की सुन्नत है? इसलिए बाज़ फ़ुक़्हा ने वज़ाहत की है कि ये तरीक़ा मकरूह और बिदअ़ते सैयेआ है।

(मिरक़ात शरहे मिशकात जिल्द–4 सफ़्हा–575)

इन मुख़्तसर तसरीहात की बिना पर ज़रूरी है कि

मुसाफ़्हा से इज्तिनाब करे, मगर ऐसा तरीक़ा इख़तियार न करे जिससे लोगों में गुस्सा और नफ़रत फैले। ऐसे मौक़ा पर मुल्ला अली क़ारी की हिदायत का ख़्याल रखे। फ़रमाते हैं कि: "जब कोई मुसलमान बे मौक़ा मुसाफ़्हा के लिए हाथ दराज़ करे तो हाथ खींच कर उसका दिल न दुखाए और बदकलामी का सबब न बने और आहिस्तगी से समझाए और मस्अला की हक़ीक़त से आगाह करे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–73)

ये मस्अला अहसनुल फ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–355 पर इस तरह है– "शरीअ़त में मुसाफ़्हा का मौक़ा सिर्फ़ औवल वक़्ते मुलाक़ात है, नमाज़ों के बाद मुसाफ़्हा हुज़ूर अकरम (स.अ.व.) और सहाबए किराम (रज़ि.) और अईम्मए दीन रहिमहुमुल्लाह से साबित नहीं, बल्कि ये रवाफ़िज़ की ईजाद है और बिदअ़त है। इसलिए इससे एहतेराज़ वाजिब है बल्कि बाज़ हज़राते फ़ुक़हा रहिमहुमुल्लाह तआ़ला ने सराहतन लिखा है कि इस बिदअ़त के मुरतकिब को बज़रीआ ज़ज्र व तौबीख़ रोकने की कोशिश की जाए। अगर फिर भी बाज़ न आए तो बशर्ते कुदरत उसे सज़ा दी जाए। अलबत्ता जहाँ रोकने की कुदरत न हो वहाँ रोकना ज़रूरी नहीं।

(बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–336)

दुआए मुअल्लिफ़

"رَبِّ اَوْزِعْنِیْ اَنْ اَشْکُرَ نِعْمَتَکَ الَّتِیْ اَنْعَمْتَ عَلَیَّ وَعَلٰی وَالِدَیَّ
وَاَنْ اَعْمَلَ صَالِحاً تَرْضَاہ وَاَصْلِحْ لِیْ فِیْ ذُرِّیَّتِیْ اِنِّیْ تُبْتُ اِلَیْکَ وَاِنِّیْ مِنَ

الْمُسْلِمِيْن وتَقَبَّلْ مِنِّى هٰذَا الْعَمَل وَجَنِّبْنِى فِيْه عَنِ الخطأ وَالنِّسْيَانِ وَاجْعَلْهُ ذَرِيْعَةً لِلْفَلَاحِ وَالنَّجَاحِ فِى الدُّنْيَا وَوَسِيْلَةً لِلنَّجَاةِ فِى الْاٰخِرَة''

मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी मुदर्रिस दारुलउलूम, देवबंद

10 मुहर्रमुलहराम 1408 हिजरी मुताबिक़ 4 सितम्बर 1987 ई० बरोज़ जुमा

□□□

मआख़िज़ व मेराजेअ़ किताब

नाम किताब	मुसन्निफ़ व मुअल्लिफ़	मुत्तब्बा
मआरिफ़ुल कुरआन	मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ीअ़ (रह.) मुफ़्तिए आज़म पाकिस्तान	रब्बानी बुक डिपो देवबंद
मआरिफ़ुल हदीस	मौलाना मंज़ूर साहब नोमानी	अलफ़ुरकान बुक डिपो 31 नया गाँव, लखनऊ
फ़तावा दारुलउलूम मुकम्मल व मुदल्लल	मुफ़्ती अज़ीज़ुर्रहमान साहब	मक्तबा दारुलउलूम देवबंद
फ़तावा रहीमिया	सैयद मुफ़्ती अब्दुर्रहीम साहब	मक्तबा मुन्शी स्टेट रानदेर सूरत
फ़तावा रशीदिया कामिल	मौलाना रशीद अहमद गंगोही (रह.)	कुतुबख़ाना रहीमिया, देवबंद
फ़तावा महमूदिया	मुफ़्ती महमूदुलहसन साहब	मक्तबा महमूदिया जामा मस्जिद, मेरठ
इमदादुलफ़तावा	मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह.)	इदारा तालीफ़ाते औलिया, देवबंद

फ़तावा आलमगीरी	अल्लामा सैयद अमीर अहमद	मुतबअ़ नवलकिशोर लखनऊ
किफ़ायतुल मुफ़्ती	मुफ़्ती किफ़ायतुल्लाह देहलवी (रह.)	कुतुबख़ाना एज़ाज़िया, देवबंद
अहसनुल फ़तावा	मुफ़्ती रशीद अहमद लुधयानवी	सईद एच. एम. कम्पनी अदब मंज़िल चौक कराची (पाकिस्तान)
किताबुल फ़िक्ह अल्लमज़ाहिबिल अलरबआ़	अल्लामा अब्दुर्रहमान	मतबूआत मुहकमा औक़ाफ़ पंजाब, लाहौर (पाकिस्तान)
मज़ाहिरे हक़ जदीद	इफ़ादात अल्लामा नवाब कुतुबुद्दीन	इदारा इस्लामियात देवबंद
मसाइले सज्दए सह्व	मुफ़्ती हबीबुर्रहमान ख़ैराबादी	हिरा अकेडमी देवबंद
मआ़रिफ़े मदीना	इफ़ादात मौलाना हुसैन अहमद मदनी	मदरसा इमदादुल इस्लाम सदर बाज़ार, मेरठ
हिदाया	इमाम अबुलहसन (रह.) बुरहानुद्दीन	कुतुबख़ाना रशीदिया, दिल्ली
बदाऐ सनाए	अल्लामा अलाउद्दीन अबी बक्र	पाकिस्तान
सिहाहे सित्ता		कुतुबख़ाना रशीदिया, दिल्ली
कबीरी		फ़ख़्रुलमताबेअ़ लखनऊ
रद्दुलमुहतार अलद्दुर्रिलमुख़्तार	अल्लामा इब्न आबिदीन (रह.)	सईद एच.एम. कम्पनी अदब मंज़िल चौक, कराची (पाकिस्तान)
तहतावी अला मराक़िलफ़लाह	सैयद अहमद तहतावी	पाकिस्तान

सग़ीरी		मतबअ़ मुहम्मदी लाहौर
हिस्ने हसीन	ब इज़ाफ़ा हवाशी मौलाना इदरीस साहब	नसीर बुक डिपो बस्ती निज़ामुद्दीन दिल्ली–१३
मसाइले तरावीह मुकम्मल व मुदल्लल	मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी	मक्तबा रज़ी देवबंद
नूरुलईज़ाह		मक्तबा थानवी देवबंद
इमदादुल मुफ़्तीयीन	मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ीअ़ (रह.)	दारुलइशाअ़त कराची (पाकिस्तान)
जदीद फ़िक़्ही मसाइल	मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह	मजलिस तहक़ीक़ाते इस्लामी हैदरआबाद
फ़तावा हिन्दीया		नवलकिशोर लखनऊ
ग़ुनयतुत्तालिबीन	शैख़ अब्दुलक़ादिर जीलानी (रह.)	मतबअ़ लाहौर (पाकिस्तान)
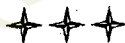
-: समाप्त :-

तारीख़ी नाविलों के मशहूर लेखक मौलाना सादिक़ हुसैन सरधनवी के मशहूर

तारीख़ी नाविल

अब हिन्दी भाषा में

अरब का चाँद

एक ऐसा नाविल जिसमें तीन लाख ईसाई सैनिकों को केवल बीस हज़ार मुसलमान मुजाहिदों ने पराजित कर के इस्लाम का नाम रोशन कर दिया इस जंग में मुस्लिम महिला की अहम भूमिका रही जिन्होंने बहादुरी व हिम्मत को ज़िन्दा कर दिया।

दोशीज़ा-ए-हिन्द

ऐसा तारीख़ी नाविल जिसमें एक हिन्दू लड़की के दिल में अल्लाह का नूर पैदा हो गया जिसने अपने बाप दादा के रस्म व रिवाज को त्याग कर हक़ का साथ दिया। ईमानी भावना का एक जीता जागता किरदार जो आपको झिंझोड़ कर रख देगा।

सुलतान मुहम्मद गौरी

इतिहास सदैव अपने आपकी दोहराता है। सोई हुई कौमें जागती हैं और सत्ता एवं विलासता में पड़ी हुई क़ौमें तबाह व बर्बाद हो जाती है। एक ऐसे सुलतान के मुजाहिदाना कारनामे जिसने अपने साहस, सकंल्प और ईमानी जोश से असत्य को मिटाकर सत्य का बोल बाला कर दिया।

सलाहुद्दीन अय्यूबी

इस्लामी इतिहास में सुलतान सलाहुद्दीन का नाम किसी परिचय का मोहताज नहीं। ये सुलतान ही था जिसने ५८३ हिजरी में ईसाइयों से क़िब्ला-ए-अव्वल बैतुल मक़्दिस को आज़ाद कराया। सुलतान सलाहुद्दीन अय्यूबी जिनके नाम से बड़े बड़े ईसाई शासकों के दिल दहल जाते थे। इस पुस्तक में उनके साहसिक कारनामे प्रस्तुत किए गए हैं।

संगदिल मलिका

औरत को अल्लाह ने ममता व दया की मूरत पैदा किया है लेकिन इस नाविल में एक ऐसी संगदिल मलिका की दास्तान पेश की गई है जिसने अपनी निर्दयता, दुश्मनी और इन्तिक़ाम की आग में जलने व बदला लेने के रिकार्ड तोड़ डाले थे। वही संगदिल मलिका एक दिन इस्लामी तालीमात और मुसलमान मुजाहिदों के बेहतरीन व्यवहार से प्रभावित हो कर इस्लाम की आग़ोश में पनाह लेती है।

जोशे जिहाद

इस्लाम और मुसलमानों को मिटाने के लिए इतिहास में ईसाई व यहूदियों ने बड़ी

कोशिशें कीं। झूट, दग़ा, फ़रेब, साजिश, धोखा सारे हथियार जमा किए परन्तु जब एक मुसलमान के दिल में जिहाद का जोश पैदा होता है तो ईमान की ताक़त के सामने ये सारे असत्य हथियार नाकाम हो जाते हैं।

फ़तह मिस्र

हज़रत अम्र बिन अल आस के मुजाहिदाना कारनामों पर आधारित एक ऐसा नाविल जिसमें हक़ व बातिल की कशमकश में मिस्र के बादशाह अरसतलीस की हुकूमत का ख़ात्मा बड़े ही चमत्कारी तौर पर होता है। इस्लामी सरफ़रोशों की बहादुरी की अनोखी दास्तान............।

सुलतान फ़ीरोज़ शाह तुग़लक

इस्लाम को मिटाने के लिए इस्लाम के दुश्मनों ने नए नए तरीके अपनाए। झूठे नबी हुए और झूठे मेहदी होने के दावे किए सुलतान फ़ीरोज़ शाह तुग़लक के कार्य काल में ऐसे ही एक इस्लाम दुश्मन ने इमाम मेहदी होने का दावा कर के इस्लाम में फूट डालने का प्रयास किया। सुलतान ने किस प्रकार इस फ़ितने को दबाया......? यह इस नाविल में पढ़िए............।

अरबी दोशीज़ा

इस्लाम से पहले अरब में औरत की कोई हैसियत न थी। इस्लाम ने औरत को न केवल इज़्ज़त दी बल्कि उसने उसे बहादुरी व स्वाभिमान भी दिया। जब समय आया तो अरब महिला ही ने इस्लाम को बचाने के लिए अपना किरदार निभाया। ऐसी ही एक अरब दोशीज़ा के कमालात व ईमानी भावना की जीती जागती कहानी इस नाविल में है............।

ईरान की हसीना

ईरानी हुकूमत और अरब के शेरों के टकराव की एक लम्बी दास्तान हज़रत उमर रज़ि. के भेजे हुए लश्कर के मुजाहिदों के जंगी कारनामे जिन्होंने न केवल ईरानी हुकूमत को हराया बल्कि ईरानी हसीना के दिल को भी इस्लाम की रोशनी से मुनव्वर कर दिया............।

❑❑❑

इस्लामी तारीख़ की जानकारी व मुजाहिदों के साहसिक कारनामों के लिए इन नाविलों का अध्ययन आपके लिए अत्यन्त ज़रूरी है।